व्यंग्य विधा के परिप्रेक्ष्य में हरिशंकर परसाई साहित्य का मूल्यांकन

शोध-प्रबन्ध

इलाहाबाद विश्वविद्यालय

डी.फिल्. उपाधि हेतु

२००२

निर्देशिका

डॉ. निशा अग्रवाल

हिन्दी विभाग,

इलाहाबाद विश्वविद्यालय

प्रस्तुति

अजय कुमार पाण्डेय

हिन्दी विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

भूमिका

शोध विषय का चयन किसी शोधार्थी के लिए गम्भीर एवं महत्वपूर्ण समस्या होती है। मेरे समक्ष भी यह समस्या थी। इसी उधेड़बुन में जब प्रस्तुत विषय का सुझाव निर्देशिका **डॉ० निशा अग्रवाल** की ओर से आया, मैंने विचार करने पर पाया कि यह विषय जितना नवीन और प्रासंगिक है उतना ही मेरी रुचि का भी। मैंने इस विषय पर कार्य करना सहर्ष स्वीकार कर लिया और इतना ही नहीं, इसे चुनौती के रूप में भी ग्रहण किया।

जहाँ तक मेरी जानकारी है, इस विधा पर उत्तर-प्रदेश के विश्वविद्यालयों में शायद ही कोई कार्य हुआ है। हाँ महाराष्ट्र, बिहार और मध्य-प्रदेश के कतिपय विश्वविद्यालयों में इस विषय पर कुछ कार्य अवश्य हुआ है।

साहित्य का जीवन से गहरा सम्बन्ध होता है। साहित्य में जीवन की व्याख्या होती है तो व्यंग्य में जीवन की आलोचना। जीवन में विसंगति, विकृति और सतहीपन का एहसास ही व्यंग्य को जन्म देता है। सफल व्यंग्यकार के लिए यह अति आवश्यक है कि वह विसंगति पूर्ण स्थितियों एवं आडम्बर पूर्ण जीवन की परतों को उघाड़े, चाहे वह स्वयं में ही क्यों न हो।

हिन्दी में व्यंग्य की सुदीर्घ परम्परा नहीं है लेकिन सुदृढ़ परम्परा अवश्य है। आधुनिक हिन्दी व्यंग्य अपनी विकास यात्रा में क्रमशः प्रौढ़ होता गया। भारतेन्दु के समय में व्यंग्य लेखन प्रारम्भ तो हुआ, लेकिन परतन्त्र भारत में अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता न होने के कारण व्यंग्य की धार अधिक तेज नहीं हो पायी। परवर्ती काल में रचनाकारों ने जोखिम उठाने का साहस नहीं दिखलाया। फलतः व्यंग्य लेखन अवरुद्ध हो गया। क्रान्तिकारी कवि निराला ने प्रारम्भ में व्यंग्य लेखन अवश्य किया, लेकिन कालान्तर में प्रगतिशील विचारों की तरफ मुड़ गये। वर्तमान व्यंग्य को परसाई ने अकेले अपने दम पर विद्या के रूप में प्रतिस्थापित करने

का कार्य किया। आधुनिक सन्दर्भों में व्यंग्य और परसाई एक-दूसरे के पर्याय हैं।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् सामाजिक और राजनैतिक क्षेत्रों में तीव्र गति से परिवर्तन हुआ। चारों तरफ 'अन्धा युग' कायम हो गया। अधिकांश लोगों ने लोभ और स्वार्थ से प्रेरित हो कार्य करना प्रारम्भ कर दिया। देश की, समाज की, चिन्ता नहीं थी। इसी समय प्रबुद्ध लेखकों के एक वर्ग ने उन लोगों के ऊपर आक्रोशित होकर 'शब्द-बाण' छोड़ना प्रारम्भ किया, जो इस स्थिति के लिए जिम्मेदार थे। परसाई ने तो 'आधुनिक रावण' को मारने के लिए अपने कमान से एक साथ कई बाण छोड़े, जिससे सम्पूर्ण कुव्यवस्था की जड़ को समूल नष्ट किया जा सके।

परसाई की सक्रियता के फलस्वरूप ही हिन्दी व्यंग्य का परिष्कृत रूप हमारे सामने है। इन्होंने अपनी प्रतिबद्धता से व्यंग्य को गम्भीर लेखन का दर्जा दिलाया। व्यंग्य लेखन की परम्परा में कबीर का नाम सर्वप्रथम आता है। हिन्दी का गद्य व्यंग्य लेखन 'अन्धेरनगरी' और 'शिवशम्भु के चिट्ठे' से माना जाना चाहिए। तब से अब तक व्यंग्य लेखन क्षेत्र में अनेक पड़ाव आये, जहाँ रुक कर प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में चर्चा केन्द्रित की गयी है।

परसाई साहित्य के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में विभिन्न कोणों से करने का प्रयास किया गया है। क्योंकि जहाँ कहीं भी परसाई साहित्य एवं व्यंग्य विधा पर कार्य हुआ भी है वहाँ उनके समग्र साहित्य को अध्ययन का विषय नहीं बनाया गया है। मैंने अपने शोध प्रबन्ध में व्यंग्य विधा के परिप्रेक्ष्य में परसाई के समग्र साहित्य का अध्ययन किया है। व्यंग्य की सुदृढ़ परम्परा में परसाई जी का योगदान क्या है? परसाई जी अपने पूर्व के व्यंग्यकारों से क्या कुछ ग्रहण किया तथा परवर्ती रचनाकारों को किस रूप में प्रेरित किया ? व्यंग्य विधा को परसाई की मौलिक देन क्या है ? और किस प्रकार वह समकालीन व्यंग्यकारों से भिन्न है ? पूर्ववर्ती व्यंग्यकारों की परम्परा में उनका स्थान क्या

है तथा परवर्ती रचनाकारों के लिए उनका महत्व क्या है ? न केवल भारतीय साहित्य में वरन् पाश्चात्य साहित्य में भी व्यंग्य की परम्परा को देखने की चेष्ठा की गयी है। इस सन्दर्भ में व्यंग्य चित्र को भी जानने समझने की एक छोटी सी कोशिश की गयी है। वस्तुतः विषय साम्य होने पर भी यह तो शोधक की दृष्टि है जो उसे नवीनता और मौलिकता प्रदान करती है।

प्रथम अध्याय के अन्तर्गत 'व्यंग्य-विवेचन' प्रस्तुत किया गया है। इसमें व्यंग्य शब्द का अर्थ, परिभाषा, व्यंग्य और व्यंग के अन्तर को समझाने का प्रयास हुआ है। विभिन्न उपशीर्षकों में व्यंग्य और वक्रोक्ति, व्यंग्य और प्रहसन, व्यंग्य और व्यंग्य-चित्र, व्यंग्य और 'सटायर', व्यंग्य और त्रासदी, कामदी, आदि का भी विवेचन किया गया है। व्यंग्य की परम्परा को संस्कृत साहित्य, पाश्चात्य साहित्य तथा भारतीय भाषाओं के साहित्य के परिप्रेक्ष्य में भी देखने का प्रयास किया है। व्यंग्य की रचना प्रक्रिया, व्यंग्य के प्रयोजन, व्यंग्य के भेद, व्यंग्य के तत्व, व्यंग्य और हास्य के अन्तर को भी इस अध्याय के अन्तर्गत विवेचित किया गया है।

द्वितीय अध्याय के अन्तर्गत हिन्दी व्यंग्य परम्परा, स्वरूप और विकास को दिखलाया गया है। इसमें व्यंग्य के विकास के उत्तरदायी कारणों, विकास का स्वरूप और स्थापक काल के प्रमुख व्यंग्यकारों के योगदान का विश्लेषण किया गया है। इस अध्याय के अन्तर्गत कबीर, भारतेन्दु और उनकी मण्डली, निराला, प्रेमचन्द, नागार्जुन, त्रिलोचन, सर्वेश्वर, अमृतलाल नागर आदि के व्यंग्य के विकास में किये गये योगदान को देखने का कार्य किया गया है। व्यंग्य की शैली से विधा तक की यात्रा पर इस अध्याय में विस्तार से प्रकाश डाला गया है।

तृतीय अध्याय में व्यंग्य विधा की दृष्टि से प्रमुख व्यंग्यकारों एवं उनके साहित्यिक योगदान के महत्व को समकालीनता की दृष्टि से विश्लेषित करने का कार्य किया गया है।

इस अध्याय में व्यंग्य रचनाकारों में– शरदजोशी, रवीन्द्र नाथ त्यागी, नरेन्द्र कोहली, के० पी० सक्सेना, मनोहर श्याम जोशी, श्रीलाल शुक्ल, अमृत राय आदि के शिल्प, शैली एवं विषय वस्तु का विश्लेषण किया गया है। व्यंग्य समीक्षकों तथा रचनाकारों में डॉ० बालेन्दु शेखर तिवारी, प्रेम जनमेजय, डॉ० बरसाने लाल चतुर्वेदी, सुदर्शन मजीठिया, डॉ० शंकर पुणताम्बेकर आदि के साहित्यिक अवदान को भी विभिन्न दृष्टिकोणों से विश्लेषित करने का कार्य किया गया है।

इसके पश्चात् व्यंग्य की दूसरी पीढ़ी के रचनाकारों को भी लिया गया है जिनका काल सामान्यतः १९७० के बाद का है। इनकी भी शैली, शिल्प एवं वस्तु-कथ्य का विश्लेषण किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में हरिशंकर परसाई की जीवन वृत्तियाँ, जीवन-परिचय, जीवन-संघर्ष, जीवन-दर्शन के साथ, विचार धारा एवं आदर्श को रेखांकित किया गया है। परसाई, कबीर और मार्क्स से सबसे अधिक प्रभावित थे। इसके अलावा वे गोर्की, चेखव, बर्नाड शॉ, तुलसी एवं मुक्तिबोध से भी प्रभावित थे। इसको इस अध्याय का विषय बनाया गया है। इसी अध्याय में परसाई की सम्पूर्ण रचना को उपन्यास, कहानी, निबन्ध, रेखाचित्र, रिपोर्ताज, कालम आदि के आधारों पर बाँट करके शैली, शिल्प, भाषा तथा विषय वस्तु का विश्लेषण किया गया है।

पंचम अध्याय में समकालीन कहानी, नयी कहानी, व्यंग्य का सौन्दर्य शास्त्र, मार्क्सवादी विचार धारा और परसाई, सामयिक राजनीतिक क्रान्ति और परसाई, परसाई का योगदान, परसाई का साहित्य, परसाई साहित्य की विशेषताएं, अन्य साहित्यकारों से उनका पार्थक्य और साहित्य में स्थान आदि विषयों का विवेचन किया गया है। परसाई साहित्य के विश्लेषण क्रम में उनकी सीमाओं को भी रेखांकित किया गया है। इस अध्याय में समकालीनता

बनाम कालजयिता आदि को भी विश्लेषित किया गया है।

षष्ठ् अध्याय उपसंहार के रूप में है जिसमें व्यंग्य विधा की दृष्टि से परसाई के सम्पूर्ण साहित्य को विश्लेषित करते हुए उसे सार रूप में प्रस्तुत किया गया है।

विषय चयन से लेकर प्रबन्ध प्रस्तुत होने तक श्रद्धेया **डॉ० निशा अग्रवाल जी** की प्रेरणा एवं कुशल मार्ग निर्देशन के फलस्वरूप ही शोध का यह दुरूह कार्य अति सरल होकर सम्पन्न हो सका। "मातृविहीन हृदय" मातृतुल्य 'स्नेहमूर्ति' की छाया में आकर अक्सर अपार स्नेह पाकर रोने को उद्धत होता था। ऐसी 'स्नेहमूर्ति' को आभार प्रकट करना धृष्टता होगी। मैं उन्हें शत्-शत् नमन करता हूँ। प्रो० सत्य प्रकाश मिश्र, डॉ० मीरा दीक्षित आदि गुरुजनों की प्रेरणा, प्रोत्साहन तथा मार्ग निर्देशन भी मुझे बराबर मिलता रहा। इन सबके प्रति हृदय सदा श्रद्धावनत् रहेगा।

'परिवार' के प्रत्येक सदस्य का प्रेम और सहयोग मुझे हमेशा प्रेरित करता रहा है। इन सबके प्रति मैं हृदय से आभार प्रकट करता हूँ। अपने 'आत्मीय' सभी मित्रों का सहयोग और प्रेरणा मेरे लिए संबल रहा है।

अन्त में जिन संस्थाओं तथा 'व्यक्तियों' ने प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से इस गहन कार्य में मुझे सहयोग, प्रेरणा एवं प्रोत्साहन दिया, उन सब के प्रति हार्दिक आभार ज्ञापित करते हुए यह शोध-प्रबन्ध मैं बुध समाज को समर्पित करता हूँ।

अजयकुमारपाण्डेय

१५-१२-२००२ **अजय कुमार पाण्डेय**

विषय-प्रवेश

प्रथम अध्याय

व्यंग्य विवेचन

व्यंग्य-विवेचन

मनुष्य की विकलांगता की भाँति समाज की भी विकलांगता होती है जो मनुष्य की विकलांगता से अधिक त्रासद है। मनुष्य की विकलांगता तो कृत्रिम संसाधनों द्वारा समाप्त की जा सकती है लेकिन समाज की विकलांगता नहीं।

व्यंग्यकार समाज के उन अंगों की तस्वीर प्रस्तुत करता है जो विकृत हो गया है और व्यंग्य के द्वारा वह विकलांग समाज के अंगों को धारदार नश्तर चुभाकर बाहर करने की कोशिश करता है। पंगु व्यवस्था, जड़ जीवन पद्धति पर व्यंग्यकार अपने सफल अस्त्र व्यंग्य के माध्यम से सर्जनात्मक प्रहार करता है।

व्यंग्य की उत्पत्ति

भारतीय परम्परा में व्यंग्य "ध्वनि" के अर्थ में प्रतिपादित किया गया है। व्यंजना शक्ति के द्वारा व्यंग्यार्थ की प्रतीति होती है। ध्वन्याचार्य आनन्दवर्द्धन के अनुसार –

यत्रार्थः शब्दो वा तमर्थमुपसर्जनीकृतस्वार्थौ ।
व्यङ्क्तः काव्यविशेषः स ध्वनिरिति सूरिभिः कथितः ।।[१]

(ध्वन्यालोक – १/१३)

अर्थात् "जहाँ अर्थ स्वयं को अथवा शब्द अपने अर्थ को गुणीभूत करके उस (प्रतीयमान अर्थ) को अभिव्यक्त करते हैं उस काव्य विशेष को विद्वान लोग ध्वनि कहते हैं।" तात्पर्य यह है कि वाच्यार्थ की अपेक्षा जहाँ व्यंग्यार्थ प्रधान हो वह ध्वनि काव्य है। वैसे तो किसी भी शब्द या वाक्य से कोई न कोई व्यग्यार्थ ही जा सकता है, लेकिन प्रत्येक व्यंग्यार्थ को ध्वनि काव्य नहीं कहा जा सकता है। वस्तुतः चमत्कारी व्यंग्य ही काव्य के रूप में समाहित हो सकता है"।[२]

---

१. ध्वन्यालोक – रचयिता–अभिनव गुप्त पाद, हिन्दी व्याख्याकार, आचार्य जगन्नाथ पाठक–१०२

२. डॉ. निशा अग्रवाल – भारतीय काव्य शास्त्र, पृष्ठ – ८०

नालन्दा विशाल शब्द सागर में "शब्द की व्यंजनावृत्ति से प्रकट होने वाले अर्थ को व्यंग्य की व्युत्पत्ति का उत्स माना गया है।"[१] हिन्दी लघु शब्द सागर के अनुसार "व्यंग्य का अर्थ है, शब्द का वह गूढ़ अर्थ जो उसकी व्यंजना वृत्ति के द्वारा प्रकट हो (ताना, चुगली)।[२] डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी "ध्वनि और वक्रोक्ति जैसे शब्दों के मिलते-जुलते अर्थ के विराट संवाहक के रूप में व्यंग्य की परिकल्पना करते हैं।"[३]

व्यंजना वृत्ति द्वारा अर्थ-प्रतीति होती है। यह एक सर्वमन्य तथ्य है किन्तु जिस विशिष्ट अर्थ में व्यंग्य का आज प्रयोग हो रहा है वह परम्परागत अर्थ से भिन्न है।

व्यंग्य और वक्रोक्ति

ग्यारहवीं शताब्दी पूर्वार्द्ध के कश्मीरी विद्वान कुन्तक ने वक्रोक्ति का लक्षण इस प्रकार बताया – "वक्रोक्तिरेव वैदग्ध्य भंगी भणिति रुच्यते" अर्थात् – वक्रोक्ति-वैदग्ध्य भणिति है। कवि कर्म की कुशलता का नाम है वैदग्ध्य और भंगी का अर्थ है – विच्छिति, चमत्कार, चारुता। भणिति से तात्पर्य है कथन प्रकार। इस प्रकार वक्रोक्ति कवि कर्म कौशल से उत्पन्न होने वाले चमत्कार पर आश्रित कथन प्रकार है।"[४]

वक्रोक्ति के मूल में 'वाग्वैदग्ध्य' निहित है। लेकिन व्यंग्य, वक्रोक्ति की भाँति केवल वाग्वैदग्ध्य नहीं है। वह एक पूर्वनियोजित प्रतिबद्ध प्रहार होता है जिसके मूल में असामाजिक तथ्यों के विध्वंस द्वारा स्वस्थ निर्माण की कामना निहित होती है। वक्रोक्ति, व्यंग्य की सृष्टि में उपयोगी अस्त्र हो सकता है लेकिन बगैर सामाजिक प्रतिबद्धता के हर वक्र उक्ति व्यंग्य नहीं कहला सकता। वक्रोक्ति के द्वारा हास, परिहास, उपहास, उपालम्भ, अतिशयोक्ति व्याजोक्ति

---

१. नालन्दा विशाल शब्द सागर – पृष्ठ – १३०८

२. लघु हिन्दी शब्द सागर – पृष्ठ ९२६, हिन्दी नागरी प्रचारिणी सभा

३. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – हिन्दी का स्वातन्त्र्योत्तर हास्य एवं व्यंग्य, पृष्ठ २१

४. डॉ. निशा अग्रवाल – भारतीय काव्य शास्त्र – पृष्ठ १०४

विरोधाभास, भर्त्सना, आक्षेप, छिद्रान्वेषण आदि व्यंग्य को धारदार बनाने वलो अस्त्रों की सृष्टि हो सकती है लेकिन वह व्यंग्य नहीं है। अतः वक्रोक्ति मात्र व्यंग्य नहीं है, वह व्यंग्य का माध्यम अवश्य है।

व्यंग्य और सटायर

हिन्दी में प्रचलित 'व्यंग्य' शब्द अंग्रेजी के 'सटायर' का पर्याय माना जाता है। ६५ ई. पू. ग्रीस में फलों की प्रथम फसल की खुशी में नकल या स्वांग के रूप में जो ग्रामीणोत्सव होता था उसे सटायर कहते थे। जिसका अर्थ होता है अर्ध मानव- अर्ध पशु।[१] रोमन लोग Sathyos का प्रयोग Satire के अर्थ में नहीं करते थे। वे गाली, गलौज से युक्त, अश्लील, अमर्यादित नादकों के लिए Satyrs का प्रयोग करते थे।

अंग्रेजी का Satire शब्द लैटिन के Satura से बना है जिसका अर्थ होता है पूर्ण या भरा-पूरा। Satura का एक अर्थ खट्टे फलों का सलाद भी है। आधुनिक Satire ने सम्भवतः मिश्रण का गुण इससे ग्रहण कर लिया और व्यंग्य विद्या में विभिन्न विद्याओं के मिश्रित रुप को अपनाया।

अंग्रेजी 'सटायर' के पर्याय व्यंग्य के अर्थ को लेकर विद्वानों में मतैक्य नहीं है। डॉ. हरदेव बाहरी 'सटायर' के लिए प्रहसन काव्य, विद्रूपात्मक साहित्य, व्यंग्य-साहित्य, व्यंग्य लेख उपहास-लेख, मजाक आदि अर्थों के प्रयोग को महत्त्व देते हैं।[२] रामचन्द्र वर्मा 'व्यंग्य-गीत' को ही 'सटायर' के अर्थ में प्रयुक्त होने का आग्रह करते हैं। बलदेव मिश्र 'सटायर' के हास्य के व्यंजना पक्ष पर जोर देने वाला मानते हैं।[३]

---

१. गिलबर्ट रिघेट – दि एनाटामी आफ सटायर, पृष्ठ २३२

२. डॉ. हरदेव बाहरी – वृहत अंग्रेजी-हिन्दी कोष, भाग एक – पृष्ठ १६३७

३. बलदेव प्रसाद मिश्र – हिन्दी साहित्य में हास्य एवं व्यंग्य, पृष्ठ ३४०

आधुनिक 'सटायर' जीवन की विद्रूपताओं के प्रति तानाकशी करने वाले अर्थ से साम्य रखता है। विद्वानों ने 'व्यंग्य' को सटायर का पर्याय माना है। मानविकी पारिभाषिक कोश में 'सटायर' का व्यंग्य अर्थ करते हुए कहा गया है – "उसका लक्ष्य मानवीय दुर्बलताओं पर प्रहार करके उन्हें उभारना और सुधारना होता है।[१]

व्यंग्य और व्यंग्य चित्र

व्यंग्य चित्र के लिए अंग्रेजी में 'कार्टून' शब्द का प्रचलन है। एनसाइक्लोपीडिया अमेरिकाना के अनुसार, "व्यंग्य उपहास, हास्य को उत्पन्न करने वाले पहचानात्मक प्रतीकात्मक, रेखाचित्र को व्यंग्य-चित्र कहा जाता है। चित्र का शीर्षक नहीं भी हो सकता है और इसमें क्रमणिका का समावेश भी हो सकता है।

व्यंग्य चित्रों की शुरुआत तो सोलहवी शताब्दी में ही जर्मनी के रिफार्मेशन काल में शुरु हो गयी थी। इसी अवधि में कार्टून सामाजिक विसंगतियों पर व्यंग्य करने के लिए प्रचार का एक कारगर अस्त्र सिद्ध हुआ। इस समय तक कुछ चित्र ही विषय और अभिव्यक्ति की दृष्टि से अपने उद्देश्य में सफलता पाते थे। अठारहवीं शताब्दीके लगभग इंग्लैण्ड में 'कार्टून' वहाँ की पत्रकारिता का एक अविभाज्य अंग हो गया। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य अमरीका में सम्पादकीय कार्टूनों का चित्रण किया जाने लगा। खेल-कूद सम्बन्धी भी कार्टून अब बनने प्रारम्भ हो गये। उस समय के प्रमुख व्यंगय चित्रकारों में इंग्लैण्ड के होगार्थ रोलैण्डसन और गितलरे प्रमुख थे। फ्रांस के डॉमियर ने भी अपने व्यंग्य-चित्रों से खूब प्रसिद्धि पायी।

भारत में व्यंग्य तो लिखे जाते थे लेकिन व्यंग्य चित्रों का प्रचलन नहीं था। परतन्त्र भारत में अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता नहीं थी जिसके कारण राजनीतिक व्यंग्य तो एक दम नहीं हो पाता था। अगर हुआ भी तो प्रतीकात्मक ढंग से। १९४७ की भारतीय स्वतन्त्रता के पश्चात् राजनीतिक व्यंग्य करने की स्वतन्त्रता हो गयी। अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के कारण व्यंग्य चित्र का प्रचलन

---

१. साहित्य खण्ड – पृष्ठ २२९-३०

तेजी से होने लगा। स्वतन्त्रता पश्चात् व्यंग्य और व्यंग्य चित्र पत्र पत्रिकाओं में नियमित स्तम्भ के रूप में आने लगे जिसने आन्दोलनकारी कार्यों को प्रेरित किया।

व्यंग्यकार के साधन भाषा और शब्द हैं, तो व्यंग्य चित्रकार के साधन रंग और रेखा हैं। व्यंग्य की अपेक्षा व्यंग्य-चित्र अधिक स्थूल और मूर्त होने के कारण लोक ग्राह्य होते हैं।

व्यंग्यचित्र सर्वथा नवीन होता है क्योंकि यह ताजी घटनाओं पर ही आधारित होता है। व्यंग्य चित्र की सर्वाधिक शक्ति उसकी सम्प्रेषणीयता में होती है। व्यंग्य चित्रकार का प्रयास होता है कि वह कम रेखाओं और अल्प शब्दों के द्वारा अपनी बात कारगर ढंग से पाठकों को समझा सके। इसी में व्यंग्यचित्र की सफलता भी है।

'व्यंग्य चित्र' के समान केरिकेचर भी रेखा-चित्रों के माध्यम से प्रकट होने वाला चित्र है। 'केरिकेचरिस्ट' विसंगतियों का चित्रण करने के लिए एक प्रकार आशुलिपि को अपनाता है जबकि कुछ लकीरों को मरोड़कर उनके सहारे व्यंग्य उत्पन्न करना व्यंग्य-चित्रकर का कौशल होता है।

व्यक्ति के रूप में उत्पन्न विकृति को प्रकट करने में व्यंग्य चित्रकार अधिक सफलता प्राप्त करता है। व्यंग्य-चित्रकार व्यक्ति के अतिमुख्य लक्षणों को ग्रहण करता है और शेष बातों में वक्रता लाकर व्यंग्य चित्र का निर्माण करता है। केरिकेचर का नाम, व्यंग्य की अपेक्षा बहुत कम है।

स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी-व्यंग्य चित्रकारों में श्री शंकर, श्री लक्ष्मण, श्री सुशील कालरा, श्री प्राण, श्री मारियो, श्री सुधीर, श्री विष्णु, श्री शेखर गुरेरा प्रमुख नाम हैं जबकि परिहास-चित्रकारों में श्री नेगी, श्री आबिद, श्रीरवीन्द्र, श्री सुरेश सावन, श्री राजेन्द्र पुरी, श्री आलोक भार्गव, श्री शिशिर कुमार आदि नामों की लम्बी शृंखला है।

व्यंग्यकारों की भाँति व्यंग्य-चित्रकार भी कथनी और करनी के भेद, बिडम्बना, संत्रास, राजनीतिक विद्रूपता को प्रमुखता से प्रकट करते हैं।

व्यंग्य और हास्य

कुछ वर्ष पूर्व तक भारतीय आचार्य और समीक्षक व्यंग्य को हास्य के एक प्रभेद के रूप में स्वीकार करते थे। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, बेढ़ब बनारसी और गुलाम अहमद फुरकत आदि अपनी परिभाषाओं में हास्य के बिना व्यंग्य की कल्पना नहीं स्वीकार करते हैं। डॉ. बरसाने लाल चतुर्वेदी के अनुसार "आलम्बन के प्रति तिरस्कार उपेक्षा या भर्त्सना की भावना लेकर बढ़ने वाला हास्य व्यंग्य कहलाता है"।[१]

हास्य को श्री नारायण दीक्षित ने इस प्रकार परिभाषित किया है – "बाह्य वातावरण एवं कोई भूली भटकी स्मृति द्वारा मस्तिष्कगत विशिष्ट केन्द्र की हलचल का परिणाम जो होठों एवं मन तथा मुख की भाव भंगिमा पर लौटकर प्रतीत होता है उसे हास्य कहते हैं।"[२] डॉ. सावित्री सिन्हा के अनुसार "किसी घटना, क्रिया, परिस्थिति, लेख या विचारों की अभिव्यक्ति में निहित वह तत्व जो उनकी असम्बद्धता, बेढंगेपन के कारण मनुष्य के मन में एक विशेष प्रकार का आनन्द या मजा उत्पन्न करता है वह हास्य या ह्यूमर है।[३] डॉ. उषा शर्मा हास्य को इस प्रकार परिभाषित करती है – "हास्य स्थायी भाव है, यह उस विद्युत छटा के समान है जो क्षण भर में चका चौंध कर गति पकड़ती है उत्कर्ष पर आकर दूसरे ही क्षण विलीन हो जाती है।[४]

गोपाल प्रसाद व्यास हास्य और व्यंग्य दोनों के अन्तर एवं परिणाम को रेखांकित करते

---

१. डॉ. बरसाने लाल चतुर्वेदी - हिन्दी साहित्य में हास्य रस - पृष्ठ-४२

२. श्री नारायण दीक्षित - हास्य के सिद्धान्त तथा आधुनिक हिन्दी साहित्य, पृष्ठ-९६

३. व्यास अभिनन्दन ग्रन्थ - डॉ. सावित्री सिन्हा का लेख, पृष्ठ-१२०

४. डॉ. उषा शर्मा - स्वातन्त्रयोत्तर निबन्ध में व्यंग्य - पृष्ठ-२९

हुए कहते हैं– विनोद कालिन्दी की आनन्द लहर है और व्यंग्य बरसाती गंगा की उफनती धारा का कालग्रासी भँवर। विनोद साहित्य का कान्ता सम्मित रस है और व्यंग्य गुलाब के नीचे का काँटा।[१] डॉ. शेर जंग गर्ग ने उद्देश्य की कसौटी पर कसते हुए हास्य एवं व्यंग्य का अन्तर इस प्रकार बताया है – "हास्य निष्प्रयोजन होता है और यदि उसका कोई प्रयोजन होता है तो यह निश्चय नहीं होता।[२]

हास्य और व्यंग्य के सम्बन्धों को डॉ. बालेन्दु शेखर तिवरी ने इस प्रकार से व्यक्त किया है "हास्य सुन्दर की कामना करता है और व्यंग्य लक्ष्य की पुकार करता है, स्पष्ट ही हास्य की अपेक्षा व्यंग्य में तेजी और गर्मी होती है।"[३] हास्य और व्यंग्य को प्रयोजन के आधार पर ही अलग किया जा सकता है। हरिशंकर परसाई ने इसे इस प्रकार व्यक्त किया है "आदमी कुत्ते की बोली बोले यह एक विसंगति है। वन महोत्सव का आयोजन करने के लिए पेड़ काटकर साफ किये जाँय जहाँ मन्त्री महोदय गुलाब के वृक्ष की कलम रोपें, यह भी एक विसंगति है। दोनों में भेद है, दोनों में हँसी आती है। दाँत निकाल देना उतना महत्त्वपूर्ण नहीं है।[४]

हास्य और व्यंग्य में मुख्य अन्तर लक्ष्य और दृष्टि के कारण है। एक में विसंगति का लक्ष्य हास्योद्रेक होता है तो दूसरे में विसंगति चित्रण द्वारा विकृत स्थिति, विकृत मनोवृत्त, विकृत स्वीकृत पर प्रहार है। एक में विनोदी स्वभाव वश विकृति का चित्रण है तो दूसरे में गहरी सूझ-बूझ के परिणाम स्वरूप विकृति का प्रदर्शन है।

हास्य स्वभाव की विनोदप्रियता के कारण हो सकता है परन्तु व्यंग्य परिवर्तनकामी चेतना तथा गहरी सामाजिक दृष्टि को साथ लेकर चलता है। हास्य केवल मनोरंजन के कारण होता

---

१. साप्ताहिक हिन्दुस्तान – २४ मार्च १९६८, पृष्ठ ८

२. डॉ. शेर जंग गर्ग – स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी कविता में व्यंग्य, पृष्ठ २९

३. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – हिन्दी का स्वातन्त्रयोत्तर हास्य एवं व्यंग्य, पृष्ठ–५९

४. हरिशंकर परसाई – सदाचार का ताबीज, कैफियत

है। व्यंग्य सामाजिक दायित्वों के कारण।

हास्य और व्यंग्य में उद्देश्य के परिणाम स्वरूप भिन्नता अवश्य है परन्तु विषय की दृष्टि से दोनों में समानता है। इसी कारण पार्थक्य के बावजूद दोनों को एक दूसरे का पूरक माना गया है। अमृत राय के अनुसार "हास्य और व्यंग्य के रग-रेशे को एक दूसरे से परस्पर अलग करके देख पाना कठिन है; क्योंकि ऐसा व्यंग्य मुश्किल से मिलेगा जिसमें हास्य का भी कुछ रंग न हो, और ऐसा हास्य भी कम देखने को मिलता है जिसमें कितना ही बारीक क्यों न हो, परोक्ष क्यों न हो, व्यंग्य का कुछ काँटा या नोंक न हो"[१] अमृतराय की नजर में दोनों के बीच पृथकता के बावजूद जुड़ाव अवश्य है। प्रसिद्ध नाटककार बर्नाड शॉ ने दोनों के बीच के सम्बन्धों को इस प्रकार परिभाषित किया है "विश्व का उद्धार उस (व्यंग्यकार) पर निर्भर करता है जो दोषों को सहज भाव से नहीं लेता, वह उनकी ऐसी खिल्ली उड़ाता है जिससे वह उत्साहित न होकर समाप्त हो। व्यंग्यकार का हास्य कठोर हास्य होता है उसमें तरलता नहीं होती है।"[२]

सारांश रूप में हास्य एवं व्यंग्य का सम्बन्ध इस प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है। सोउद्देश्यता व्यंग्य की अनिवार्य शर्त है, जबकि हास्य निष्प्रयोजन भी हो सकता है। हास्य का सम्बन्ध संवेदनशील मन-भावना से है, जबकि व्यंग्य बुद्धि की उपज है, मस्तिष्क की खुराक है। हास्य मनोरंजनात्मक होता है जबकि व्यंगय सृजनात्मक सुधार।

व्यंग्य हास्य से स्वतन्त्र अस्तित्व रखते हुए भी हास्य के संस्पर्श से सर्वथा मुक्त नहीं होता है। यदि व्यंग्यकार की चित्तवृत्ति से हास की मुद्रा एकदम विलीन हो जाय तो वह व्यंग्य न लिखकर अन्य प्रकार के गम्भीर लेखन में प्रवृत्त हो चलेगा। किन्तु यह हास्य रंजनात्मक हास्य नहीं, रचनात्मक हास्य होता है, सामाजिक रचनात्मक दायित्व को ग्रहण करने से हास्य व्यंग्य

---

१. अमृतराय – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, भूमिका

२. बर्नार्ड शॉ का उद्धरण – आधुनिक हिन्दी काव्य में व्यंग्य, बरसाने लाल चतुर्वेदी, पृष्ठ १२,

का दर्जा प्राप्त कर लेता है।

व्यंग्य या व्यंग

हिन्दी में समीक्षकों और विद्वानों में 'व्यंग्य' या 'व्यंग' शब्द प्रयोग को लेकर हमेशा मतभेद रहा है। कुछ व्यंग्य समीक्षक जैसे – डॉ. वीरेन्द्र मेंहदी रत्ताँ, डॉ. खेलावन पाण्डेय, डॉ. उषा शर्मा आदि ने आग्रह पूर्वक 'व्यंग' शब्द का प्रयोग किया है। डॉ. वीरेन्द्र मेंहदी रत्ताँ कहते हैं "संस्कृत साहित्य में व्यंग्य शब्द व्यंजना शक्ति द्वारा प्राप्त साधारण से कुछ भिन्न अर्थ के रूप में प्रयुक्त होता रहा है। हिन्दी में इसी अर्थ में व्यंग्य शब्द का प्रयोग पर्याप्त है। इसलिए उचित है कि व्यंग्य शब्द को संस्कृत से चले आ रहे परम्परागत अर्थ को व्यक्त करने के लिए छोड़कर 'सटायर' शब्द के अर्थबोध के लिए हिन्दी में 'व्यंग' शब्द को प्रयुक्त किया जाये"।[१] इसी प्रकार डॉ. राम खेलावन पाण्डेय और डॉ. उषा शर्मा ने भी 'व्यंग' शब्द के प्रयोग पर जोर दिया हैं शरद जोशी ने सुरेश कान्त को एक साक्षात्कार के दौरान बताया था कि "वे आदतन व्यंग कहते हैं इसके पीछे उनका कोई सैद्धान्तिक आग्रह नहीं है।"

प्रसिद्ध व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई ने केवल 'दुर्घटनारस' में व्यंग्य के स्थान पर 'व्यंग' शब्द का प्रयोग किया है, अन्यत्र नहीं। अमृत लाल नागर 'व्यंग' का अर्थ अंगहीन मेढ़क मानते हैं[२] तथा 'व्यंग्य' के प्रयोग पर बल देते हैं।[२] प्रसिद्ध समीक्षक व्यंग्यकार डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी 'व्यंग्य' शब्द के प्रयोग को अधिक समीचीन मानते हैं।

प्रसिद्ध समीक्षकों ने 'व्यंय' और 'व्यंग' शब्द के अर्थ बोध को इस प्रकार ग्रहण किया है, व्यंग विकृति या दोष है तो व्यंग्य इस विकृति या दोष पर किया गया कठोर आघात। 'सटायर' के पर्याय-रूप में 'व्यंग्य' शब्द को ही प्रयुक्त किया जाता है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में 'व्यंग्य'

---

१. डॉ. वीरेन्द्र मेंहदीरत्ता – आधुनिक हिन्दी साहित्य में व्यंग्य, पृष्ठ–११

२. अमृतलाल नागर – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, भूमिका, पृष्ठ – ५

शब्द का ही प्रयोग किया गया है।

व्यंग्य और प्रहसन

'प्रहसन' को अंग्रेजी में 'कामेडी' या 'फोर्स' नाम से जाना जाता है। डॉ. ज्ञानमती अरोड़ा ने प्रहसन को इस प्रकार परिभाषित किया है, "प्रहसन नाट्य की वह विशिष्ट विधा है जिसका उद्देश्य हास्य रस की सृष्टि करना होता है। ब्राह्मण और राजा जैसे उत्कृष्ठ चरित्रों से लेकर निम्न वर्ग के धूर्त, पाखण्डी, आदमी इसके पात्रों में स्थान प्राप्त कर सकते हैं। इसका कथानक इतिहास प्रसिद्ध न होकर उत्पाध होता है, यह एकांकी अथवा अनेकांकी परन्तु संक्षिप्त एकान्वितियों से पूर्ण नाट्य रूप है। व्यंग्य, परिहास और वाग्वैदग्ध्य इसके संवादों की विशिष्टताएं होती हैं। समाज की विद्रूपताओं और अभिहास्य, परिस्थितियों तथा चरित्रों को दर्शकों के सम्मुख प्रस्तुत करने में तथा समाज सुधार की योजना में ही प्रहसन का चिरंतन अभीष्ट निहित है। इस प्रकार प्रहसन उज्ज्वल वर्ण, हास्य रस का प्रतिष्ठापक उत्कृष्ठ नाट्य रूप है।

भारतीय विद्वानों के अनुसार प्रहसन की परिभाषा इस प्रकार की गयी है–

परिहास प्रधानान्या भाषणान्तयत्र बाहुल्येन भवन्ति .... अभि. भा./८/१०४

दश रूपक के अनुवाद – बौध, जैन, आदि पाखण्डी और विप्र आदि का आश्रय लेकर भाषा आदि के माध्यम से हास्यकर वचन का उपनिबन्धन करना प्रहसन है। प्रहसन के दो प्रकार हैं – शुद्ध प्रहसन और विकृत प्रहसन। विकृत भाषाओं से रचित किसी एक ही व्यक्ति के चरित को हास्यरूप में उपस्थित करने वाला प्रहसन शुद्ध है। विकृत प्रहसन में वेश्या, नपुंसक, विट, धूर्त आदि का वर्णन आता है।

प्रहसन उस सेवक सा है जो अपने स्वामी की अयोग्यताएँ और दुर्बलताएं पसन्द करता है किन्तु अवसरानुकूल नकल भी उतारता है और उन्हें मूर्ख भी बनाता है। प्रहसन मातृ का हृदय

स्थल है जो बच्चे की शरारतों पर डाटते हुए भी हंसती है। व्यंग्य इसके ठीक विपरीत पितृ पक्ष है जो सुधरने के लिए एक तरह से पीटता है। व्यंग्य बधिक है तो प्रहसन अभियोक्ता है।

हिन्दी में प्रहसन भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने लिखना प्रारम्भ किया। 'अँधेर नगरी' 'वैदिकी हिंसा, हिंसा न भवति', विषस्य औषधम्' उनके प्रसिद्ध है जिसमें रीति-रिवाजों परम्पराओं, तत्कालीन राजनीतिक व्यवस्था, लोलुपता आदि के ऊपर मन्दस्मित कटाक्ष है।

व्यंग्य की प्रमुख परिभाषाएं –

हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं के विद्वानों लेखकों और समीक्षकों ने 'व्यंग्य' को इस प्रकार परिभाषित किय है –

आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार, "व्यंग्य वह है जहाँ कहने वाला अधरोष्ठ में हंस रहा हो और सुनने वाला तिलमिला उठा हो और फिर भी कहने वाले का जबाब देना अपने को और ही उपहासास्पद बना लेना हो जाता है"।[१]

डॉ. रामकुमार वर्मा लिखते हैं, "आक्रमण करने की दृष्टि से वस्तु स्थिति को विकृत कर उससे हास्य उत्पन्न करना ही व्यंग्य है।"[२] डॉ. इन्द्रनाथ मदान के अनुसार, "परिवेश के प्रति असन्तोष व्यंग्य का रूप धारण करता है। इसे खरी-खरी सुनाना भी कहा जाता है"।[३]

डॉ. प्रभाकर माचवे के अनुसार, "मेरे लिए व्यंग्य कोई पोज या अंदाज या लटका या बौद्धिक व्यायाम नहीं एक आवश्यक अस्त्र है"।[४]

डॉ. बरसाने लाल चतुर्वेदी के अनुसार, "आलम्बन के प्रति तिरस्कार उपेक्षा या भर्त्सना की भावना को लेकर बढ़ने वाला हास्य ही व्यंग्य कहलाता है"।[५]

---

१. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी – कबीर, पृष्ठ १६४

२. डॉ. रामकुमार वर्मा – रिमझिम, पृष्ठ १३

३. डॉ. इन्द्रनाथ मदान – हिन्दी की हास्य व्यंग्य विद्या का स्वरूप एवं विकास, पृष्ठ २

४. डॉ. प्रभाकर माचवे – तेल की पकौड़ियां, पृष्ठ ५

५. डॉ. बरसाने लाल चतुर्वेदी – हिन्दी साहित्य में हास्य रस, पृष्ठ ३७७

डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी की दृष्टि में व्यंग्य, "एक विशिष्ट समाज धर्मी प्रेक्षण-विाध अथवा एक विशिष्ट मानसिक भंगिमा है, जिसका उद्भव अन्तर्विरोधों के कारण होता है जिसमें व्यक्ति अथवा व्यवस्था-विशेष्ज्ञ के दौर्बल्य की आक्षेपात्मक अभिव्यक्ति द्वारा परिवर्तन का अभीष्ट पूर्ण होता है"।[१]

श्रीलाल शुक्ल व्यंग्य को प्रभाकर माचवे की दृष्टि से देखते हैं, "मैंने व्यंग्य को आधुनिक जीवन और आधुनिक लेखन के एक अभिन्न अस्त्र और एक अनिवार्य शर्त के रूप में पाया है"।[२] डॉ. वीरेन्द्र मेहदी रत्ता ने व्यंग्य की परिभाषा इस प्रकार से दी है, "शास्त्रीय दृष्टि से व्यंग्य मानव तथा जगत की मूर्खताओं तथा अनाचारों को प्रकाश में डालकर उनके उपहास्य तथा घृणोत्पादक रूप पर आलोचनात्मक प्रहार करने में समर्थ एक साहित्यिक अभिव्यक्ति है"।[३]

व्यंग्य को सोद्देश्यपूर्ण विधा मानते हुए हिन्दी व्यंग्य के पितामह हरिशंकर परसाई लिखते हैं, "व्यंग्य जीवन से साक्षात्कार करता है, जीवन की आलोचना करता है, विसंगतियों-मिथ्याचारों और पाखण्डों का पर्दाफाश करता है"।[४]

शरद जोशी के अनुसार, "सेन्स आफ ह्यूमर ही अन्याय अत्याचार और निराशा के विरुद्ध होने से व्यंग्य में अभिव्यक्त होता है"।[५]

रवीन्द्र त्यागी के अनुसार, "समाज की कुरितियों का भाण्डाफोड़ करने का कार्य प्रमुखतः व्यंग्य द्वारा ही हो सकता है। यदि उसमें हास्य भी उत्पन्न हो जाता है तो रंग और तेज हो जाता है।[६]

डॉ. शेरजंग गर्ग ने व्यंग्य को परिभाषित किया है- "व्यंग्य एक ऐसी साहित्यिक, अभिव्यक्ति या रचना है जिसमें व्यक्ति तथा समाज की कमजोरियों दुर्बलताओं, कथनी एवं करनी के अन्तरों की समीक्षा अथवा निन्दा भाषा को टेढ़ी भंगिमा देकर अथवा कभी-कभी पूर्णतः सपाट

१. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी - हिन्दी का स्वातन्त्रयोत्तर हास्य और व्यंग्य, पृष्ठ ५६
२. श्रीलाल शुक्ला - मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ - पृष्ठ ९-१०
३. डॉ. वीरेन्द्र मेहदी रत्ताँ - आधुनिक हिन्दी साहित्य में व्यंग्य - पृष्ठ ८
४. हरिशंकर परसाई - सदाचार का ताबीज, पृष्ठ - १०
५. शरद जोशी - मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, पृष्ठ - ६
६. रवीन्द्र त्यागी - नई कहानियाँ, फरवरी, १९७०

शब्द में प्रहार करते हुए की जाती है। वह पूर्णतः अगम्भीर होते हुए भी गम्भीर हो सकती है। निर्दय लगते हुए दयालु हो सकती है प्रहारात्मक लगते हुए तटस्थ लग सकती है, मखौल लगती हुई बौद्धिक हो सकती है, अतिश्योक्ति एवं अतिरंजना का आभास देने के बावजूद पूर्णतः सत्य हो सकती है। व्यंग्य में आक्रमण की उपस्थिति अनिवार्य है।"[१]

व्यंग्य लेखक नरेन्द्र कोहली के शब्दों में "कुछ अनुचित, अन्याय पूर्ण, अथवा गलत होते देखकर जो आक्रोश जगता है, यदि वह काम में परिणित हो सकता है तो अपनी असहायता में वक्र होकर जब अपनी तथा दूसरी की पीड़ा पर हँसने लगता है तो विकट व्यंग्य होता है, पाठक के मन को चुभलाता-सहलाता नहीं, कोड़े लगाता है। अतः सार्थक और सशक्त व्यंग्य कहलाता है"।[२]

शंकर पुणताबेकर के मतानुसार, "व्यंग्य विसंगतियों की तीखी अभिव्यक्ति है। युग की विसंगतियाँ हमारे चारों ओर के यथार्थ जगत् से, वैदग्ध्य इन विसंगतियों को वहन करने वाले शैली सौष्ठव से तथा तीखापन, विसंगति एवं वैदग्ध्य के चेतना पर पड़ने वाले मिले-जुले प्रभाव से सम्बन्धित है।[३]

उर्दू-व्यंग्यकार गुलाम अहमद फुरकत के अनुसार, "व्यंग्य का वास्तविक उद्देश्य समाज या सोसाइटी की बुराइयों, कमजोरियों और त्रुटियों को हँसी उड़ाकर पेश करना है। मगर इसमें तहजीब का दामन मजबूती से पकड़े रहने की जरूरत है। वरना वंग्यकार भड़ैती की सीमाओं में प्रवेश कर जायेगा।"[४]

गुजराती के प्रमुख व्यंग्यकार विनोद भट्ट ने व्यंग्य की परिभाषा इस प्रकार की है "(व्यग्य लिखने वाली) इस कलम की खूबी यह है कि यह गुदगुदाती भी है, चिकोटी भी काटती है,

---

१. डॉ. शेरजंग गर्ग - स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी कविता में व्यंग्य - पृष्ठ-२८

२. नरेन्द्र कोहली - मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ - पृष्ठ - ८

३. शंकर पुणताम्बेकर - कैक्टस के काँटे - दो शब्द

४. तंजो-मजाह, पृष्ठ-१७-१८

और जरूरत पड़ने पर नश्तर भी लगाती है; यह वह कलम है जिससे व्यंजना टपकती है, सरलता बोलती है, मार्मिकता हँसती है, और सूक्ष्मता झलक मारती है।"[१]

मराठी व्यंग य के पितामह श्रीपाद कृष्ण कोल्हटकर के अनुसार, "गलतियों और कमजोरियों को स्वीकार करने का मानसिक धैर्य जिनमें नहीं है, अपनी हर बुरी-भली रूढ़ि को येनकेन प्रकारेण दूसरों के गले उतारने का जो प्रयत्न करते रहते हैं, और देश की वर्तमान दुर्दशा को देवगति के मत्थे मढ़कर जो निश्चिन्त हो जाना चाहते हैं, उन पाखण्डी पोंगा पंडितों की खबर लेना और इस बहाने रूढ़ियों की अनिष्ठता के प्रति पाठकों को जागरुक करना ही व्यंग्य का उद्देश्य है। समाज को दुलारकर सुधार के अनुकूल बनाना नहीं अपितु छेड़कर और चिढ़ाकर स्वदोष-निरीक्षण के लिए प्रेरित करना है।[२]

मराठी समीक्षक रा. प्र. कानिटकार ने व्यंग्य के सम्बन्ध में अपनी धारणा इस प्रकर से व्यक्त की- "व्यंग्यात्मक साहित्य समाज के हास्यास्पद पहलू को इस प्रकार प्रस्तुत करता है कि पाठकों को उसका तीव्र विरोध करने की इच्छा हो उठे।"[३]

व्यंग्य सम्बन्धी पाश्चात्य परिभाषाएँ

ऑक्सफोर्ड इंगलिश डिक्शनरी के अनुसार- 'व्यंग्य वह रचना है जिसमें प्रचलित दोषों अथवा मूर्खताओं का कभी-कभी अतिरंजना के साथ मजाक उड़ाया जाता है। उसका अभीष्ट किसी व्यक्ति विशेष अथवा व्यक्तियों के समूह का उपहास करना होता है और इस प्रकार जो एक व्यक्तिगत आक्षेप लेख जैसा होता है।[४]

---

१. सुना-अनसुना, अनुवादक की कलम से, पृष्ठ-६

२. सुदामा के चावल- श्रीपाद कीष्ण कोल्हटकर, पृष्ठ-१७-१८

३. वही- भूमिका, पृष्ठ-१५

४. ऑक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी - खण्ड - ९, पृष्ठ-११९

एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका के अनुसार, "व्यंग्य की साहित्यिक तथा ग्राह्य परिभाषा हास्यास्पद अथवा निन्दक तथ्यों की मनोरंजक अथवा घृणोत्पादक अभिव्यक्ति के रूप में दी जा सकती है, बशर्ते उस अभिव्यक्ति में हास्य-तत्व साहित्यिक रूप में स्पष्टतः परिलक्षित हो। हास्य के अभाव में व्यंग्य गाली का रूप धारण कर लेता है, तथा साहित्यिकता के बिना वह विदूषकी ठिठोली मात्र बनकर रह जाता है।"[१]

ए. निकॉल के अनुसार, "व्यंग्य इस सीमा तक कटु हो सकता है कि वह किंचित भी हास्य जनक न हो। व्यंग्य बहुत तीखा वार करता है। उसमें कोई नैतिक बोध नहीं होता है। उसमें दया, विनम्रता और उदारता का भी लेख नहीं होता। वह पूरी निर्दयता से प्रहार करता है। वह युग की समूची परिस्थितियों की धज्जियाँ किसी को भी क्षमा किया बगैर उड़ता है।"[२] स्विफ्ट ने व्यंगय को इन शब्दों में व्यक्त किया है, "व्यंग्य वह दर्पण है जिसमें झाँकने वाले को भी अपनी छाया के अतिरिक्त और सबका प्रतिबिम्ब दिखलायी पड़ता है। यही कारण है कि व्यंग्य का समाज में इतना हार्दिक स्वागत किया जाता है कि कम ही लोग इससे रुष्ट होते हैं। रुष्ट वही होते हैं जो बदलना या सुधरना नहीं चाहते और अपने निहित स्वार्थों को ही सिद्ध करने में तल्लीन रहते हैं।"[३]

बनार्ड शॉ के अनुसार, "मूर्खों को प्रोत्साहन देने के बजाय हास्य द्वारा उन्हें ध्वस्त करने तथा विकृति को विनोद-भाव से न स्वीकारने वालों पर ही संसार की मुक्ति निर्भर करती है।"[४]

व्यापक-फलक की ओर इंगित करते हुए जॉन. एम. बुलेट लिखते हैं कि – "व्यंग्य शब्द में मानव तथा उसके आचरण की समस्त त्रुटियों पर किया गया प्रहार निहित होता है।"[५]

---

१. इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका

२. एनइन्ट्रोडक्शन टु ड्रामेटिक थ्योरी, पृष्ठ – २१२

३. वैंटल ऑफ बुक्स – स्विफ्ट, पृष्ठ–६

४. स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी व्यंग्य निबन्ध – शशिमिश्र, पृष्ठ – ६

५. जोनाथन स्विज्ट एण्ड दि एनाटामी आफ सटायर– पृष्ठ ३९– जान. एम बुलेट

ड्राइडन के अनुसार, "व्यंग्य का वास्तविक उद्देश्य शोधन द्वारा दोष सुधार है।"

पौर्वात्य एवं पाश्चात्य समीक्षकों के मंतव्यों से एक बात सामने आती है वह यह कि व्यंग्य समाज की विद्रुप्ताओं से उत्पन्न वह रचना है जो समाज की बुराइयों पर प्रहार करके उन्हें समाप्त करने की कोशिश करती है। व्यंग्य, कथनी और करनी अन्तराल से उत्पन्न वह अभिव्यक्ति है जो विकृतियों को समाप्त कर आदर्श पक्ष का आग्रह लिये होती है। यह रचनाकारों की वह रचनात्मक दृष्टि है जो बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय के लक्ष्य से प्रेरित होती है। व्यंग्य कहीं निर्मम चिकित्सक की भूमिका में होती है तो कहीं गम्भीर दार्शनिक चिन्तक की भूमिका में।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि व्यंग्य सामाजिक मूल्यों के विघटन, विद्रूपताओं विसंगतियों, संत्रास, पाखण्डों, विडम्बनाओं, तथा कथनी करनी के अन्तराल से उत्पन्न वह साहित्यिक विधा है जो लक्ष्य को भेद करके तिलमिला देती है। व्यंग्य अपने मूल में आदर्श और बहुजन हिताय बहुजन सुखाय की भावना समाये रहता है। व्यंग्य वर्तमान जीवन के अधूरेपन क्षेभ की आक्रोश पूर्ण अभिव्यक्ति है।

व्यंग्य परम्परा

मानव-इतिहास में सभ्यता का विकास वह युग है जो मानव को अन्य प्राणियों से अलग करता है। इसी समय शान्तिपूर्ण जीवन जीने के उद्देश्य से मानव ने आपसी संघर्ष छोड़कर समाज का निर्माण किया। मानव की मांगों और आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर मनीषियों ने तर्क-वितर्क, औचित्य-अनौचित्य का विवेचन करके, मान्यताओं, विधि-विधानों तथा नियमों की समाज में स्थापना की। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी होने के कारण इनका पालन करता है।

विकास के चरण आगे बढ़ते जाते हैं लेकिन सामाजिक मूल्य और मान्यताएँ उसी गति से अपने को बढ़ा नहीं पाते। परिणम स्वरुप विभिन्न प्रकार की विकृतियों और विसंगतियों का जन्म होता है। इन्हीं विसंगतियों और विकृतियों को प्रगतिशील समाज के प्रतिनिधि, समाजसेवी, साहित्यकार और राजनीतिज्ञ समाप्त करने का अपने-अपने साधनों द्वारा प्रयास करते हैं। साहित्यकार अपनी लेखनी द्वारा तथा समाज सेवी अपने कार्यों द्वारा सुधार के लिए प्रेरित करता

रहा है। लेकिन अभिव्यक्ति जितनी स्वतन्त्रता आज मिली है पहले इतनी कभी नहीं थी। अभिव्यक्ति की इसी स्वतन्त्रता ने क्रमशः साहित्यिक व्यंग्य का रूप धारण कर लिया।

व्यंग्य की परम्परा को चार मुख्य भागों में बाँट कर अध्ययन किया जा सकता है।

संस्कृत व्यंग्य-परम्परा

संस्कृत काव्य में बाणभट्ट की 'कादम्बरी' एवं 'अमरुशतक' में 'परिहासपूर्ण संभाषण' के अर्थ में वक्रोक्ति का प्रयोग मिलता है जो व्यंग्योक्ति के समानान्तर अर्थध्वनित करता है। इसी प्रकर भोजदेव ने वक्राक्ति, रसोक्ति एवं स्वभावोक्ति तीन भागों में समस्त वाङ्मय को बाँट दिया हे- रसोक्ति, सौन्दर्य परक दृष्टि के लिए है, वक्रोक्ति समूची व्यंग्यपरकता को प्रकट करने के लिए, तथा स्वभावाक्ति को केशव ने सजाकर कहने की बात कही है। इसी प्रकार आचार्य दण्डी ने 'दशकुमार चरितम्' में देवता, लालची ब्राह्मण, चोर, वेश्याएं, जुआरी आदि पर प्रहार किया है। तो कथासरित सागर में, कहानियों के द्वारा समाज के पाखण्डियों, धूर्तों एवं बेवकूफों को हँसी का पात्र बनाया गया है।

प्रहसन के सन्दर्भ में इसकी चर्चा पहले की जा चुकी है।

पाश्चात्य व्यंग्य परम्परा

पाश्चात्य साहित्य में व्यंग्य का प्रादुर्भाव ग्रीस और रोम के साहित्यकारों द्वारा हुआ। ग्रीस के वायन और एरिस्टोफेस तथा रोम के इनियस ने मोनोलॉग (स्वगत-कथन, एकालाप) शैली में समाज की विद्रूपताओं विसंगतियों को प्रकट करना प्रारम्भ किया। लूसीलियस ने इसे संरक्षण दिया तो हॉरेस ने इसको नैतिक गुणों से सुसज्जित किया। परसियस ने अपने स्ट्रोइक शैली से प्रहारात्मक क्षमता प्रदान की जुवैनल और क्लोडियन ने अपने स्वगत कथनों के माध्यम से तत्कालीन समाज को नयी स्फूर्ति प्रदान की। ईसा की दूसरी शताब्दी में लूशियन ने गद्य-रूप में इसे अपनाने का प्रयोग किया। ईसाई धर्म के प्रारम्भिक काल में 'स्वगत-कथन' का स्थान उपदेशात्मक तथा नैतिकतापूर्ण कथनों ने ग्रहण कर लिया।

सत्रहवी शताब्दी (पुर्नजागरण काल) में सांस्कृतिक विषयों को लेकर अनेक विद्वानों ने जैसे–इटली के विंसीग्वेश, वरनी, तथा एरिस्टो, फ्रांस के रैगरीय इंग्लैण्ड के स्कैलटन, वापूट डौपने, हाल तथा मारसटन आदि ने व्यंग्य लेखन कार्य किया। लेकिन इनकी शैली पूर्व विद्वानों से अलग थी।

स्वगत–कथन का कोई निश्चित स्वरूप नहीं है। यह समसामयिक परिस्थितियों के अनुसार स्वतः प्रतिबिम्बित होता है। स्वगत कथन की प्रेरणा घटना, संवाद या भाव कुछ भी हो सकता है। हास, परिहास, बुद्धि चातुर्य, ठिठोली, पैरोडी, विरोधाभास, विडम्बना, आदि द्वारा यह अनुप्राणित होता है। हास्य की भाँति स्वगत कथन का भी विषय पूर्व परिचित होता है। स्वगत–कथनकार व्यक्तिगत चुटकुलों, सामयिक घटनाओं, प्रचलित चर्चाओं, चरित्र चित्रण, कथा तथा आख्यायिकाओं द्वारा अपने विषय की व्याख्या करता है। इसकी भाषा सरल, चालू और शरारत भरी होती है। इसकी शैली चंचल, चुटीली प्रताड़ना युक्त और चेताने वाली होती है। स्वगत–कथन न भाषण है न उपदेश। यह विषय–वस्तु की समस्या को प्रकाशित करता है, व्याख्या करता है। समस्या पर आक्षेप और कटाक्ष करता है। लेकिन ये सब हास्य का पुट लिए करता है ताकि पाठक या श्रोता द्वारा कथन ग्रहणीय हो सके।

लार्ड बायरन ने अपने ग्रन्थ 'आवर्स ऑफ आइडलनेस' के आलोचकों को स्वगत–कथनों के माध्यम से उत्तर दिया। इस परम्परा को आगे बढ़ाया विक्टर ह्यूगो ने, जो अपनी रचनाओं में स्वगत कथनों के माध्यम से व्यवस्था की पोल खोली। दक्षिण अफ्रिकी साहित्यकार कैंपबेल ने अपनी कविता 'दियो रजीड' में स्वगत कथनों का भरपूर प्रयोग किया। हेनरी मिलर ने 'ट्राफिक आफ कैंसर' तथा 'ट्रैफिक और कैपरीकॉन' में इस शैली का प्रयोग किया। इस प्रकार प्रारम्भिक पाश्चात्य व्यंग्य का पार्दुभाव स्वगत–कथनों से ही होता प्रतीत होता है।

इसी स्वगत कथन ने आगे चलकर एक मुखौटा पहन लिया। जिसके माध्यम से हास्य से लिपटी बात को छोड़कर उसे धीर, गम्भीर, शिष्ट ढंग से, घृणा, आवेश और भर्त्सना को व्यक्त करने की छूट मिल गयी। इसे नाम दिया गया– 'विडम्बना'। यह स्वगत कथन का ही एक प्रकार

है। विडम्बना में बात धीर गम्भीर ढंग से कही जाती है लेकिन पाठक या श्रोता स्वयं सोचने को विवश हो जाता है। हिन्दी साहित्य में बालमुकुन्द गुप्त का 'शिव शम्भू के चिट्ठे' तथा भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की "भारत दुर्दशा" इसी शैली के अन्तर्गत आते हैं।

स्वगत-कथन को आगे **विडम्बना** और वक्रोक्ति के रुप में मान्यता मिली। जहाँ लेखक ने गंभीर, धैर्यपूर्ण चेहरा पहनकर विकृतियों और विसंगतियों को व्यक्त किया है। इस प्रकार से **विडम्बनाकार** और वक्रोक्तिकार धनुष की भाँति झुककर तीर चलाते हैं। जिससे लक्ष्य को भेदने में अधिक सफलता मिलती है। पाश्चात्य साहित्य में डिनेयल डिफो, स्विफ्ट तथा ऐरिस्टोफेंस प्रमुख विडम्बनाकार (आयरनीकार) हुए हैं। सुकरात प्रमुख विडम्बनाकार हुआ। जिसने मोनोलॉग द्वारा समाज की सच्चाइयों को सबके सामने लाकर खड़ा कर दिया। जिसके कारण उसे जहर पीना पड़ा।

अरस्तू के अनुसार, "विडम्बना एक हास्यास्पद शालीनता है, स्वयं का अवमूल्यीकरण एवं प्रतिकूलीकरण है, यह अज्ञानता और दुर्बलता की व्याख्या झीने आवरण में से करती है और साथ ही साथ उस आवरण को उठा देने की सद्भावना भी इसमें रहती है।[१] वर्तमान व्यंग्य साहित्य में विडम्बना का प्रयोग इसी अर्थ में किया जाता है। जिसकी अनुभूति सूक्षम और गहरी होती है जो लक्ष्य को सीधा सादा वार न करके वार की गर्जना से उसे हकबका देती है।

इसके अलावा अरस्तू ने त्रासदी और कामदी को काव्य के रूप में स्वीकार किया। अरस्तू के अनुसार "कामदी का लक्ष्य होता है, यथार्थ जीवन की अपेक्षा हीनतर चित्रण और त्रासदी का अर्थ होता है 'भव्यतर चित्रण'।[२] त्रासदी नाटकीय अन्दाज में प्रस्तुत किया जाता है। इसमें भय और करुणा को उभार कर मानव मन का विरेचन किया जाता है। कामदी गम्भीरता के

---

१. गिल्बर्ट हाइट – दि एनाटॉमी आफ सटायर, पृष्ठ – ४९

२. अरस्तू – काव्य शास्त्र, पृष्ठ – ११

साथ प्रस्तुत की जाती है। इसके चरित्रों की सृष्टि जीवन के निरीक्षण एवं अनुभव से प्राप्त होती है। कामदी का हास्य पूर्णतया सामाजिक स्तर पर होता है जो परिहास के उन्मुक्त क्षणों में भी सोचने को विवश कर देता है।

कामदी में यथार्थ स्थितियों का अतिरंजनात्मक चित्रण किया जाता है। व्यंग्य में कामदी को उस स्तर का स्थान नहीं दिया जाता है। कामदी और त्रासदी मिलकर व्यंग्य का स्वरूप निर्मित करते हैं क्योंकि व्यंग्य में हास्य और गम्भीर्य दोनों का बराबर अनुपात होता है।

भारतीय भाषाओं में व्यंग्य परम्परा

विश्व की सबसे समृद्ध तथा भाषा वैज्ञानिक आधार पर खरी भाषा 'संस्कृत' की परम्परा को दिखलाया जा चुका है। जहाँ 'भोजप्रबन्ध' 'सूक्ति-मुक्तावाली' 'हितोपदेश' 'महाभारत', 'सुभाषित-संग्रह' 'अन्योक्ति विलास' 'अन्योक्तिशतक' आदि काव्यों में व्यंग्य की धारा प्रवाहित होती रही है।

अन्य भारतीय भाषाओं में व्यंग्य परम्परा

गुजराती भाषा में व्यंग्य को 'कटाक्ष' के नाम से जाना जाता है। 'आड़कतरी रिते सूचित' कटाक्ष का सूक्ति रूप है, जिसका अर्थ होता है – अनुचित प्रचलित रीतिरिवाजों पर उपहास, प्रहार करने वाला। गुजराती के मध्यकालीन कवि अखा ने 'छप्पा' में कबीर की तरह धार्मिक कर्मकाण्डों पर जमकर प्रहार किया। यही 'कटाक्ष' आधुनिक काल में व्यंग्य के रूप में विकसित हुआ। आधुनिक व्यंग्यकारों में ज्योतिन्द्र दबे, विनोद भट्ट, मधूसूदन पारेख, दामु संगापी, बकुल त्रिपाठी, हरीश नायक, रमेश भट्ट, नवनीत सेवक, चेतन रावल, सारंग बारोट, कृष्ण पंडित नसीर इस्माइली, रम्भा बहन गाँधी, निरंजना त्रिवेदी, आदि प्रमुख व्यंग्य के हस्ताक्षर है।

सिन्धी भाषा में व्यंग्य को 'तुंज' कहा जाता है। तुंज के अर्थ में मल भवनानी ने 'उपहास' तथा हैदर वक्ष जलोई ने 'हुजती' शब्द का प्रयोग किया है। सामाजिक बुराइयों, गरीबी, दहेज प्रथा, महाजनी शोषण पर किशनचन्द्र तीरथदास खत्री, 'बेवस', श्री हरि दिलगीर, श्री दुंदराज

दुःखदयाल, पद्मश्री राम पंजवानी, श्री गोविन्द भाटिया, आदि लोगों ने 'तुंज' लिखकर प्रहार किया। आधुनिक व्यंग्यकारों में हरीश वासवानी, डॉ. दयाल आशा, कृष्ण लाल बजाज, श्री एम.कमल, श्री पोपटी हिराचाँदनी, श्री अर्जुनशाद मिरचाँदनी, श्री एम. जे. उत्तम चन्द्र, सुन्दरी उत्तम चंद्राणी, श्री आनन्द गोलानी, कीरत बाबानी, श्री कृशन खटवाणी, श्री भयाराम कुकरेजा, प्रो. मंगाराम मलकारी तथा प्रो. सतीश हांडा आदि प्रमुख नाम हैं।

मराठी साहित्य में "सटायर" को व्यंजित करने वाला शब्द "उपरोध" है। तर्कतीर्थ श्री लक्षमण, शास्त्री जोशी ने मराठी विश्व कोश भाग दो में 'उपरोध' का अर्थ वक्रोक्ति, विडम्बना, उपहास आदि अर्थों के लिए किया है। इसी अर्थ में उपरोध लिखने वालों में तुकाराम के. अभंग, श्री शिवराम पन्त परांजपे, विष्णु शास्त्री चिपणूलकर, श्री श्रीपाद कोल्हटकर, श्री राम गणेश गडकरी, श्री माधव ज्यूलियन, श्री चन्द बाँदेकर, श्री केशवसुत, श्री गंगाधर गाडगिल, श्री पु. ल. देशपाण्डेय श्री बसन्त सबनीस, श्री प्र. के. अत्रे आदि प्रमुख नाम हैं।

इनकी रचनाओं में धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों के ऊपर व्यंग्य किया गया है। पु. ल. देशपाण्डे ने 'भी नाहीं बिसरलो' उपरोधकृति में अन्तर्राष्ट्रीय नीति के सन्दर्भ में लिखा है कि दिल्ली ला बड़े पाहणे अन्तर्राष्ट्रीय कथा चर्चा करतात है, देखील भला अजून सतावणारे कोई आहे समोर फुल दाड़या आणि सात आठ पदार्थानी भर लेली काचपात्रे' आदि। इसमें बातें कड़वी होने वाली हैं लेकिन पकवान मीठे हें। इसी विसंगति के कारण यह 'उपरोध' तीखा है।

तेलगू भाषा में कबीर के समान प्रहारक क्षमता वाले भद्र भूपाल ने अपने दो ग्रन्थों 'नीतिसार मुक्तावली' तथा 'सुमित शतकम्' में व्यंग्यपरक रचनाएं की हैं इसमें इन्होंने नीतिपरक उपदेशों के माध्यम से स्वार्थी मनुष्य की प्रवृत्ति पर प्रहार किया है। तेलगू साहित्य के कवि बेमन्न की रचनाओं में सामाजिक व्यंग्य अधिक मिलता है। चिलकमर्ति लक्ष्मी नरसिंहम की 'गणपति' व्यंग्य पूर्ण कृति है जिसमें समाज को सुधारने की दृष्टि से प्रहार किया गया है।

आधुनिक समय में ममिडिपारित कामेश्वर राव ने अपनी कृतियों 'कालक्षेपमु' 'अवुनु', 'अप्युड' तथा 'इप्पडु' में मानव समाज की विकृतियों तथा कमजोरियों पर मार्मिक प्रहार किया है। तादिगिरि पोतराजु ने अपने ग्रन्थ 'प्रमाण-पत्र' में गरीब लेगों की समस्याओं पर व्यंग्य के माध्यम से विचार किया है। तेलगू साहित्य का व्यंग्य हिन्दी साहित्य के व्यंग्य की भाँति विषय-वस्तु की दृष्टि से बहुआयामी होता जा रहा है।

बंगला साहित्य में 'सटायर' अर्थ के लिए 'व्यंग' 'उपहास' 'प्रहसन' आदि शब्दों का प्रयोग होता है। 'व्यंग्य' शब्द आधुनिक काल में अधिक प्रचलन में है। यहाँ व्यंग्य का विषय, सामाजिक बुराइयाँ, धार्मिक आचार-विचार तथा ब्रिटिश कालीन पद लोलुप भारतीय राजा या राजनेता रहा है। बंगला साहित्य व्यंग्य परक रचनाओं की दृष्टि से समृद्ध है। जहाँ स्वतन्त्रता पूर्व और स्वतंत्रता पश्चात् सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, व्यंग्य रचित किये गये। श्री माइकल मधुसूदन दत्त ने 'बुड़ो' 'शालिकैल घाड़ेरो' एकेई कि बले सभ्यता में श्री डी. एल. राय 'वाह्यस्पर्श', 'पुर्नजन्मा' में, बंकिम चन्द्र 'कमला कोतेर दफ्तर', 'गुडेर', 'जीवन', 'भरित', 'लोकरहस्य' आदि में, व्यंग्य परक रचनाएं की हैं। रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने 'चिरकुमरसभा' युक्ति उपाय 'बेकुठेरखाता', 'नतुन अवतार' में शिवराम चक्रवर्ती ने विश्वपतिर, 'अश्वमेघ' में, कुमारेश घोष ने 'एकवर अनेक कणे' दाढीन कुमार खोला आदि में, संजीव चट्टोपाध्याय 'सोफा कम बेड', 'लोटा-कम्बल' आदि में अपने व्यंग्य वाणों से बुराइयों, विसंगतियों को भेदने का काम करते हैं।

मलयालम में श्री कंचन नंबियार, तमिल में श्री चो के नाम व्यंग्य लेखन के लिए जाना जाता है। इन लोगों ने राष्ट्रीय और अपने-अपने परिवेशगत सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, विद्रूपताओं, विसंगतियों को अपने व्यंग्य का विषय बनाया। इनके व्यंग्यों से इस समाज की रूढ़ियों, विडम्बनाओं को कम करने में सहायता मिली।

उर्दू में 'व्यंग्य' के लिए 'फकारियां' शब्द का प्रयोग हुआ है। व्यंग्य-काव्यों में अकबर इलाहाबादी का नाम उर्दू साहित्य में शीर्ष पर है। उर्दू के परवर्ती व्यंग्यकारों ने 'फकारिया' के

अतिरिक्त कटाक्ष, फिकरा, उपहास, आक्षेप, वक्रोक्ति आदि शब्दों को 'व्यंग्य' के अर्थ में प्रयुक्त किया। शुरु में उर्दू व्यंग्य ने धर्म को अपना विषय बनाया। शफीबुर्रहमान ने अपनी कृति 'रिव्यू' में पाश्चात्य की अन्धी नकल को अपना निशाना बनाया।

उर्दू के प्रमुख व्यंग्यकारों में अजीमबेग चुगताई, श्री गुलाम अब्बास, इम्तियाज अलीताज, सादत हसन मंटो, सलमा सिद्दकी, फ़िक्र तोसवी ने क्रमशः अपनी रचनाओं 'पट्टी', 'वंश वृक्ष', 'चचा छक्कन से झगड़ा चुकाया', 'प्रगतिशील कब्रिस्तान', 'सिकन्दरनामा', 'खुदा की जन्नत' में व्यंग्य के माध्यम से तल्खी प्रहार किया है। शौकत धानवी ने 'स्वदेशी रेल' नामक रचना में प्रशासनिक व्यंग्य किए हैं। जैसे– *"मगर बाबू साहब अभी परसों तक तो एक रुपयो तेरह आना किराया था। आज क्या हो गया जो एकदम बढ़ गया ? कल की बात के साथ आज देश हमारा है, हमको स्वराज मिल गया है।"*[१]

इसमें उस प्रशासनिक व्यवस्था पर व्यंग्य किया गया है जहाँ स्वराज का अर्थ मनमानी करने के लिए मिली स्वतन्त्रता से लिया गया है। इसी प्रकार मिर्जाफर तुल्ला बेग ने 'मजामीने फरहत' 'मुर्दावदस्ते जिन्दा' आदि में 'फकारिया' लिखा है। उर्दू के मशहूर फकारिया कार कृश्न चन्दर ने 'बसवाहक' तथा 'चक्रपाणि' में मनमौजी कारोबार की, आज की राजनीति की तथा ऊँची सोसायटी की खिल्ली उड़ायी है। रसीद अहमद सिद्दकी ने भी अपनी रचनाओं में तीखे व्यंग्य किये हैं। इब्राहीम जबीस ने 'ऊपर शेरवानी, अन्दर परेशानी', 'नेकी कर थाने में जा' आदि में तीखे व्यंग्य बाण छोड़े हैं। कन्हैया लाल कपूर ने अपनी रचनाओं में शिक्षा पद्धति, पारिवारिक समस्या, धार्मिक अन्ध विश्वास रिश्वत आदि पर व्यंग्य किया है। मुश्ताक अहमद युसुफी ने मूलतः शिक्षा पद्धति पर व्यंग्य किये हैं। मुजतबा हुसैन अपनी रचनाओं 'बिल आखिर', 'आओ जापान चलें', 'हैदराबाद बाई नाइट' आदि में जीवन के विभिन्न कोणों पर तीखा व्यंग्य किया है।

---

१. सं. रवीन्द्र त्यागी – उर्दू-हिन्दी हास्य व्यंग्य, पृष्ठ ६९

इस प्रकार संक्षेप में कहा जा सकता है कि संस्कृत, मराठी, सिन्धी, गुजराती, बंगला तथा तेलगु आदि भाषाओं में व्यंग्य अभिव्यक्ति के माध्यम रूप में, भाषा शैली रूप में आया हुआ है। भारतीय भाषाओं में व्यंग्य निबन्ध कहानी कविता, उपन्यास, नाटक, एकांकी, आदि के माध्यम से प्रकट होने के कारण स्वायत नहीं हो पाया है। लेकिन हिन्दी में व्यंग्य-विद्या का विकास एक मौलिक आयोजन, नियोजन और प्रयोजन हैं व्यंग्य विधा के रूप में अन्य भारतीय भाषाओं में अप्राप्त है। जबकि हिन्दी में स्वातन्त्रयोत्तर काल में 'व्यंग्य विधा का पौधा वट-वृक्ष बन गया।

व्यंग्य के तत्व

मानव की विचार शक्ति बौद्धिकता, विवेकशीलता और हृदय की कोमल संवेदनाएं अपनी आवश्यकता के अनुसार साहित्य को नया स्वरूप देती है। मानव मन की यात्रा का मार्ग सतत् गतिशील है। व्यंग्य उसी यात्रा का एक चरण है। श्री दिनकर सोनवलकर के अनुसार "जब तक मनुष्य होने का एहसास बाकी है। जब तक ईमानदारी और न्याय के लिए लड़ने की कचोट उठती है, जब तक हम पूरी तरह मुर्दा नहीं हो गये हैं, व्यंग्य लिखे जाते रहेंगे।"[१]

व्यंग्य के बिन्दुओं को निम्नलिखित तत्वों के अन्तर्गत दिखलाया गया है।

१. **विसंगतियों का कथ्य** – व्यंग्य का विषय-क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत होता है क्योंकि इसका सरोकार समाज के सभी अंगों से होता है। व्यंग्य सामाजिक पीड़ा की व्यंग्यकार द्वारा की गयी मार्मिक और साहित्यिक अभिव्यक्ति है। इसके लिए किसी राजा का आश्रय नहीं चाहिए और न किसी सुन्दरी की रूप माधुरी। व्यंग्य का मूल प्रतिपाद्य मनुष्य की दुर्बलताएँ हैं और जहाँ भी मनुष्य है, वहाँ उसकी दुर्बलताएं मुँह चिढ़ा रही हैं। मनुष्य की इच्छाओं-कामनाओं और

---

१. डॉ. श्याम सुन्दर घोष – व्यंग्य क्या, व्यंग्य क्यों ? पृष्ठ ५५

कर्म निष्ठाओं में जहाँ आचरण की प्रतिकूलता दिखलायी पड़ती है, व्यंग्यकार का कार्य वहीं से प्रारम्भ होता है।

जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में व्याप्त विसंगतियाँ, रचनाकार की चेतना को झकझोरती है। जिससे वह लेदानी, चिन्तन, अथवा तूलिका के माध्यम से व्यक्त करने को प्रेरित होता हैं जीवन-जगत में फैली विसंगतियों से रचनाकार आँख नहीं चुराता है बल्कि उससे आँख मिलाकर उसके वास्तविक रूप को अपेक्षाकृत अधिक स्पष्ट रूप देने का प्रयास करता है।

व्यक्ति और समाज द्वारा व्यवहार के जो मान्य नियम हैं, उसके विपरीत आचरण ही विसंगति है। हास्य और व्यंग्य के बीच एक अन्तर यह भी है कि हास्य व्यक्ति की शारीरिक विकृतियों, असंगतियों पर प्रहार करता है, तो व्यंग्य समाज की असंगतियों पर प्रहार करता है। हरिशंकर परसाई इस सन्दर्भ में कहते हैं कि "विसंगति से ज्यादा महत्त्वपूर्ण चीज है, विसंगति का प्रभाव और उसकी व्यापकता। खीसें निपोरना एक बात है दर्द का एहसास करना दूसरी बात।[१] यह तो 'त्वदीयं वस्तु गोविन्दम्' की भावना से समाज को परोस देता है। ये विसंगतियां ही व्यंग्य का कथ्य है। इनकी विविधता और व्यापकता जितनी अधिक होगी, व्यंग्य का प्रभाव, शक्ति एवं कार्य उसी अनुपात में अधिक होगा।

२. **चरित्रांकन का वैशिष्ट्य** - पाश्चात्य व्यंग्यकार स्विफ्ट के अनुसार "व्यंग्य की उत्पत्ति ही चरित्र-चित्रण के लिए हुआ है। क्योंकि व्यंग्य द्वारा चरित्र का प्रतिबिम्ब दिखाये जाने पर व्यक्ति लज्जित होता है। वे लोग जो अपने कर्तव्य पथ पर न आ सके, जिनको न धर्म का भय है, न नैतिकता का मूल्य है और न दण्ड का डर है। हो सकता है ऐसे लोगों का व्यंग्य द्वारा पर्दाफाश किया जाए और वे शर्म खाकर, मानवता को नष्ट करने से रोके जा सकें।

---

१. परसाई रचनावली-भाग छः, पृष्ठ २४१

व्यंग्यकार व्यक्ति या समाज की जीवन की विडम्बनाओं को उद्घाटित करने के लिए ऐसे पात्रों का अवतरण करता है जिससे वह जो कहना चाहता है पूर्णतया स्पष्ट हो सके। व्यंग्य के चरित्र में कभी व्यक्ति तो कभी वह परिस्थितियाँ महत्त्वपूर्ण होती हैं जिनसे विडम्बनाओं का जन्म होता है। व्यंग्य में व्यक्त व्यक्ति भी वर्ग का प्रतिनिधित्व करने लगता है। श्रीलाल शुक्ल का 'राग दरबारी' या परसाई की 'रानी नागफनी की कहानी' में व्यक्त स्त्री पात्र उस व्यवस्था के घोतक हैं जिनके कारण विडम्बनाओं का जन्म हुआ। इन दोनों रचनाओं में तत्कालीन समाज नग्न खड़ा है। श्री मनोहर श्याम जोशी की 'कुरु-कुरु स्वाहा' मे चित्रित स्त्रीपात्र पहुँचेली बाई या तारा झावेरी केवल आधुनिक स्त्री का प्रतिनिधित्व नहीं करती है बल्कि उस व्यवस्था को प्रकट करती है जिनके कारण इनका इस रूप में निर्माण हुआ। बहुधा हमारे मन मस्तिष्क में घृणा पैदा करने वाले पात्र ऐसे व्यवस्था के प्रति आक्रोश जगा जाते हैं। जिनके कारण ऐसे पात्रों का सृजन हुआ।

व्यंग्यकार चरित्रांकन करते समय कभी फंतासी का सहारा लेता है तो कभी पौराणिक कथाओं का। महत्त्व पात्र का नहीं पात्र के माध्यम से कही जाने वाली बात का होता है। लेकिन व्यंग्य में व्यक्ति के माध्यम से जीवनगत सच्चाइयों का चित्रण किया जाता है।

३. **सत्यान्वेषक दृष्टि–** व्यंग्यकार की दृष्टि रूमानी प्रकृति की नहीं होती है, बल्कि वह स्वप्न और कल्पना में भी यथार्थ का चित्रण ही करता चलता हैं व्यंग्य स्वप्न में भी 'परती परिकथा' कहता है। डॉ. शेरजंग गर्ग लिखते हैं कि "जिस रचनाकार की जीवन दृष्टि जितनी सत्यकेन्द्रित तथा उदात्त है, करुण स्थितियों की मार्मिकता को जो रचनाकार जितनी गहरायी से समझेगा, वह उतना ही श्रेष्ठ दर्शी, मर्म स्पर्शी, एवं साहित्यिक व्यंग्य लिख सकेगा। एकांगी, दुराग्रही, अनुदातदृष्टि रखकर कोई व्यंग्यकार श्रेष्ठ और सच्चा व्यंग्य नहीं दे सकता है।[२] व्यंग्य

---

१. डॉ. बरसाने लाल चतुर्वेदी – आधुनिक हिन्दी काव्य में व्यंग्य, पृष्ठ–२०

२. डॉ. शेरजंग गर्ग – स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी कविता में व्यंग्य, पृष्ठ–४५

की मार किसी व्यंगयकार में उसी अनुपात में तीखी होगी जिस अनुपात में वह अपने युग की समस्याओं के प्रति ईमानदार होगा। जिस हद तक वह गुटनिरपेक्ष होगा उसकी रचना में प्रभावोत्पादकता उतनी ही अधिक होगी। इस सन्दर्भ में डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी का अभिमत महत्त्वपूर्ण है, "व्यंग्य का गुट निरपेक्ष चरित्र ही उसकी ईमानदारी और सजगता का परिचायक है। गुट अथवा वर्ग में बँधकर व्यंग्य निरपेक्ष नहीं रह जाता और सापेक्ष व्यंगय अपनी चुभन एवं सार्थकता खो बैठता है"।[१]

व्यंग्यकार व्यक्ति या समूह के प्रति निष्ठावान नहीं होता है। बल्कि उसकी निष्ठा, सामाजिक सत्य और सामाजिक सौन्दर्य के प्रति होती हैं वह किसी को प्रसन्न नहीं करता, बल्कि सत्य को हथियार बनाकर सबसे लड़ने पर आमादा रहता है।

विविधताओं का मिश्रित स्वभाव- व्यंग्य स्वभाव बड़ा विचित्र है। कभी वह एक पक्ष के समर्थन में खड़ा है, पुनः उसी की मूर्खताओं अन्धविश्वासों पर कुठाराघात करता हुआ पाया जाता है। ठीक प्रेमचन्द्र की भाँति जो महाजनी सभ्यता के कारण होरी का शोषण दिखलाते हैं और जगह-जगह होरी के कांइयेपन को भी प्रकट करते हैं। व्यंग्य के लिए व्यक्ति नहीं, वृत्तियाँ प्रधान होती हैं। व्यंग्यकार पुलिस, अफसरशाही, आदि को व्यंग्य का विषय बनाता है। तो उनकी लाचारी, बेवसी को अपने व्यंग्य में सम्मिलित करता है। इस प्रकार विचित्रताओं का उद्घाटन ही उसका उद्देश्य होता है किसी का पक्ष लेना या विरोध करना नहीं।

भाषागत वैशिष्ट्य- सामान्य-साहित्य और व्यंग्य साहित्य के बीच पार्थक्य का महत्त्वपूर्ण तत्व भाषा भी है। व्यंग्य की भाषा सीधी सपाट बयानी ली हुई रहती है। बिना लाग-लपेट व्यंग्यबकार अपनी बात कहना प्रारम्भ करता है। व्यंग्य की भाषा सामान्यतः चालू जुबान की

---

१. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी - हिन्दी का स्वातन्त्रयोत्तर हास्य और व्यंग्य, पृष्ठ-६६

भाषा तथा लोक-भाषा होती है। उपमाएं, मुहावरे इनकी धार को और अधिक तेज करती है। सूक्ति शैली व्यंग्यकार के लिए अच्छी शैली मानी जाती है। थोड़े में बहुत कह देना ही व्यंग्य का विशिष्ट गुण है। अपेक्षा से अधिक विस्तार इसके प्रभाव को नष्ट कर देता है। व्यंग्यकार सामाजिक शब्दावली के प्रयोगों द्वारा उन्हीं के ऊपर व्यंगय करता है। डॉ. बरसाने लाल चतुर्वेदी इस सन्दर्भ में कहते हैं, "उत्तम व्यंग्यकार श्रेष्ठ व्यंग्य की सृष्टि करने के लिए वक्र उक्ति, सन्दर्भ विपयर्य, श्लेष वचन विदग्धता आदि अनेक साधनों का कुशलतापूर्वक प्रयोग करता है"।[१]

फन्तॉसी के प्रयोग- आधुनिक व्यंग्य के लिए 'फंतासी' महत्त्वपूर्ण आयुध है। जिसकी सहायता से वह मुखौटा ओढ़कर सामाजिक सत्य को उद्घाटित करने का काम करता है। श्री हरिशंकर परसाई के अनुसार "लोक कल्पना से दीर्घकालीन सम्पर्क और लोक मानस से परम्परागत संगति के कारण 'फैंटेसी' की व्यंजना प्रभावकारी होती है"।[२]

फैंटेसी के माध्यम से वह संस्मरण और रेखा चित्रकार बनने से बच जाता है। इसके माध्यम से वह जीवन की अतल गहराइयों में उतरने में सक्षम होता है। फैंटेसी के माध्यम से वह पात्रों एवं घटनाओं की कल्पना करता है। लेकिन व्यक्त होने वाला सत्य यथार्थ होता है। 'कल्पना' के फ्रेम में 'यथार्थ की तस्वीर को मढ़ने का कार्य व्यंग्यकार करता है। इसके माध्यम से जहाँ व्यंग्यकार नीरसता को समाप्त करने में सक्षम होता है वहीं इसके द्वारा व्यंग्य की धार और चुभने वाली हो जाती है।

बुद्धि-पक्ष का प्राधान्य- ह्दया की कोमल भावनाओं के स्थान पर व्यंग्यकार बुद्धि के द्वारा अधिक संचालित होता है। कतिपय विद्वान बौद्धिकता को व्यंग्य का प्राण तत्व मानते

---

१. डॉ. बरसाने लाल चतुर्वेदी - आधुनिक हिन्दी काव्य में व्यंग्य, पृष्ठ-८१

२. हरिशंकर परसाई- रानी नागफनी की कहानी-भूमिका

हैं। व्यंग्यकार क्यों और कैसे के द्वारा समाज की विसंगतियों को उभार कर सबके सामने प्रस्तुत करने का कार्य करता है।

मनुष्य मात्र भावनात्मक प्रतिक्रियाओं द्वारा ही संचालित नहीं होता है। जीवन की समस्याएं उसके विवाद विचार को उकसाती है। जिससे बौद्धिक धरातल पर वह उसका समाधान भी ढूंढ़ना चाहता है। व्यंग्यकार घटनाओं, स्थितियों तथा सम्भावनाओं का इस प्रकार बौद्धिक होती है और प्रस्तुति सजीव।

तात्पर्य यह कि व्यंग्यकार केवल दिल से संचालित नहीं होता है वह दिल और दिमाग, दोनों से काम लेता है। कोरी भावुकता नहीं है, तो बौद्धिकता भी नहीं होती है।

संवेदना की पृष्ठभूमि–

व्यंग्यकार का सहज जुड़ाव और लगाव समाज से अधिक होता है। वह समाज की प्रत्येक घटना, परिवर्तन के प्रति संवेदनशील होता है। समाज की विसंगतियां उसे हमेशा जगाती रहती है। जिसके कारण वह 'दुखिया दास कबीर' हो जाता है। व्यंगयकार 'व्यंग्य व्यंग्य के लिए' नहीं लिखता है। बल्कि सामाजिक प्रतिबद्धता के कारण उसकी पीड़ा को व्यक्त करता है। अपने समाज और समाज के प्रति उसकी प्रतिबद्धता उसे व्यंग्यकार के कठिन दायित्व के निर्वहन के लिए प्रेरित करती है।

व्यंग्य तत्व की विवेचना करते हुए प्रसिद्ध विद्वानों ने व्यंगय के तत्व को इस प्रकार निर्धारित किया है–

डॉ. वीरेन्द्र मेंहदी रत्ता ने अपनी रचना 'आधुनिक हिन्दी साहित्य में व्यंग्य के अन्तर्गत व्यंग्य के तीन मूल तत्व को स्वीकार किया है–

(१) आलोचना,

(२) हास्य अथवा वीभत्सता

(३) सुधार।[१]

डॉ. बरसने लाल चतुवेदी व्यंग्य के चार तत्व का उल्लेख करते है–

(१) साहित्यिकता और साहित्य विधा

(२) दूसरो की अथवा अपनी मूर्खताओ की हँसी उड़ाना

(३) व्यंग्य की सृष्टि के लिए हस्य वक्रोक्ति, वचन विदग्धता रूपी उपकरणों का प्रयोग

(४) सुधार करने का उद्देश्य[२]

डॉ. शेरजंग गर्ग व्यंग्य विधा के ऊपर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं कि "व्यंग्य में निहित संवेदनशीलता, गम्भीरता, वौद्धिकता, सांकेतिकता एवं तटस्थ विश्लेषण ही व्यंग्य को सार्थक श्रेष्ठ तथा गहरा बनाते हैं।[३]

डॉ. बापूराव देसाई व्यंग्य-विधा का मानदण्ड निम्न तत्वों के द्वारा निर्धारित करते हें– (१) मीठा प्रहार, (२) चरित्र-चित्रण, (३) सुधार, (४) विविध गुण, (५) देश काल तथा वातावरण, (६) शैली।"[४]

व्यंग्य के भेद

डॉ. शेरजंग गर्ग के अनुसार व्यंग्य के दो भेद वैयक्तिक और निर्वैयक्तिक है। वैयक्तिक

---

१. डॉ. वीरेन्द्र मेंहदी रत्ता– आधुनिक हिन्दी साहित्य में व्यंग्य– पृष्ठ १५-१६

२. डॉ. वरसाने लाल चतुर्वेदी– मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ– भूमिका

३. डॉ. शेरजंग गर्ग– स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी कविता में व्यंग्य, पृष्ठ–६१

४. डॉ. बापूराव देसाई – हिन्दी व्यंग्य विधा शास्त्र और इतिहास, पृष्ठ–२२

व्यंग्य के भी दो रूपों का निर्धारण गर्ग जी ने किया है, आत्म व्यंग्य और परस्थ व्यंग्य। निर्वैयक्तिक व्यंग्य को भी दो रूपों में बाँटा गया– स्थितियों की विडम्बना को उभारने वाला व्यंग्य तथा दैवी एवं नियति की दारुणता को दर्शनों वाला व्यंग्य।[१]

उद्देश्य की दृष्टि से व्यंग्य को दो भागों में बाँटा गया है। 'आशावादी' एवं 'निराशावादी'। आशावादी व्यंग्य विसंगतियों और त्रुटियों को इंगित करता है लेकिन उसका उद्देश्य सुधारात्मक होता है। निराशावादी व्यंग्य अत्यन्त क्रूर, विखण्डक एवं दण्डात्मक होता है। आशावादी व्यंग्य चिकित्सक की भूमिका में होता है और निराशावादी व्यंगय बधिक की। सम्भव है एक ही रचनाकार की एक ही रचना आशावादी हो और दूसरी रचना निराशावादी।

आश्रय के आधार पर डॉ. बरसाने लाल चतुर्वेदी, व्यंगय को दो भागों में बाँट करके देख रहे हैं– व्यक्तिगत व्यंग्य एवं समष्टिगत व्यंग्य। समष्टिगत व्यंग्य को धर्म, समाज, राजनीति, तथा मानवीय दुर्बलताओं से सम्बन्धित भागों में बाँट कर चतुर्वेदी जी देख रहे हैं।

'आश्रय' या आलम्बन के आधार पर किया गया विभाजन अनुचित प्रतीत होता है क्योंकि व्यंग्यकार निज के व्यंग्य द्वारा भी समाज की विसंगतियों को उभारने का प्रयास करता है। श्रेष्ठ व्यंग्य सामान्यीकरण द्वारा ही अधिक प्रभावी हो सकता है, न कि व्यक्तिगत एवं समष्टिगत भेद को रखकर।

डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी ने व्यंग्य के प्रयोजन, स्वभाव और प्रभाव को दृष्टि में रखते हुए व्यंग्य विभाजन का प्रयास किया है। उन्होंने चमत्कारिक विनोद वचन, व्याजोक्ति, उपहास, व्याकृति, आक्षेप आदि को व्यंग्य के भेद के रूप में स्वीकार किया है।

---

१. डॉ. शेरजंग गर्ग– स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी कविता में व्यंग्य, पृष्ठ–७०

२. डॉ. बरसाने लाल चतुर्वेदी – आधुनिक हिन्दी काव्य में व्यंग्य, पृष्ठ–२४

वास्तव में यह व्यंग्य का भेद नहीं बल्कि व्यंग्य के साधन हैं। व्यंग्य भर्त्सना, छिन्द्रान्वेषण, वैषम्य आदि भंगिमाओं का अवलम्ब भी लेता है।

प्रभाव की दृष्टि से व्यंग्य का विभाजन तीन भागों में किया जा सकता है–

(१) हास्य से युक्त व्यंग्य

(२) कटु यथार्थ से युक्त व्यंग्य

(३) करुणा से युक्त व्यंग्य

व्यंग्य के इस विभाजन के अतिरिक्त सबसे अधिक सर्वग्राह्य और सरल विभाजन विषय की दृष्टि से किया जा सकता है। जो इस प्रकार है –

(१) राजनीतिक व्यंग्य

(२) प्रशासनिक व्यंग्य

(३) सामाजिक व्यंग्य

(४) आर्थिक व्यंग्य

(५) शैक्षणिक व्यंग्य

(६) धार्मिक व्यंग्य

(७) सांस्कृतिक व्यंग्य

(८) साहित्यिक व्यंग्य

(९) वैयक्तिक व्यंग्य

(१०) आत्म व्यंग्य

व्यंग्य का प्रयोजन

व्यंग्य में समाज का यथार्थ चित्रण हो जाता है। उसका कार्य मुख्यतः उपदेशक, धर्माचार्य का ही नहीं होता है, बल्कि वह शल्य चिकित्सक की भूमिका में होता है जो राग–विराग रहित

होकर आपरेशन करता हैं।

व्यंग्य का प्रयोजन

सत्य का उद्घाटन- व्यंग्यकार सामाजिक जीवन की विसंगतियों को और स्वीकृत मानदण्डों के विपरीत चलने वालों को अत्यन्त कुशलता एवं ईमानदारी के साथ व्यक्त करता है। व्यंग्य मानव को प्रकट रूप से आलोचित और लज्जित करता है। इसलिए यह समाज से सीधे जुड़ा है। व्यंग्यकार की दृष्टि सत्य शोधक है। वह सत्य की तलवार उठाकर सामाजिक-आलोचक का पद ग्रहण करता है।

व्यंग्य में सत्य की आत्मा और निर्भीकता की काया होती है। श्री दिनकर सोनवलकर का मानना है कि "साहित्य की सबसे बड़ी अदालत व्यंग्य है। जहाँ किसी के बारे में व्यंग्यकार सत्य और न्याय का दो टूक फैसला करता है।[२]

सुधार की आकांक्षा- व्यंग्य समाज की बुराइयों को सुधारने का कार्य करता है इसके अभाव में प्रत्येक व्यक्ति एंग्रीयंगमैन की भूमिका में कार्य करता रहेगा।

व्यंग्यकार सामाजिक खतरे के प्रति अति संवेदनशील होता है जिसके कारण समाज में उत्पन्न बुराइयों को वह सबसे पहले सुनता है। हरिशंकर परसाई के अनुसार, "व्यंग्य जीवन से निरपेक्ष नहीं हो सकता है। व्यंग्य जीवन से साक्षात्कार करता है। जीवन की आलोचना करता है, विसंगतियों, मिथ्याचारों और पाखण्डों का पर्दापाश करता है। यह नारा नहीं है। मैं कह रहा हूँ कि जीवन के प्रति व्यंग्यकार की उतनी ही निष्ठा होती है। जितनी किसी गम्भीर रचनाकार की। बल्कि ज्यादा ही। वह जीवन के प्रति दायित्व का अनुभव करता है।[३]

---

१. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी- हिन्दी का स्वातन्त्रयोत्तर हास्य और व्यंग्य, पृष्ठ, ७०-७३

२. श्यामसुन्दर घोष-व्यंग्य क्या, व्यंग्य क्यों, पृष्ठ-२२

३. हरिशंकर परसाई- 'सदाचार का तावीज', पृष्ठ-३

परसाई व्यंगय द्वारा सुधार नहीं करना चाहते हैं, बल्कि बदलाव की अपेक्षा रखते हैं। तो यशवन्त कोठारी व्यंग्य का मूल उद्देश्य सुधार की ओर प्रेरित करना बतलाते हैं।

सामाजिक लज्जा का कारक

व्यंग्य समाज का स्वर है। वह इन अर्थो में की जो बात आम आदमी खुले रूप में नहीं कह पाता है। वही बात व्यंग्यकार बड़े स्पष्ट ढंग से कह लेता है। व्यंग्य मनुष्य की भूलों की ओर ध्यान आकृष्ट करता है, जिससे उसे लज्जा का बोध हो।

डॉ. रामविलास शर्मा व्यंग्य की लज्जा शक्ति का उद्‌घाटन इस प्रकार करते हैं– "व्यंग्य का मूल उद्देश्य इसमें है कि वह हमें अपनी कमजोरियों से सचेत करता है। जहाँ-जहाँ लोग अपनी पतित मनोवृत्तियों से सन्तोष कर बैठ रहे हैं वहाँ प्रतिभाशाली लेखकों ने अपने तीव्र व्यंगय वाणों से उन्हें जगाया हैं अकर्मण्यता, आलस्य, आत्मसन्तोष के फैले जाल को छिन्न भिन्न करने के लिए लेखक के हाथ में व्यंग्य से अधिक सुन्दर अस्त्र कुछ भी नही हो सकता। मनुष्य को जब मर्मस्थलों में आहत अपनी निर्बलताओं का ज्ञान होता है तब उन्हें दूर कर अपने को दूसरों के सामने सबल सिद्ध करने का वह प्रयत्न करता है।[२]

सामजिक स्वच्छता का दायित्व

व्यंग्यकार एक प्रकार से नैतिकता का समाज में ठेका लिए रहता है जो गन्दगी फैलने पर उसको साफ करने का कार्य करता है। व्यंग्यकार अपनी आलोचना की चिन्ता नहीं करता है बल्कि वह हमेशा इस बात का प्रयास करता है कि समाज गन्दगी रहित रहें। इस दृष्टि से व्यंग्य समाज का शत्रु नहीं मित्र हैं, वह समाज को स्वच्छ रहने के लिए, प्रेरित करता है।

---

१. हरिशंकर परसाई– 'सदाचार का तावीज', पृष्ठ–३

२. डॉ. रामविलास शर्मा– स्वाधीनता और राष्ट्रीयता साहित्य, पृष्ठ–१३०

क्रान्ति का अग्रदूत

व्यंग्यकार समाज रूपी भवन को 'नया रूप' देता है। इसमें जो सुधरने योग्य है उसे सुधरने के लिए प्रेरित करता है जो बदलने योग्य है उसे बदलने के लिए प्रेरित करता है। जो टूटने के योग्य है उस पर कड़ा प्रहार करता है। व्यंग्यकार सड़ी-गली व्यवस्था को सुधारने के लिए ही नहीं बदलने के लिए प्रेरित करता है। जैसा कि हरिशंकर परसाई लिखते हैं कि, "मैं सुधार के लिए बदलने के लिए लिखना चाहता हूँ यानि कोशिश करता हूँ चेतना में हलचल हो जाय कोई विसंगति नजर के सामने आ जाय इतना ही काफी है।[१] आगे वह लिखते हैं कि "हम लेखक कुल इतना कर सकते हैं कि इस व्यवसथा की सड़ाँध को उजागर करें और परिवर्तन की चेतना का निर्माण करें।[२]

इस प्रकार कतिपय विद्वानों द्वारा घोषित साहित्य के उद्देश्य को व्यंग्य पूरा करता है कि यह समाज के आगे झण्डा लेकर चलता है। राजनीति का मार्ग दर्शक है।

युग समस्याओं का ऐतिहासिक महाकाव्यात्मक वृत्तान्त

साहित्य समाज का दर्पण होता है तो व्यंग्य तत्कालीन समाज का वास्तविक और प्रामाणिक दस्तावेज होता हैं व्यंग्यकार अपने युग की समस्सयाओं का 'आँखों देखा हाल' प्रसारित करता है। व्यंग्य रचनाओं के माध्यम से तत्कालीन सामाजिक घटनाओं का भविष्य में अध्ययन किया जा सकता है। व्यंग्य वास्तविक इतिहास होता है, सामाजिक और राजनैतिक होता है जो उस समाज का यथार्थ चित्रण करने का साहस करता है।

डॉ. नामवर सिंह आदि विद्वानों के मतों में अगर व्यंग्य और इतिहास का सम्मिलित

---

१. कमला प्रसाद- परसाई रचनावली, भाग-६, पृष्ठ-२४३

२. वही-४१३

अध्ययन किया जाय तो उस समय की वास्तविक घटनाओं एवं परिणामों का श्वेत श्याम चित्र मन पर सरलता से अंकित हो जायेगा। इनके अनुसार "स्वयं नंगा होकर घूमने में सुख हो सकता है। लेकिन सवाल तो सम्राट को नंगा करने का है खासतौर पर ऐसे समय जबकि सभी लोग उसे एकदम नंगा देखते हुए भी किसी डर से ऐसा न कह पाते हों।" [१]

'रागदरबारी', 'राजा राज करे', 'किस्सा कुर्सी का', 'रानी नागफनी की कहानी' आदि रचनाएं अपने वर्तमान युग की प्रतिबिम्ब हैं। नारमन फलांग का कथन इस परिप्रेक्ष्य में वास्तविक प्रतीत होता है कि "व्यंग्य में जो ऐतिहासिक कार्य सम्पन्न हुए हैं उनके कारण प्रत्येक युग की व्यंग्य रचनाएं महत्त्वपूर्ण माध्यम हैं अपने युग को जानने का।"[१]

पूर्व काल में समाज का नियन्त्रण धर्म के माध्यम से होता था लेकिन जब धर्म भी विकृत होना प्रारम्भ हो गया तो समाज के ऊपर व्यंग्य नियन्त्रण का कार्य वहन कर लिया। वर्तमान में यह शिक्षा साहित्य, राजनीतिक, समाज सबको, दिशा-दर्शन करने वाला हो गया है।

❑

द्वितीय अध्याय

हिन्दी व्यंग्य विकास एवं स्थापना
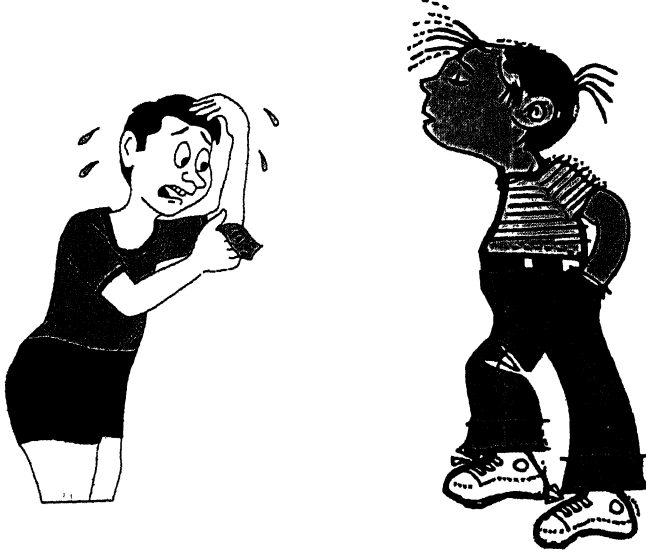
हिन्दी व्यंग्य परम्परा, विकास एवं स्थापना

हिन्दी में व्यंग्य परम्परा पुरानी है। वैदिक साहित्य में एक स्थल पर चार्वाक कहता है "मरा हुआ मनुष्य क्या खायेगा, अगर एक का खाया अन्न दूसरे के शरीर में चला जाता हो तो परदेश जाने वालों का भी श्राद्ध किया जाना चाहिए।"[१] यहाँ श्राद्ध के प्रति अन्ध-भक्ति के ऊपर व्यंग्य किया गया है। इसी प्रकार महाभारत के अनेक प्रसंगों में व्यंग्य के सूत्र मिलते दिखलायी पडते हैं।

व्यंग्य का मूल कारण तत्कालीन विसंगतियां रहीं हैं। जिस काल में विसंगतियाँ जितनी अधिक रहीं हैं। उस काल में व्यंग्यकार का कार्य भी उतना अधिक बढ़ गया है। वीरगाथा काल में इतिहास रक्त-रंजित था, जो साहित्य रचा गया 'स्वामिनः सुखाय' की भावना से। भक्तिकाल में भक्ति की चेतना प्रबल थी। व्यंग्य की धारा का अपेक्षित विस्तार नहीं हो पाया। कबीर ने अवश्य सामाजिक विसंगतियां, धार्मिक आडम्बरों को व्यंग्य का स्वर दिया है। इसी कारण कबीर को हिन्दी साहित्य के प्रथम व्यंग्यकार की संज्ञा दी गयी है।

रीतिकालीन साहित्य का मूल स्वर शृंगारिकता, अलंकरण और कलात्मकता का रहा जिसमें कहीं-कहीं हल्का सा परिहास एवं बुद्धि-चातुर्य देखने को अवश्य मिलता है।

आधुनिक हिन्दी साहित्य में व्यंग्य का स्वर अधिक मुखरित हुआ है। पश्चिमी सभ्यता की नकल, रुढ़िवादिता एवं अन्ध विश्वासों पर भारतेन्दु युगीन साहित्यकारों ने मार्मिक व्यंग्य किये। क्योंकि भारतेन्दु युग व्यंग्य की उपज के लिए उर्वरा-भूमि थी। अंग्रेजों की शोषणपरक मनोवृत्ति, प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम की असफलता, स्वतन्त्रता प्राप्त करने की चेतना के साथ समाज विचार-मन्थन और किंकर्तव्यविमूढ़ता के मध्य फँसा था।

---

१. डॉ. मलय : व्यंग्य का सौन्दर्य शास्त्र, पृष्ठ १९

भारतेन्दु और उनके समकालीन बालकृष्ण भट्ट, प्रताप नारायण मिश्र, राधाकृष्ण गोस्वामी, बद्री नारायण चौधरी, बाल मुकुन्द गुप्त आदि ने समाज की यथार्थ स्थिति के भोक्ता और द्रष्टा थे। इन लोगों ने एक ऐसी शैली में रचना करनी प्रारम्भ की, जो गद्य और पद्य के बीच थी।

भारतेन्दु और उनकी मण्डली ने प्रहसन, नाटक, निबन्ध, कविता, कहानी आदि विधाओं में व्यंग्य को स्थान दिया। भारतेन्दु ने स्त्रोत शैली में 'स्त्रोत पंचरत्न लिखें' 'कंकड़ स्त्रोत' काशी की नगरपालिका पर मुँह चिढ़ाता है। 'अंग्रेज स्त्रोत' गोरे लोगों को चुटकी काटता है। 'वैश्या स्तवराज' में वैशयगमन व्यंग्य का विषय है। 'स्त्री सेवा पद्धति' में स्त्रियों की वकालत, आभरण शीलता के साथ स्त्रियोचित आचरण करने वाले लम्पट पुरुषों को लक्ष्य करके व्यंग्य गोले दागे गये हैं। 'उर्दू की स्यापा', 'पाँचवां पैगम्बर', 'स्वर्ग में विचार का अधिवेशन', 'भाँति-भाँति का जानवर', 'लेवी प्राण लेवी', 'ईश्वर बड़ा विलक्षण है', 'आप ही तो हैं', 'सच मत बोलो', 'मुशायरा', 'चिड़िया घर का चेला' निबन्धों के अतिरिक्त विभिन्न विषयों पर मुकरियां लिखकर व्यंग्य की चाकू पर धार तेज कर दिया।

'अंधेर नगरी' आधुनिक हिन्दी व्यंग्य का नींव ग्रन्थ है 'भारत दुर्दशा' सम्पूर्ण भारत की द्रारुण एवं क्रन्दन की गाथा है। 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति', 'विषस्य विषमौषधय' उनके व्यंग्य तीक्ष्णता के ठोस प्रमाण है।

भारतेन्दु कालीन प्रमुख निबन्धकार बालकृष्ण भट्ट ने 'अकिल अजीरन', 'गदहे में गदहापन क्या है', 'ईश्वर क्या ही ठिठोल है', 'हाकिम चलन की गुलामी', 'इंगलिश पढ़े सो बाबू होय', 'पत्नी स्तत्व खटका', पुरातन और आधुनिक सभ्यता आदि निबन्ध कर युगीन दुष्प्रवृत्तियों को उधाड़ा है।

इसी समय के एक अन्य व्यंग्य-परम्परा के हस्ताक्षर पं. प्रताप नारायण मिश्र 'समझ

का फेरि', 'टेढ जानि शंका सब काहूँ', 'वज्रमूर्ख', 'खुशामद', 'नामर्द तो नाखुदा ने भी बनाया है', 'न्याय', 'समझदार की मौत', 'स्वार्थ', 'शिवमूर्ति', 'आप', 'कलिकोष', 'इन्कम टैक्स' आदि में व्यंग्य किया है। श्री बदरी नारायण चौधीर 'प्रेमधन' ने 'विधवा', 'विपत्तिवर्षा', 'दिल्ली-दरबार', 'भारत के लुटेरे', 'नवीन वर्षारम्भ', 'पुरानी का तिरस्कार और नयी का सत्कार' आदि में तत्युगीन सामाजिक विसंगतियों पर सटीक व्यंग्य किया है।

श्री राधाचरण गोस्वामी ने 'यमपुर यात्रा', 'नापित स्रोत', 'मूषक स्रोत', 'रैल्वे स्रोत', 'वैद्यराज स्रोत', 'होली' आदि रचनाओं में व्यंग्य की बौछार का रुप बिखेरा है।

बालमुकुन्द गुप्त ने अपनी चिट्ठों और खतों के द्वारा सामाजिक विद्रूपताओं का कच्चा-चिठ्ठा खोला हे। 'छद्म' नाम धारण करने की परम्परा बालमुकुन्द गुप्त ने ही प्रारम्भ की है। आत्मा राम नाम से भी इन्होंने साहित्य की रचना की है।

भारतेन्दु युगीन साहित्य के मूल उद्देश्य दो थे। पहला प्रसुप्त जनता को दीन-हीन विपन्नावस्था से जाग्रति करना, दूसरा उद्देश्य था सदियों की दासता से मुक्ति दिलाना। इसके लिए साहित्यकारों ने जिस भी विद्या से जनता तक बात पहुँचाने को सरल समझा, अपनाया। हास्य का अवलम्बन लेकर सभी विधाओं में व्यंग्य वाण छुटने प्रारम्भ हुए। आलोचना, निन्दा, सुधार और हास्य इस समय के साहित्य और साहित्यकारों दोनों का मूल स्वर था। भारतेन्दु और तत्युगीन साहित्य के विषय में डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी ने लिखा है "बात की शुरुआत भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से की जा सकती है वस्तु सत्य और प्रचार-सत्य के बीच के अन्तराल को पहचानने की कोशिश भारतेन्दु से काफी पहले कबीर ने की थी लेकिन ये भारतेन्दु हरिश्चन्द्र थे जिन्होंने आँखे खोलकर विविध सामाजिक सांस्कृतिक और प्रशासनिक विसंगतियों को देखा एवं जी भर कर देशीय विषमता कर कटा किया।

तत् समय की तमाम पाबन्दियों के बावजूद लेखकों ने व्यंग्य-निबंधों, नाटकों, प्रहसनों आदि द्वारा समाज की विकृतियों को सुधारने का कार्य किया। वहीं शोषकों को सतर्क किया कि 'दूर हटो ये दुनिया वालों हिन्दुस्तान हमारा है'। व्यंग्य की वास्तविक शुरुआत भारतेन्दु युगीन प्रहसनों से हुई।

द्विवेदी युग भाषा-परिष्कार के दृष्टि से प्रसिद्ध रहा है। भारतेन्दु युगीन परम्परा यहाँ आकर शिथिल पड़ गयी। बद्रीनाथ भट्ट, जी. पी. श्रीवास्तव, उग्र आदि के अतिरिक्त अधिकांश साहित्यकार दार्शनिक गम्भीरता से युक्त रचना करते रहे। प्रेमचन्द्र, प्रसाद के नाटकों में व्यंग्य को प्रहारक क्षमता मिलती है। प्रेमचन्द्र की कहानियों एवं उपन्यासों में व्यंग्य, व्यंग्य के लिए नहीं आता अपितु कथा की मांग बनकर आता है।

स्वतन्त्रता बाद की परिस्थितियाँ इतनी तीव्र गति से परिवर्तित हुई कि साहित्यिक क्षेत्र में भी क्रान्ति जैसी स्थिति उत्पन्न हो गयी। इस समय नयी प्रकार की समस्याओं ने जन्म लिया। इसी कारण व्यंग्य के तेवर भी बदल गये।

कविता में व्यंग्य

सूर और तुलसी व्यंग्य कवि नहीं रहे हैं फिर भी अपनी रचनाओं में इन्होंने व्यंग्यवाण छोड़े हैं। तुलसी ने दुष्टों की बन्दना की है जो ओले के समान है, स्वयं तो नष्ट होते ही है, फसल को भी नुकसान पहुँचाते हैं। इसी तरह दुष्ट को कौओ के समान बताया है जो प्यार से पाले जाने पर भी माँस खाना नहीं छोड़ता है।

"बापस पालिहि अति अनुरागा । होहिं निरामिष कबहुँ न कागा ।।[१]

सूरदास ने भ्रमरगीत प्रसंग में व्यंग्य की सृष्टि की है। जहाँ उन्होंने वाग्वैदग्ध्य के माध्यम

---

१. गोस्वामी तुलसी दास : रामचरित मानस, बालकाण्ड, पृष्ठ ७०

से व्यंग्य की सृष्टि की है।

रीतिकाल में बिहारी ने अपने काव्य में अनेक स्थलों पर व्यंग्य का प्रयोग किया है। बिहारी ने वक्रोक्ति और चमत्कार उत्पन्न कर व्यंग्य को स्वर दिया है।

भारतेन्दु युगीन कवियों ने सही अर्थों में व्यंग्य की महत्ता को समझा। तत्कालीन अंग्रेजी साम्राज्य की शासन व्यवस्था से क्षुब्ध होकर कवियों ने देशी, विदेशी, लाल, साहब, पुलिस, एडीटर और अंग्रेज भक्त, सभी पर तीखा व्यंग्य किया। भारतेन्दु व्यंग्य के प्रतिनिधि कवि थे। तो बालकृष्ण भट्ट ने टैक्सों की मारी जनता के दुःखों को व्यक्त किया। पं. राधाचरण गोस्वामी 'इल्बर्ट बिल विवाद' पर स्यापा लिखकर व्यंग्य बाण छोड़ा। प्रताप नारायण मिश्र ने अपने समय की सामाजिक पिद्रूपताओं को प्रखर स्वर दिया। बाल मुकुन्द गुप्त ने अपनी रचनाओं में अंग्रेजी साम्राज्यों को व्यंग्य का मुख्य विषय बनाया। उनकी 'सर सैयद की बुढ़ापा' शीर्षक कविता में व्यंग्य की भरमार है। भारतेन्दु युगीन कवियों ने व्यंग्य की स्वस्थ परम्परा की नींव रखी।

द्विवेदी ने मूलतः अंग्रेजी सभ्यता का अन्धानुकरण करने वालों के ऊपर व्यंग्य किया। मैथलीशरण गुप्त ने आडम्बरों एवं तत्कालीन कुरीतियों पर व्यंग्य किया। बालकृष्ण शर्मा नवीन और माखन लाल चतुर्वेदी ने भी व्यंग्य के तीर अपनी रचनाओं में चलाये हैं।

छायावादी कवियों में भावना की आतिशयता थी। उनकी दृष्टि आत्मनिष्ठ और प्रकृति-प्रेम की तरफ थी। वे कोमलकान्त पदावली की रचना करते थे। इस समय के कवियों में निराला ही एक मात्र ऐसे कवि थे जिन्होंने व्यंग्य का स्वर अपनाया। स्वातन्त्रयोत्तर काल में अनास्था, निराशा कुण्ठा और असन्तोष को व्यक्त करने के लिए व्यंग्य का सहारा लिया गया है। आधुनिक कविता की प्रमुख प्रवृत्ति व्यंग्यात्मक है। देश की वर्तमान राजनैतिक गतिविधियों, आधुनिक सभ्यताओं की विसंगतियों, मध्यवर्गीय आदमी की विडम्बनाओं, शान्ति

स्थापित करने की असफल प्रयासों पर सशक्त व्यंग्य किया गया है। नागार्जुन मुक्तिबोध इस समय के प्रतिनिधि व्यंग्य कवियों में से है।

उपन्यास में व्यंग्य

स्वातन्त्रयोत्तर उपन्यासों पर अगर दृष्टि डाले तो व्यंग्यपरक उपन्यासों की एक लम्बी परम्परा मिलती है जैसे– निराला का 'कुल्ली भाट' और 'बिल्लेसुर बकरिया', रांगेय राघव का 'हुजूर', विन्ध्याचल प्रसाद गुप्त का 'चाँदी का जूता', राधाकृष्ण का 'सनसनाते सपने', उग्र का 'कढ़ी में कोयला' (१९५५), परसाई कृत 'तट की खोज' (१९५५), 'ज्वाला और जल' (१९५८), 'रानी नागफनी की कहानी' (१९६२), नागार्जुन का 'हीरक जयन्ती' (१९६३), हिमांशु श्रीवास्तव का 'कथा सूर्य की नयी यात्रा' (१९६४), श्री लाल शूक्ल का 'राग दरबारी' (१९६८), बद्री उज्जमा का 'एक चूहे की मौत', श्याम सुन्दर घोष का 'एक उलूक कथा', नरेन्द्र कोहली का 'आश्रितों का विद्रोह', आबिद सूरती का 'काली किताब', अशोक शुक्ल का 'कालेज पुराण' (१९७४), 'हड़ताल हरिकथा' (१९७५, बद्री उज्जमा का 'छठातन्त्र', मनोहर श्याम जोशी का 'नेता जी कहिन', 'कुरु कुरु स्वाहा' आदि।

भारतीय जन मानस में व्याप्त कुरीतियों विसंगतियों को, व्यंग्य-उपन्यासों में प्रमुख स्वर दिया गया है। अनोखे शिल्प माध्यम से सम-सामयिक परिवेश को इन उपन्यासों में चित्रित किया गया है। जिसमें भारतीय जन-जीवन का कटु सत्य उद्घाटित होता है। मध्य वर्ग की विडम्बना और सामाजिक अन्तर्विरोध इन उपन्यासों का प्रमुख विषय रहा है जिसकों इन्होंने कहीं कटु यथार्थ रूप में, कहीं करुण व्यंग्य के माध्यम से, तो कहीं हास्य में पाग करके साहित्य में उतारा है।

नाटक में व्यंग्य

भारतेन्दु युग के नाटकों में भी व्यंग्य देखने को मिलता है। इस समय हास्य मिश्रित नाटक अधिक लिखा गया है। भारतेन्दु के प्रहसनों 'अन्धेर नगरी', 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति', 'विषस्य विषमौषधम्' 'जाति विवेकनी सभा' आदि को खूब ख्याति मिली। प्रताप नारायण मिश्र का 'कील कौतुक रुपक' तथा भारतेन्दु का 'भारत दुर्दशा' नाटक समाज और राजनीति के ऊपर कठोर व्यंग्य है। राधाचरण गोस्वामी का 'बूढ़े मुँह मुँहासे' नेताओं के पाखण्ड पूर्ण कृत्यों पर करारी चपत है।

पं. देवकी नन्दन त्रिपाठी ने अनेक नाट्य कृतियाँ की। जिनमें व्यंग्य की छटा बिखरी पड़ी है। गोपाल राम गहमरी ने 'जैसे को तैसा' में वृद्ध विवाह पर व्यंग्य किया। ऐतिहासिक नाटक लेखन में प्रसाद का नाम भी अविस्मरणीय रहेगा। इन्होंने गम्भीर और उद्देश्यपूर्ण व्यंग्य लेखन की परम्परा को अपनी रचनाओं में स्थान दिया।

द्विवेदी युग में व्यंग्य परम्परा की गति थोड़ी अवरुद्ध हो गयी। अन्य विधाओं की भाँति नाटक में भी व्यंग्य परम्परा की धारा क्षीण हो गयी। जी. पी. श्रीवास्तव, उग्र और बद्रीनाथ भट्ट ही नाट्य-व्यंग्य-परंपरा को आगे बढ़ाने में थोड़ा सहयोग कर सकें।

केशवचन्द्र वर्मा का 'चिड़ी का गुलाम' व्यंग्य एकांकी संग्रह है जिसमें उन्होंने सभी में सशक्त व्यंग्य प्रस्तुत किया है। डा. सत्यप्रकाश संगर ने अपने नाटक 'दामाद का चुनाव' में शिक्षा के ऊपर व्यंग्य वाण साधा है। ज्ञानदेव अग्निहोत्री ने 'शुतुरमुर्ग' में राजनैतिक स्थिति का सफल चित्रण किया है। इसी तरह – विनोद रस्तोगी 'जनतन्त्र जिन्दाबाद', लक्ष्मी नारायण 'कलंकी', 'अब्दुल्ला दीवाना', नरेन्द्र कोहली 'शंबूक की हत्या', सर्वेश्वर दयाल सक्सेना 'बकरी' आदि नाटकों में सशक्त व्यंग्य है। नाटकों में यद्यपि व्यंग्य अधिक नहीं लिखा गया फिर भी इन नाटकों का व्यंग्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान है।

कहानी में व्यंग्य

इंशा अल्ला खाँ की 'रानी केतकी की कहानी' प्रथम कहानी मानी जाती है। इसके पश्चात राजा शिव प्रसाद सिंह की 'राजा भोज का सपना', भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की 'स्वर्ग में विचार सभा का अधिवेशन' आदि कुछ कहानियाँ हैं। जिसमें व्यंग्य का समावेश दिखलायी पड़ता है। प्रेमचन्द्र की कहानियों में यदा-कदा व्यंग्य की तेज धारा बहती सी प्रतीत होती है।

स्वतन्त्रता पश्चात की कहॉनियां अपने समाजी कवच से बाहर निकलती है। इसी समय सामाजिक सत्य की अंगुली पकड़ कर नयी कहानी आन्दोलन का चलना प्रारम्भ हुआ। इस समय के प्रमुख कहानीकार इस प्रकार हैं– केशवचन्द्र, हरिशंकर परसाई, शरद जोशी, श्रीलाल शुक्ल, मुक्तिबोध आदि। इन कहानीकारों ने अपनी कलम को मुक्त छोड़ दिया जो समाज के हर कोने में फैली विद्रूपताओं को ढूंढ़-ढूंढ़कर कहानी का विषय बना रहा था। इस परम्परा को और आगे बढ़ाने में जिन लोगों ने सहयोग किया। उनमें शरद जोशी, रवीन्द्रनाथ त्यागी, नरेन्द्र कोहली, प्रेम जनमेजय, श्रीलाल शुक्ल आदि प्रमखु हैं।

जातीय परम्परा के प्रमुख व्यंग्यकार

हिन्दी-व्यंग्य की जातीय परम्परा में जिन व्यंग्यकारों की चर्चा की जा रही है वे हैं– कबीर, भारतेन्दु, निराला और परसाई।

कबीर

कबीर को हिन्दी का प्रथम व्यंग्य लेखक स्वीकार किया जाता है। कबीर ने तत्कालीन व्यवस्था में व्याप्त पाखण्ड, कर्मकाण्ड, अन्ध विश्वास, रुढ़िवादिता, जाति-पाँति आदि विद्रूपताओं के हर मोर्चे पर आक्रमण किया। हजारी प्रसाद द्विवेदी कबीर को श्रेष्ठ व्यंग्यकार मानते हुए कहते हैं, "साधारण हिन्दू गृहस्थ पर आक्रमण करते हुए वे लापरवाह होते हैं, और इसीलिए लापरवाही भरी एक हँसी उनके अधरों पर खेलती रहती है। मानों वे इन अदने आदमियों

को इस योग्य भी नहीं समझ रहे हों, जिन पर आक्रमण किया जाय परन्तु इस लापरवाही के कारण ही इन आक्रमणों में एक सहज भाव और एक जीवन्त काव्य मूर्तिमान हो उठा है। यही लापरवाही कबीर के व्यंग्यों की जान है।"[१]

कबीर सीधी सरल भाषा में अपनी बात कुशलता से कह जाने वाले व्यंग्यकार थे। वे 'घर फूँक तमाशा देखने' को तैयार रहते थे, तो 'सीस कटा के भुँई धरा' कहने का साहस भी रखते थे। उनके इसी साहस और फक्कड़पन ने हिन्दी के प्रसिद्ध व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई को अपना शिष्य बना लिया।

कबीर के व्यंग्य के मुख्य लक्ष्य थे– काजी, मुल्ला, पंडित, ब्राह्मण। उनका विश्वास था कि समाज में व्याप्त अन्तर्विरोधों और विसंगतियों के मूल कारण वे ही है। इसी लिए इनको देखते ही कबीर तन कर खड़े हो जाते हैं और व्यंग्य बाणों का प्रहार करना शुरु कर देते। कबीर का कटु सत्य और तिलमिला देने वाला व्यंग्य उन्हें समाज वेत्ता और क्रान्तिकारी युग स्रष्टा बना गया। कबीर ने ही साहित्य का परिचय यथार्थ से कराया और सुधार की भावना को साहित्य में स्थान दिया।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

उन्नीसवीं शती के अन्तिम चरण में पूरे देश में सांस्कृतिक जागरण की लहर फैली रही थी। इस समय सम्पूर्ण देश में एक विशाल मध्यवर्ग तैयार हो गया था। जो अंग्रेजी शासन की विद्रूपताओं एवं कुचालों को समझने लगा था। उसके अन्दर इस भावना का जन्म होना प्रारम्भ हुआ कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में यथा–सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक, परिवर्तन की जरुरत है। वे नवीन युग की सुधार चेतना के प्रतिनिधि थे। साहित्य उनके लिए मनोरंजन का साधन नहीं था वे इसके माध्यम से देश की गिरती दशा को उठाना चाहते थे। अंग्रेजी शासन की अनीतियों को इसी कारण अपने लेखन का मुख्य विषय बनाया। वे अंग्रेजी

को इस योग्य भी नहीं समझ रहे हों, जिन पर आक्रमण किया जाय परन्तु इस लापरवाही के कारण ही इन आक्रमणों में एक सहज भाव और एक जीवन्त काव्य मूर्तिमान हो उठा है। यही लापरवाही कबीर के व्यंग्यों की जान है।"[१]

कबीर सीधी सरल भाषा में अपनी बात कुशलता से कह जाने वाले व्यंग्यकार थे। वे 'घर फूँक तमाशा देखने' को तैयार रहते थे, तो 'सीस कटा के भुँई धरा' कहने का साहस भी रखते थे। उनके इसी साहस और फक्कड़पन ने हिन्दी के प्रसिद्ध व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई को अपना शिष्य बना लिया।

कबीर के व्यंग्य के मुख्य लक्ष्य थे– काजी, मुल्ला, पंडित, ब्राह्मण। उनका विश्वास था कि समाज में व्याप्त अन्तर्विरोधों और विसंगतियों के मूल कारण वे ही है। इसी लिए इनको देखते ही कबीर तन कर खड़े हो जाते हैं और व्यंग्य बाणों का प्रहार करना शुरु कर देते। कबीर का कटु सत्य और तिलमिला देने वाला व्यंग्य उन्हें समाज वेत्ता और क्रान्तिकारी युग स्त्रष्टा बना गया। कबीर ने ही साहित्य का परिचय यथार्थ से कराया और सुधार की भावना को साहित्य में स्थान दिया।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

उन्नीसवीं शती के अन्तिम चरण में पूरे देश में सांस्कृतिक जागरण की लहर फैली रही थी। इस समय सम्पूर्ण देश में एक विशाल मध्यवर्ग तैयार हो गया था। जो अंग्रेजी शासन की विद्रूपताओं एवं कुचालों को समझने लगा था। उसके अन्दर इस भावना का जन्म होना प्रारम्भ हुआ कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में यथा–सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक, परिवर्तन की जरुरत है। वे नवीन युग की सुधार चेतना के प्रतिनिधि थे। साहित्य उनके लिए मनोरंजन का साधन नहीं था वे इसके माध्यम से देश की गिरती दशा को उठाना चाहते थे। अंग्रेजी शासन की अनीतियों को इसी कारण अपने लेखन का मुख्य विषय बनाया। वे अंग्रेजी

शासन के भक्तों के ऊपर भी व्यंग्य करते थे। 'एक अद्‌भुत अपूर्व स्वप्न' (फैंटेसी) के माध्यम से उन्होंने यथार्थ का अंकन करना शुरु किया।

भारतेन्दु ने 'अंग्रेजी स्तोत्र' के माध्यम से अंग्रेजों की लुटेरी प्रवृत्ति का पर्दाफाश किया। भारतीयों के अंग्रेजी प्रेम पर भी इन्होंने व्यंग्य किया।

– भीतर तत्व न, झूठी तेजी, क्यों सखि साजन नहिं अंग्रेजी

– आँखे फूटी भरा न पेट, क्यों सखि साजन नहि ग्रेजुएट।

वास्तविक रूप में सामाजिक और राजनीतिक व्यंग्य लिखने की परम्परा भारतेन्दु काल से शुरु हुई। उनके साथ के साहित्यकारों ने भी इसी प्रकार की रचना करना प्रारम्भ किया। परिणामतः उनकी एक मंडली बन गयी। बालेन्दु शेखर तिवारी ने इसी को लक्ष्य कर लिखा है "यह कहा जा सकता है कि भारतेन्दु युग में हिन्दी की हास्य और व्यंग्य परम्परा ने यौवन की प्राप्ति की। साहित्यकारों ने हास्य और व्यंग्य की अनिवार्य योजना द्वारा इस युग के साहित्य को सजीवता दी।"[१]

निराला

भारतेन्दु युगीन लेखकों के पश्चात व्यंग्य का वास्तविक रुप लाने का श्रेय निराला को जाता है। पूँजीवादी सभ्यता के दुष्परिणाम और राजनीतिज्ञों का ढोंग ही निराला के व्यंग्यों का मुख्य आधार है। व्यंग्य की आत्मा को पहचानने वाली पैनी दृष्टि भारतेन्दु के समान तीखा व्यंग्य निराला की कविताओं और कथाओं में देखने को मिलता है। 'कुकुरमुत्ता' उनकी सशक्त व्यंग्य कविता है जिसमें उन्होंने शोषक पूँजीपति वर्ग पर तीखा प्रहार किया है। 'कुल्लीभाट' और 'विस्लेसुर बकरिया' उनके यथार्थवादी व्यंग्य उपन्यास है।

---

१. श्री बालेन्दु शेखर तिवारी : स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी का हास्य और व्यंग्य, पृष्ठ ९१

सम-सामयिक सामाजिक, राजनैतिक परिदृष्य पर सार्थक व्यंग्य लिखने में निराला को पर्याप्त सफलता मिली है। वे 'भिक्षुक', 'वह तोड़ती पत्थर' तथा 'दीन' शीर्षक कविता में समाज की ओर उन्मुख होते हैं। 'नये पत्ते' में हाइकोर्ट के वकीलों के ऊपर व्यंग्य करते हैं। 'महगूं महगां रहा' में ढोंगी नेताओं के ऊपर व्यंग्य किया है। निराला का व्यंग्य सामाजिक परिवेश से जुड़ा था उनका सिद्धान्त था 'कला जीवन के लिए'।

भारतेन्दु के व्यंग्य राष्ट्रीयता को लक्ष्य करते हुए होते थे तो निराला के व्यंग्य अन्तर्राष्ट्रीयता को। 'कुकुरमुत्ता' आधुनिक युग का सबसे बड़ा व्यंग्य है 'कुकुरमुत्ता' सर्वहारा वर्ग का प्रतीक है और गुलाब पूँजीवाद वर्ग का – कुकुरमुत्ता गुलाब से कहता है –

भूल मतगरपाई खूशबू रंगोआब
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट
डाल पर इतराता है कैपीटलिस्ट।

निराला के अन्दर प्रखर बुद्धि थी, तो हृदय की विशाल संवेदनशीलता भी। शेरजंग गर्ग के अनुसार "निराला के सम्बन्ध में यह निस्संकोच स्वीकार किया जा सकता है कि निराला आधुनिक हिन्दी के युग-प्रवर्तक व्यंग्यकार हैं जिन्होंने व्यंग्य को अभिजात्य और छन्द दोनों से युक्त किया।"[१]

पन्त ने मानवीय विसंगति पर केन्द्रित 'ताज' कविता में व्यंग्य किया है। नागार्जुन की प्रायः सभी रचनाओं का मूल स्वयं व्यंग्य है। अज्ञेय ने 'साँप और मनुष्य' नामक कविता में व्यंग्य को प्रभावशाली स्वर प्रदान किया है।

---

१. डॉ. शेर जंग गर्ग : हिन्दी कविता में व्यंग्य, पृष्ठ १८३

हरिशंकर परसाई

स्वतन्त्र भारत का नवजात शिशु था– 'प्रजातन्त्र'। स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय आनन्द और खुशी का वो उल्लास नहीं था। देश–विभाजन ने भीषण रक्त पात कराया। हर तरफ, उत्पीड़न अत्याचार और अमानवीयता का बोलबाला था। देशवासियों की आशाओं पर तुषारापात हो रहा था। चोरबाजारी और घूसखोरी का साम्राज्य चारों तरफ फैल गया था। सिद्धान्त पर चलने वाले मूर्ख माने जाने लगे, चारो तरफ सिद्धान्तहीन नेतृत्व, भ्रष्ट नौकरशाही का बोल–बाला था। सम्पूर्ण परिवेश में जैसे अराजकता का साम्राज्य फैला हो। सभी लोग 'सैंयाँ भये कोतवाल तो अब डर काहें का' वाली मानसिकता से संचालित हो रहे थे।

साहित्यकारों के सामने अभी नयी भूमि तैयार थी जिस पर वह साहित्य की खेती कर सकते थे। उन्हें यह सुविधा थी कि वे परम्परा को अपनायें अथवा नहीं। परम्परा में आस्था नहीं थी क्योंकि वर्तमान, आशाओं, अकांक्षाओं एवं आस्थाओं को चूर–चूर कर रहा था। देश की वर्तमान विसंगतिमय परिस्थितियाँ व्यंग्य लेखन को प्रोत्साहित कर रही थी। व्यंग्य लेखन इस काल के लिए अनिवार्य सा हो गया। प्रसिद्ध समालोचक शिवकुमार मिश्र के अनुसार "स्वातन्त्रयोत्तर युग में कतिपय प्रखर यथार्थ–दृष्टा रचनाकारों के माध्यसम से व्यंग्य को पुनः एक स्वतन्त्र महत्व प्रदान किया। इन रचनाकारों के माध्यम से व्यंग्य की विधा को उसकी सारी क्षमताओं के साथ प्रस्तुत करने की कोशिश की गयी और उसका आश्रय लेकर सम–सामयिक जीवन विकृतियों का निर्ममतापूर्वक उद्घाटन किया गया। सम–सामयिक जीवन का शायद ही कोई पहलू हो जो इन व्यंग्यकारों की पैनी निगाह से छूट पाया हो।"[१] समाज की विसंगतियों का साहस पूर्वक मुकाबला करने और व्यंग्य की सही शैली अपनाने में परसाई का नाम सबसे ऊपर है।

---

१. शिव कुमार मिश्र : यथार्थवाद, पृष्ठ १९१

परसाई की रचनाएँ भारतीय जन-जीवन की समस्याओं से जुड़ी है। स्वतन्त्रता के बाद के भारत की सामाजिक शैक्षिक व राजनीतिक यथार्थ तस्वीर उनके लेखन में देखने को मिल जाती है। वे परिवेश को बदलने में विश्वास करते थे। इनकी रचनाओं ने एक प्रबुद्ध वर्ग तैयार किया। उन्होंने मनुष्य के जीवन को गहराई तक देखा और उसकी बेहतरी के लिए काम किया। भारतीय मनुष्य को कष्ट देने वाले हर तन्त्र की खबर परसाई ने लिया। 'सदाचार का ताबीज', 'भोलाराम का जीव', 'वैष्णव की फिसलन', 'जैसे उनके दिन फिरे', 'सुदामा के चावल', 'रामसिंह की ट्रेनिंग', 'अकाल-उत्सव' आदि आम आदमी की तकलीफों को व्यक्त करने वली रचनाएं हैं। परसाई सहज अभिव्यक्ति के अप्रतिम कलाकार है। पुरुषोत्तम दास अग्रवाल ने परसाई के विषय में लिखा कि 'जीवन के अशुभ और असुन्दर से साक्षात्कार कराने के लिए परसाई के पात्र विसंगतियों से पैदा होते हैं वे कीर्तन या उपदेशक के रूप में नहीं, बल्कि व्यंग्य को योद्धा के रूप में देखते है। अपनी व्यक्तिगत सुरक्षा के लिए जीता आदमी सदैव उनके व्यंग्य का शिकार हुआ है। वे कुचले हुए व्यक्ति पर हँसते नहीं है। उसे लड़ने के लिए तैयार करते है और मानवीय रिश्तों को नष्ट करने वाली सत्ता की क्रूरता के खिलाफ उसे खड़ा करते हैं इसी कारण उनका लेखन आस्था और व्यथा का तनावपूर्ण कलात्मकता का श्रेष्ठ उदाहरण है।"[१]

अन्त में कहा जा सकता है कि "व्यंग्य के पास अति दीर्घ परम्परा नहीं है किन्तु एक सुदृढ़ परम्परा की नींव है जिसने वर्तमान की ऊँचाईयों को स्थायित्व का गहरा आधार प्रदान किया है।" समूचे इतिहास में मील का पत्थर बनने का गौरव भले की कबीर, भारतेन्दु और निराला को ही मिला लेकिन उन अनेक विश्राम-स्थलों को विस्मृत नहीं किया जा सकता है जहाँ हास्य की गुदगुदी होठों पर मुस्कान ला देती है और व्यंग्य का आक्रोश सोचने के

---

१. स्मारिका २-३ अक्टूबर १९८२, प्रगतिशील लेखक संघ का आयोजन, पृष्ठ १२

लिए विवश कर देता है।

भारतेन्दु युग और उसके बाद व्यंग्य लेखन हिन्दी-साहित्य में महत्वपूर्ण हो उठा था। व्यंग्य की दृष्टि से देखा जाय तो अनेक कवियों और लेखकों ने सशक्त व्यंग्य लिखकर अपना-अपना सहयोग दिया। किन्तु व्यंग्य जीवन को उपजीव्य मानकर साहित्य सृजन करने वाले सहित्कारों की परम्परा व्यंग्य की परम्परा के लिए महत्वपूर्ण हैं।

हिन्दी में व्यंग्य विधा का विकास

स्वातन्त्रयोत्तर काल में व्यंग्य विधा का उदय एक विलक्षण घटना थी। इस समय की लगभग सभी पत्र पत्रिकाओं में व्यंग्य लेखन देखने को मिल जाता है। एक तरह से पत्रिका की प्रतिष्ठा का व्यंग्य कालम मानक बन गया था। इस समय साहित्यकारों ने समाज का यथार्थ चित्र खींचा है।

हिन्दी व्यंग्य विधा के विकास में हरिशंकर परसाई, शरद जोशी, रवीन्द्रनाथ त्यागी, केशवचन्द्र, श्रीलाल शुक्ल, डॉ. नरेन्द्र कोहली, के. पी. सक्सेना, लतीफ घोधीं, डॉ. बरसाने लाल चतुर्वेदी, डॉ इन्द्र नाथ मदान, अमृतराय, डॉ शंकर पुणतांबेकर, डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी, श्रीकान्त पाण्डेय आदि लोगों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया।

इन सभी व्यंग्यकारों ने विशाल तथा तीक्ष्ण दृष्टि रखते हुए अन्याय, अत्याचार, व्यभिचार, कथनी और करनी में विसंगति, पाखण्ड, अवसरवाद, भ्रष्टाचार को अपनी लेखनी का माध्यम बनाया। अपनी जिन्दगी में अवांछित परिवेश देखकर जो छटपटाहट होती है व्यंग्य उसी के परिणाम स्वरूप उत्पन्न होता है।

बुराई के प्रति तीक्ष्णता के साथ प्रहार करने की शक्ति व्यंग्य-विधा के अन्तर्गत ही है। आज की परिस्थितियों में सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक विसंगतियों को व्यक्त करने

के लिए व्यंग्य विधा ही एक मात्र साधन है। हिन्दी की सभी विधाओं में व्यंग्य के आने का मुख्य कारण यही था।

हिन्दी साहित्य में व्यंग्य पहले विधा के रुप में नहीं शैली के रुप में प्रयुक्त हुआ। लेकिन आज व्यंग्य, साहित्य की एक महत्वपूर्ण विधा बन गयी है। उसका विस्तार इतना अधिक हो गया है कि उसने सब विधाओं को अपने में ओढ़ लिया है। स्वतन्त्रता पूर्व का व्यंग्य नयी-नवेली दुल्हन था जो कठोर बात भी मृदु भाषी बन कर कहता था लेकिन स्वतन्त्रता बाद का व्यंग्य प्रौढ़ा हो गया जो हर बात को वगैर किसी डर और लज्जा के कह रहा है।

प्रारम्भिक व्यंग्य व्यक्ति केन्द्रित था। बाद में यह धार्मिक पाखण्डों पर अधिक प्रहार करने लगा। आगे चलकर सामाजिक बुराइयों को व्यंग्य ने अपना विषय बनाया। वर्तमान राजनीति के साथ सभी विषय व्यंग्य के आहार है जिनको वह ग्रहण कर लेता है। व्यंग्य की शक्ति वर्तमान में इतनी अधिक बढ़ गयी है कि यह मनुष्य की चेतना को झकझोर कर सुधी लोगों को सोचने के लिए मजबूर कर देता है।

स्वातन्त्रयोत्तर काल में व्यंग्य निडर होकर 'नंगो को नंगा' कहने का साहस करने लगा। जिससे १९६० के लगभग 'व्यंग्य' विधा के रूप में स्थापित होना शुरु हुआ। व्यंग्य जीवन से साक्षात्कार करता है। यही कारण है कि अन्य विधाओं की अपेक्षा व्यंग्य ने मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा का दायित्व अपने ऊपर लिया।

व्यंग्य ने सामान्य मनुष्य के अन्दर सामाजिक और राजनैतिक समझदारी पैदा की। इसने इस बात का प्रशिक्षण दिया कि किस प्रकार से उनका शोषण रोका जा सकता है। राजनीतिक रुप से रटाये गये नारों का अर्थ समझाने में व्यंग्यकारों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। 'समाजवाद', 'गरीबी हटाओ' आदि नारों के खोखले हुए अर्थ को व्यंग्यकारों ने ही जनता

के सामने रखा।

१९६० का दशक व्यंग्य के विकास के लिए अधिक उर्वर काल था। इस समय की परिस्थितियां ऐसी थी जिसमें व्यंग्य का विकास बड़ी तेजी से हुआ। तत्कालीन परिस्थितियों में अन्याय, घूसखोरी, भ्रष्टाचारिता, दो-मुँहापन आदि इस तरह से व्याप्त हो गया था कि यह जीवन का अनिवार्य अंग सा प्रतीत होने लगा था। ऐसे में व्यंग्यकारों ने अपने कटाक्षों द्वारा उसकी अनुपयोगिता सिद्ध की तथा समाज को सोचने के लिए विवश किया कि यह उचित नहीं है।

हिन्दी व्यंग्य के पितामह हरशिंकर परसाई ने व्यंग्य विधा का एक तरह से मानक स्वरूप तैयार कर दिया। इन्होंने 'वसुधा', 'प्रहरी', 'परिवर्तन', तथा अनेक पत्रिकाओं से जुड़कर व्यंग्य को उच्च भावभूमि पर बैठाने का कार्य किया। इसी प्रकार 'कल्पना' में कालम लेखन, 'और अन्त में', 'सारिका' में 'कबिारा खड़ा बाजार में', 'माया' में 'मैं कहता आँखन देखी', 'हिन्दी व्यंग्य' में 'माटी कहे कुम्हार से', 'नई दुनिया' में 'सुनो भाई साधो', 'नई कहॉनियां' में 'पाँचवाँ कालम' लिखकर परसाई जी ने व्यंग्य का खूब प्रचार-प्रसार किया। इन सभी में राजनीतिक व्यंग्य के अलावा सामाजिक और धार्मिक व्यंग्य भी हुआ करते थे। परसाई की शक्ति को पहचानते हुए वालेन्दु शेखर तिवारी जी लिखते हैं कि "व्यंग्य विधा को स्थापित करने में परसाई ने वस्तु और शैली के स्तर पर अर्थ गर्भसर्जना की है। उनका व्यंग्य लेखन पारम्परिक रुपों और घिसी हुई मर्यादाओं को नकार कर भूमि का विधान करता है।"[१]

व्यंग्य विधा के विकास में परसाई ने प्रारम्भिक रुप से सहयोग प्रदान किया। इनकी दृष्टि और सर्जना दोनों बाद के व्यंग्यकारों के लिए आदर्श रुप में उपस्थित हुआ।

शरद जोशी, परसाई के बाद दूसरे बड़े व्यंग्यकार हैं जिन्होंने तत्कालीन विद्रूपताओं को

---

१. डॉ. वालेन्दु शेखर तिवारी : हिन्दी का स्वातन्त्रयोत्तर हास्य और व्यंग्य, पृष्ठ २७०

प्रकट करने के लिए 'परिक्रमा', 'नावक के तीर', 'ताल-बेताल', 'बैठे ठाले' आदि स्तम्भों का लेखन किया। नवभारत टाइम्स में 'प्रतिदिन' स्तम्भ के अन्तर्गत लिखते रहे हैं। इन्होंने राजनीलति, प्रशासन, साहित्य, समाज सबके ऊपर व्यंग्य का घोड़ा दौड़ाया है।

व्यंग्य के प्रारम्भिक विकास काल में राधाकृष्ण, रवीन्द्र नाथ त्यागी, केशवचन्द्र वर्मा, श्री लाल शुक्ल, डॉ. नरेन्द्र कोहली, के. पी. सक्सेना, डॉ. वरसाने लाल चतुर्वेदी, लतीफ घोंघी, डॉ. संसार चन्द्र आदि ने महत्वपूर्ण योगदान किया।

रवीन्द्र त्यागी ने सारिका में 'पराजित पीढ़ी के नाम' का स्तम्भ लिखा। लतीफ धोधीं ने रायपुर से प्रकाशित अमृत-संदेश में 'व्यंग्य-प्रसंग' लिखा। श्री बाल पाण्डेय ने 'तीसरा कोना' विनोद शंकर शुक्ल ने 'नवभारत' (रायपुर) में "मैं कहता आँखन देखी" कालम लिखा। अजात शत्रु 'बयान जारी है', कृष्ण चन्द्र चौधरी का 'तीसरी आँख' आदि स्तम्भ लेख व्यंग्य रुपी पौधे को जल और आक्सीजन दे रहे थे जिससे वह आगे चलकर विशाल वटवृक्ष का रुप ग्रहण कर सका।

डॉ. शंकर पुणताम्बेकर ने विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में स्तम्भ लिखकर व्यंग्य के विकास में अपना योगदान कर रहे थे। डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी ने पटना से प्रकाशित 'ज्योत्स्ना' पत्रिका में 'प्रतिभास मिस्टर भारतेन्दु' स्तम्भ के अन्तर्गत लिखते रहे हैं। व्यंग्य पत्रिका 'अभीक' का १९७३-७५ तक सम्पादन किया। इसके अलावा तमाम पत्र-पत्रिकाओं में लेख लिखकर व्यंग्य के विकास के लिए सही जमीन तैयार की। व्यंग्य विकास में इनका योगदान मूल्यवान है।

व्यंग्य की नई पौध के सन्दर्भ में श्याम सुन्दर घोष का कथन है कि "व्यंग्य का पौधा यथार्थ की गहरी, जानकारियों मानवीय रिश्तों, मनोंभावों और पुष्ट तथा परिपक्व संवेदनाओं

की जमीन पर उगता है। वह ऊपर-ऊपर जितना तथा जैसा दिखता है ठीक वैसा ही और उतना ही नहीं होता है। व्यंग्य का एक अलक्षित स्वभाव और चरित्र भी होता है वह पर्दे के पीछे रहकर भी अपनी ओजस्विता और तेजस्विता का संकेत भी देता रहता है।"[१]

व्यंग्य की नयी पौध ने गाँधी के कथन बुरा मत देखो, बुरा मत बोलो, बुरा मत सुनों के विपरीत व्यवहार किया है। इसने समाज की बुराइयों को देखा, समाज की बुराइयों को अपनी रचनाओं में कहा, और इस उद्देश्य से कहा कि सभी लोग उस बुराई को सुने। इस प्रकार युगीन परिस्थितियों को स्वर देना तत्कालीन साहित्यकारों का मुख्य उद्देश्य था। इसके लिए वे जहाँ-कहीं भी बुराई पाते थे, उसे अपनी रचना का विषय बनते। तत्कालीन रचनाकारों में स्पष्टवादिता और प्रखरता का स्वर अधिक तीक्ष्ण था।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि १९४७ से १९६० तक का कालकाण्ड व्यंग्य का शैशव काल था। जिसमें व्यंग्य कोई निश्चित विचारधारा, तत्व तथा मानक रुप स्थापित नहीं कर सका। यह काल व्यंग्य के गिरने और संभलने का काल था। इसमें मजबूती से पैर रखने के लिए व्यंग्य उठ रहा था। व्यंग्य की शैशवास्था १९६० के बाद समाप्त होती है और वह अपने बल चलना प्रारम्भ करता है।

व्यंग्य 'विधा' रुप में

१९६० तक हिन्दी साहित्य में हास्य और व्यंग्य सम्मिलित रुप से आता रहा है लेकिन १९६० के पश्चात व्यंग्य विधा के रुप में स्थापित हो गया। इसके पूर्व भी हिन्दी साहित्य में व्यंग्य परम्परा मिलती है लेकिन यह विधा के रुप में न होकर शैली के रुप में था। शैली से होकर विधा तक की यात्रा में व्यंग्य अपने को परिवर्तित और परिवद्धित करता रहा है। स्वातन्त्रयोत्तर काल का व्यंग्य जिन संवेदनाओं को अपने में समेटे है उसके पूर्व का व्यंग्य

---

१. श्याम सुन्दर घोष : व्यंग्य और विधा, पृष्ठ ६०

परिहास सा ही जान पड़ता है।

इधर का व्यंग्य लेखन निश्चित रुप से शैली के रुप में व्यंग्य लेखन न होकर विधा के रुप में व्यंग्य लेखन है क्योंकि कोई भी शिल्प एवं प्रविधि जब किसी लेखक के या व्यक्ति-विशेष के अन्तर्गत ही होती है तो वह शैली का रुप धारण किये रहती है। लेकिन वही शिल्प और प्रविधि जब बहुतायत रुप में मिलना प्रारम्भ हो जाती है तो 'विधा' का रुप धारण कर लेती है। डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी के अनुसार "विगत शताब्दी में लिखे गये हिन्दी व्यंग्य लेखन ने व्यंग्य को लेखन-शैली से उठकर विधा के रुप में प्रतिष्ठित किया है। जब किसी विशेष शिल्प एवं प्रविधि की रचनाएँ पर्याप्त संख्या में लिखी जाने लगती है एवं उस पर किसी विशिष्ट लेखक के स्थान पर साहित्य की परम्परा का आधिपत्य हो जाता है, तब उक्त शिल्प-प्रविधि को विधा के रुप में स्वीकार कर लिया जाता है। नाटक, कहानी, उपन्यास, निबन्ध जीवनी आदि साहित्य की विविध रुप-विधाओं के स्थापित होने की यही प्रक्रिया रही है। अपने सम-सामयिक परिवेश में व्याप्त असंगतियों को अणु-वीक्षण-यन्त्र से देखने और विसंगतियों को ध्वस्त करने का साहस रखने वाले व्यंग्यकारों ने स्वातन्त्रयोत्तर व्यंग्य लेखन को विधा का बाना दिया है।"[१]

व्यंग्य विधा के रुप में आने से पहले इस कोटि का लिखा जाता था कि न तो वह निबन्ध की कोटि में रखा जा सकता था और न कहानी की कोटि के अन्तर्गत। इसे मात्र व्यंग्य ही कहा जा सकता था। हिन्दी व्यंग्य में गद्य के इस मिश्रित स्वरुप को ही ग्रहण कर लिया तथा स्वातन्त्रयोत्तर काल के व्यंग्यकारों ने इसी, रुप-शिल्प-प्रविधि को अपनाकर अपना लेखन कार्य आगे बढ़ाया। अतः इस नये रुप शिल्प-प्रविधि को ही 'व्यंग्य विधा' के रुप में स्वीकार कर लेना चाहिए।

---

१. बालेन्दु शेखर तिवारी : हिन्दी का स्वातन्त्रयोत्तर हास्य और व्यंग्य, पृष्ठ १९८

यद्यपि हिन्दी के प्रमुख व्यंग्यकार परसाई व्यंग्य को विधा के रुप में स्वीकार करने का आग्रह नहीं करते हैं। उनके अनुसार "मेरे मत में व्यंग्य कोई विधा नहीं है, इसका अपना कोई स्ट्रक्चर नहीं है, यह एक स्पिरिट है जो हर विधा में आ सकती है। कहानी में नाटक में, उपन्यास में। बर्नाडशाँ का प्रधान स्वर व्यंग्य है लेकिन उसका मूल्यांकन नाटककार के रुप में होता है, व्यंग्य कविता से लेकर उपन्यास तक में आ सकता है।"[१] परसाई जी का मन्तव्य व्यंग्य को विधा के रुप में स्थापित करने के लिए आन्दोलन चलाने का नहीं था। उनकी दृष्टि में व्यंग्य कथन का प्रकार है कथ्य का नहीं, इसलिए वह किसी भी विधा में आ सकता है।

आधुनिक व्यंग्यकारों ने व्यंग्य की उपेक्षा पर तीखा आक्रोश जताया और व्यंग्य को विधा के रुप में स्थापित करने में अपना महत्वपूर्ण सहयोग भी दिया। इसमें डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी, शंकर पुणतोम्बेकर, प्रेम जनमंजय, नरेन्द्र कोहली आदि प्रमुख हस्ताक्षर हैं।

व्यंग्य को एक लम्बे अरसे से विद्वत समाज विधा के रुप में देखने को तैयार ही नहीं था। निबन्ध और कहानी का यह मिश्रित रुप किसी संज्ञा से अभिहित नहीं था। जैसाकि परसाई ने 'भूत के पाँव पीछे' की भूमिका में कहा है– "अब मन में यह अभिमान उठाये कि यह विशेष चीज है जिसका नाम तक होना बाकी है यह बात मैं समाप्त करता हूँ।" तात्पर्य यह कि व्यंग्य एक विशेष उत्पाद्य है जिसे अभी मान्यता नहीं मिली थी। लेकिन दूसरी तरफ बहस छिड़ गयी थी और इसे स्वीकार किया जाने लगा था तभी तो परसाई जी कहते हैं यह (व्यंग्य) अब शूद्र से ब्रह्मणत्व को प्राप्त हो गया है।

व्यंग्य को विधा के रूप में प्रतिस्थापित करने में स्वातन्त्रयोत्तर परिवेश की विसंगतियों

---

१. सं. कमला प्रसाद : आँखन देखी, पृष्ठ ४६

ने बहुत अधिक सहयोग दिया, क्योंकि इन्हीं विसंगतियों के कारण व्यापक स्तर पर रचनाकारों का झुकाव व्यंग्य की तरफ हुआ। इसी काल ने व्यंग्य को संरक्षण दिया तथा विकास के लिए कच्चा माल भी उपलब्ध करवाया। नित-नवीन विचारधाराएँ और समाजगत विखण्डित-मान्यताओं के कारण व्यंग्य ने अनेक रास्ते तलाशे। व्यंग्य में अपनी पैनी दृष्टि के कारण प्रचारित सत्य और वास्तविक सत्य के अन्तर को स्पष्ट कर जन सामान्य के सामने रखने का साहसपूर्ण कार्य किया। जैसे-जैसे जनता इस अन्तर को समझती गयी व्यंग्य के प्रति उसकी स्वीकारिता भी बढ़ती गयी। इस प्रकार सबसे पहले 'व्यंग्य' को जनता ने स्वीकार किया। विवश होकर आलोचकों को भी इसे स्वीकार करना पड़ा।

इस समय के रचनाकारों ने भी अपनी व्यापक एवं पैनी दृष्टि तथा गहरी संवेदना से व्यंग्य को विधा के रूप में स्थापित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

आज का समाज, व्यंग्य में सबसे अधिक सजीव है। जहाँ उसका सुख और दुःख, आकांक्षा और आशा, निराशा और कुण्ठा सभी कुछ एक साथ जीवित है। जीवनगत विसंगतियों को रोकर के समाप्त नहीं किया जा सकता है। इसलिए उचित होगा इस पर सर्जनात्मक व्यंग्य करके जिया जाय। हिन्दी व्यंग्यकारों ने व्यंग्य की आत्मा को बराबर अपनी प्रतिभाओं से संपृक्त किया।

❑

तृतीय अध्याय

हिन्दी के प्रमुख व्यंग्यकार और उनका साहित्यक अवदान
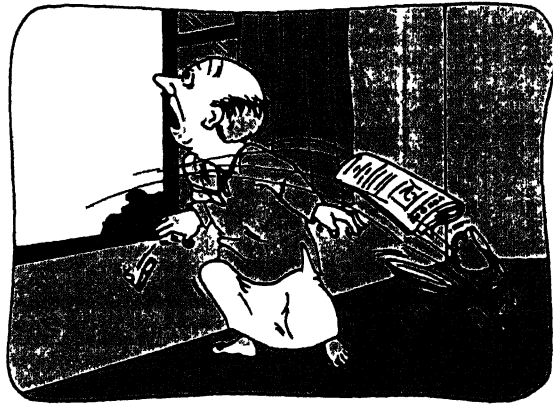
हिन्दी के प्रमुख व्यंग्यकार और उनका साहित्यिक अवदान

व्यंग्य समाज का एक्सरे है जो वास्तविक चित्र खींचता है जो यह दिखलाने का प्रयास करता है कि उस समाज के अन्दर रोग कहाँ स्थित है। व्यंग्य समाज को समझने की नयी दृष्टि पैदा करता है। व्यंग्य मानव को समझदार बनाने का कार्य करता है। डॉ. धनंजय वर्मा इसी सन्दर्भ में कहते हैं कि "सच्चे और सार्थक व्यंग्य की यह ताकत होती है कि वह मूल्यों की आपा धापी और संक्रान्ति का चित्र ही नहीं देता वरन् नये मूल्यों की तलाश और उनकी और इशारा भी करता है।"[१]

आज का समय मँहगाई, अभाव, अकाल, बाढ़, भ्रष्टाचार आदि से चारों तरफ घिरा हुआ है। इस त्रासदी को व्यंग्य ही प्रमुख स्वर दे सकता है। वर्तमान समय रुमानियत और भावुकता का नहीं है, युग की कटु स्थितियों में इनका कोई स्थान नहीं रह गया है। व्यंग्य को जिन लोगों ने अपना प्रमुख हथियार बनाया। उनके नाम इस प्रकार है।

हरिशंकर परसाई

"हरिशंकर परसाई हिन्दी व्यंग्य क्षेत्र के ऐसे हस्ताक्षर है जिन्होंने व्यंग्य को विधा नहीं 'स्पिरिट' कहा और उन्हीं के कारण व्यंग्य को विधा का दर्जा प्राप्त हुआ और अन्ततः स्वयं उन्होंने भी स्वीकार किया कि मैं एक व्यंग्यकार हूँ।"[२]

इनके ऊपर अलग से विस्तृत विचार किया जायेगा।

शरद जोशी

व्यंग्य को विधा के रूप में प्रतिस्थापित करवाने में परसाई के साथ शरद जोशी भी लगे

---

१. नई कहॉनियां : मार्च १९६९, पृष्ठ ११७

२. हरिशंकर परसाई, मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं 'लेखक की बात'

हुए थे। शरद जोशी ने अपनी सम्पूर्ण क्षमता के साथ जीवन की सभी विसंगतियों पर कड़ा प्रहार किया है।

शरद जोशी ने धर्म के क्षेत्र में व्याप्त ढकोसलों पाखण्डों धर्म स्थलों के अनैतिक कार्यों को अपने व्यंग्य का प्रमुख विषय बनाया है। 'अतृप्त आत्माओं की रेल यात्रा' 'बुद्ध के दाँत' आदि इसके उदाहरण हैं।

शरद जोशी की निगाह में सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन जनता से पैसा बटोरने के लिए, अखबारों में प्रसिद्धि पाने के लिए किया जाता है। 'एक बैले की तैयारी' में शरद जोशी लिखते हैं।

"कला के क्षेत्र में सफलता की सबसे बड़ी ट्रिक है, 'शहर में जाकर गाँव बेचिए' यदि एक मुट्ठीभर लड़कियां ग्रामीण वस्त्रों में मंच पर बिखेर दी जाये तो शहर का दर्शक आँखे फाड़े देखता रहता है, जब तक पर्दा न गिरे।"[१]

कला के नाम पर नकली विकृतियों को जीवन में अपनाने पर वे खोखला बना देती है। इसकी ओर लेखक इंगित करते हुए शरद जोशी कहते हैं–

"लोग कपड़ा नहीं रंग देखते हैं, खोपड़ी नहीं बालों की सजावट देखते हैं, चूड़ियां, लिपिस्टिकों और कपड़ों के रंग मैंचिंग की खोज की जाती है।"[२]

'विदेश से लौटे' नमक निबन्ध में उन्होंने विदेश जाने वाले के ऊपर व्यंग्य किया है तो अपना सर्वस्य त्याग करके भी विदेश जाना चाहते हैं। वे लिखते हैं कि "विदेश हमारे लिए आकर्षण का केन्द्र है हर भारतीय की ख्वाइश होती है कि जीवन में कम से कम एक बार विदेश यात्रा करें। विदेश से यात्रा कर आने पर वह पहले जैसा नहीं रह जाता। वह धरती

---

१. शरद जोशी – तिलिस्म, पृष्ठ १२८, १२९

२. शरद जोशी – रहा किनारे बैठ

से बित्ता भर ऊपर उठ जाता है विदेश यात्रा के लिए अपनी जमीन, अपना घर सब कुछ बेच डालता है क्योंकि विदेश स्वर्ग है। वहाँ पव है, पेय है, यहाँ वहाँ छितराती कन्याएं हैं। पॉप-शो है।"[१]

आत्म प्रशंसा और आत्म व्यंग्य के छीटे भी शरद जोशी के व्यंग्य रचनाओं में देखने को मिलते हैं – "आ गया, आ गया। शरद जोशी का वह उपन्यास आ गया। जिसका स्वयं लेखक को बरसों से इन्तजार था। आ गया, जिसने पढ़ा वह पछताया, जिसने न पढ़ा वह पछताया। हिन्दी की बहुमूल्य कृति, शरद जोशी की लौह लेखनी से प्रसूत एक लोचदार रचना। हिन्दी में कचरे में एक रत्न ग्राण्ड रिडक्शन सेल। दो रुपये का उपन्यास, डेढ़ रुपये में, पृष्ठ पूरे।"[२]

जासूसी और सैक्स से भरपूर रचनाओं की माँग पर शरद जोशी ने 'मुडिका रहस्य' में व्यंग्य किया है। इसमें लिखते हुए उन्होंने प्रतिपादित किया। इसका शीर्षक ही इस प्रकार का हो जायेगा 'मुडिका रहस्य उर्फ किस्सा कुमारी शकुन्तला का'। इसी प्रकार दिनकर कालिदास का गुणगान करने वाले दरबारी कवि शाम को जासूसी उपन्यास खरीदकर घर ले आते और उनका पाठ स्वयं, उनकी पत्नियां करती।

व्यक्ति व्यंग्य भी शरद जोशी ने बहुत किया अज्ञेय के ऊपर व्यंग्य करते हुए वे लिखते हैं कि "आज का साहित्यकार आरामकुर्सी पर बैठे-बैठे इन्द्र धनुष रौंदने का दम भर रहे हैं।" उनकी 'नदी में खड़ा कवि' रचना परोक्ष रुप से नव कविता प्रयोग पर आधारित है। जैसे–

"कितने आंगन में कितने द्वार। कितनी भावों में कितनी बार। कभी भँवती, कभी शाश्वती। जमाता रहा। स्त्रोत और सेतु कभी हरी घास पर क्षण भर। कभी महावृक्ष के नीचे। बैठ महान तो करा लिया। लो मैं नहा लिया।"[३]

---

१. धर्म युग – १३ जुलाई १९७५ पृष्ठ २०, विदेश से लौटे

१. शरद जोशी – रहा किनारे बैठ – पृष्ठ ३६

२. शरद जोशी – यथा सम्भव, पृष्ठ ३२६

इसी प्रकार शरद जोशी आगे भी ऐसे धन्य मान्य कवि और सेवकों पर आलोचना करते हुए दिख जाते हैं।

शरद जोशी किसी वर्ग से प्रतिबद्ध होकर रचना नहीं करते थे। वे मात्र विसंगतियों को उभारने वाले लेखक थे वे सेना के सिपाही नहीं बल्कि अखबार के पत्रकार थे।

शरद जोशी ने विश्वविद्यालय में होने वाले शोध पर भी व्यंग्य करता है इनके अनुसार शैली, भाषा और विभिन्न वादों का प्रभाव शोध-पत्रों में दिखला कर उन्हें मुर्दा-इतिहास की अलमारी में पटक दिया जाता है। इसी प्रकार विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम को लेकर इन्होंने 'घास छीलने का पाठ्यक्रम' में व्यंग्य किया है। शिक्षा के बाजारीकरण पर इन्होंने 'उत्तम शिक्षा की व्यवस्था शीघ्र प्रवेश लें' के अन्तर्गत खूब करारा व्यंग्य कसा है।

बहुधा शरद जोशी के ऊपर यह आरोप प्रक्षेपित किया जाता है कि उनका व्यंग्य लेखन सुविधा परस्त या मौका परस्त है। वे सामाजिक, राजनैतिक, साहित्यिक क्षेत्रों की उन्हीं विसंगतियों को चुनते है जिन पर खतरे उठाये बगैर चोट की जा सके। कतिपय विद्वान उनके व्यंग्य लेखन को 'फैशनेबल व्यंग्य लेखन' स्वीकार करते हैं। यह आरोप एकांगी प्रतीत होता है।

शरद जोशी व्यंग्य और सरकार की दोस्ती को स्वीकार नहीं करते हैं उनके मत में इन दोनों का शाश्वत अलगाव है क्योंकि व्यंग्य प्रहार करता है और सरकार प्रचार द्वारा प्रहार को कम करना चाहती है।

सरकारी काम काज की आलोचना शरद जोशी ने अपनी आलोचना का प्रमुख विषय बनाया है वे लिखते हैं कि सरकारी कामकाज में 'आँख' नहीं होती है उसे हर बात का प्रमाण चाहिए। जीवित आदमी को भी 'जीवित होने का प्रमाण पत्र' देना पड़ता है। यहाँ बैठा व्यक्ति अपने बाप को भी नहीं पहचानता क्योंकि वह सिद्धान्त का पक्का है।

शरद जोशी ने 'साहित्य के महाबली' में 'साहित्य के दादाओं' के ऊपर व्यंग्य कसा है।

'सरकार का जादू' में वे मुर्गी और अण्डा दोनों के गायब होने की कहानी गढ़ते हैं। अन्ततः जाँच होने पर अण्डा मिनिस्टर की जेब से, सी. आई. डी. की नाक से श्रमिक नेता की टोपी से, इंजीनयर की बगल से तथा बाबू के मेज से निकलता है।

शरद जोशी ने 'हम भ्रष्टन के भ्रष्ट हमारे' में भ्रष्टाचार के विभिन्न मौकों की तलाश की है। वे लिखते हैं "जहाँ जहाँ जाती है सरकार, उसके नियम, कानून, मंत्री, अमला कारिंदें। जहाँ-जहाँ जाती है सूरज की किरन, वहीं-वहीं पनपता है भ्रष्टाचार का पौधा। आई. ए. एस., एम. ए. विदेश रिटर्न आजादी के आन्दोलन में जेल जाने वाले चरखे के कतैया, गाँधी जी के चेले, बयालीस के जुलूस वीर, मुल्क का डंण्डा अपने हाथ से बढ़ाने वाले, जनता के अपने, भारत माता के लाल, काल अंग्रेजन के, सभी के ठाठ हो गये है, सुसरी आजादी मिलने के बाद। इस मामले में राष्ट्र में एकता है।"[१]

शरद जोशी अफसरशाही पर व्यंग्य करने के लिए 'जीप पर सवार इल्लियां' लिखी है। इसमें उन्होंने दिखलाया है कि इल्लियों का चने के खेत में आतंक की जाँच के लिए, सरकारी अफसर जीप पर सवार होकर जाते हैं। लौटते वक्त उनकी जीप पर हरे-भरे चने के पेड़ लदे है। "एकाएक मुझे लगा कि जीप पर तीन इल्लियां सवार है जो खेतों की ओर चली जा रही है, तीन बड़ी-बड़ी इल्लियां, सिर्फ तीन ही नहीं ऐसी हजारों इल्लियां है, लाखों हैं इल्लियां, ये सिर्फ चना ही नहीं खा रहीं है। सब कुछ खाती है और निश्शंक जीपों पर सवार होकर चली जा रही हैं।"[२]

'समाज' और 'गरीबी हटाओ' जैसे नारे शब्द मात्र रह गये। "भूख के मारे विरहा विसर जाये, कजरी-कबरी भूल जाये समझ में आता है मगर अभाव और मँहगाई में समाजवाद को भूल जायेंगे यह कल्पना मार्क्स को भी नहीं होगी।[३] गरीबी हटाने के लिए सरकार कमर कस

---

१. शरद जोशी – पिछले दिनों – पृष्ठ ७८

२. शरद जोशी – जीप पर सवार इल्लियां – पृष्ठ ३२, ३३

२. शरद जोशी – रहा किनारे बैठ, पृष्ठ ४७

रही है लगता है हमें कुर्बानी देना होगा। जो जहाँ है, और जिसकी जो गरीबी है, हटा ले। जैसे जिसकी गरीबी साइकिल में है तो वह उसे फेंककर स्कूटर मोल ले। जहाँ गरीबी दिखे, हटाओ, हटाओ, हटाओ वह हटेगा।[१]

'सेवकराम निर्भय के तीन पत्र' में उन्होंने चुनाव खर्च को लेकर लिखा है। इसमें जाति के आधार पर वोट मांगने की परम्परा को भी व्यंग्य का विषय बनाया गया है। 'चुनाव एक मुर्गाबीती' में उन्होंने उल्लेख किया है कि जनता का वोट पहले कम्बल, रजाइयाँ देकर छीन लिया जाता है, जीतने के बाद इनकी खाल खींच ली जाती है और खून पी लिया जाता है 'वर्माजी चुनाव और टूटू' में नेताओं के कृत्यों को लेकर लेखन किया है। वे कहते हैं तुम भाषण तो देते हो जनता की सरकार, जनता के लिए लेकिन जब खाते हो तो केवल अपने लिए। आगे वे लिखते हैं राजनीति में शर्मिन्दा होने का रिवाज नहीं है, अगर राजनीतिज्ञ शर्मिन्दा भी होते है तो अपने कृत्यों के लिए नहीं बल्कि दूसरों के कृत्यों के लिए।

'सरकार का जादू' में दल-बदल की ओछी राजनीति पर भी चर्चा की गयी है। जो स्वार्थ के कारण मंत्री पद पाने के उद्देश्य से दल-बदल करते हैं।

जहाँ शरद जोशी ने 'सरकार का जादू' में कांग्रेस सरकार की नीतियों का कच्चा-चिट्ठा खोला है वहीं 'कार साक्षात्कार' रचना में जनता सरकार के ऊपर व्यंग्य किया गया है जो एक व्यक्ति नहीं बल्कि पाँच व्यक्ति मिलकर चला रहे हैं। 'नाई-नाई कितने बाल' में आयोग प्रणाली के ऊपर प्रश्न सूचक दृष्टि डाली गयी है। 'अलविद्या पधश्री', 'कालपात्र', 'सम्पूर्ण क्रान्ति' आदि रचनाओं में विसंगतियों को उठाकर करारा व्यंग्य किया गया है।

शरद जोशी का अधिकांश व्यंग्य राजनीतिक रहा है। वे हमेशा वर्तमान सरकार की विसंगतियों पर प्रहार करते है उनकी दृष्टि में शासक के सुधरने पर शासन व्यवस्था अपने आफ सुधर जायेगी।

---

१. शरद जोशी – रहा किनारे बैठ – पृष्ठ ४७

शरद जोशी का अधिकांश व्यंग्य आक्रोशित मानसिकता की प्रतिक्रिया होती है परिणामतः उनका व्यंग्य किसी घटना से सन्दर्भित होती है। सन्दर्भ के अभाव में रचना की प्रभावशालिता और उसकी तीखी मार कम समझ में आती है। वे अपने विभिन्न स्तम्भ लेखों में भी किसी घटना पर प्रतिक्रिया स्वरुप लिखते रहे हैं। डा. बालेन्दु शेखर तिवारी उनके लेखन कार्य को इस प्रकार व्यक्त करते है –

"घटना के घटने में देर लगती है उसे टॉपिक बनाकर अपना नया व्यंग्य रच डालने में शरद जोशी को देर नहीं लगती है।"[१]

डॉ. शंकर पुणतोबकर के अनुसार "शरद जोशी के व्यंग्य में विवरण का कौशल, तर्क, चुटकी भरी विमुग्धता, रुप विधान में रचना–वक्रता मिलती है। वे पौराणिक प्रसंग को कम ही छेड़ते हैं।"

शैली

विषय विभिन्नता के साथ शरद जोशी के व्यंग्य में शैली की भी अनेकरुपता देखने को मिलती है। भाषा का प्रभावी प्रयोग एवं शिल्प की अच्छी भंगिमाएं उनके व्यंग्य रचनाओं में बिखरी पड़ी है।

इनकी रचनाएं विभिन्न शैलियों का प्रतिनिधित्व करती है 'चुनाव एक मुर्गाबीती' प्रचतन्त्र शैली में लिखा गया है, 'मुद्रिका रहस्य' जासूसी शैली का प्रतिनिधित्व करती है। 'लिलिस्य' तिलिस्म शैली में, 'अतृप्त आत्माओं की रेल यात्रा' फैंटेसी शैली में, 'मेघदूत की पुस्तक समीक्षा' आलोचना शैली में लिखी गयीं रचनाएं है।

शरद जोशी अपनी काव्य प्रतिभा का परिचय 'क्रिकेट का अन्धायुग', 'नदी में खड़ा कवि', 'टाइपराइटर पर धारा प्रवाह' आदि रचनाओं में दिया है। इन रचनाओं में व्यक्ति केन्द्रित व्यंग्य

---

१. बालेन्दु शेखर तिवारी – हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान, पृष्ठ १६

किया गया है।

शरद जोशी का व्यंग्य शिल्प का अच्छा उदाहरण है लेकिन कभी-कभी वे शिल्प के चक्कर में कथ्य को किनारे कर देते हैं। 'आये न बालम वादा करके, कैसा जादू डाला' में इसी प्रकार का प्रभाव लक्षित होता है। बम्बइया फिल्मी भाषा का भी प्रयोग कहीं-कहीं दिखलायी पड़ता है। इसी प्रकार हिन्दी मिश्रित अंग्रेजी के भाषा प्रयोग को 'गॉडेस लक्ष्मी याने पाइसा का गॉडेस' में उन्होंने दिखलाया। "आक्खा होम शुड लुक ब्यूटीफुल, यू सी नई तो गाडेस लक्ष्मी घर में आयेगा तो बोलेगा ओह शिट ये कोई गॉडेस के रहने का जगह है। अम इधर नहीं आयेगा। ओ चला जायेगा, नाराज होकर। गॉडेस नाराज होकर चला जायेगा, तो तुम्हारा बाप को पइसा कइसे मिलेगा ? तुम पिक्चर कइसे जायेगा, स्कूल का फीस कइसे देगा ?"[१]

'पुराने पेड़ की बातें' में 'हेड आफ डिपार्टमेन्ट' का मानवीकरण करके व्यंग्य किया गया है। 'उपमाओं की उपयोगिता' में पुरानी उपमाओं को ही व्यंग्य का आधार बनाया गया है। मुहावरों एवं लोक्तियों का प्रयोग इन्होंने व्यंग्य में अधिक किया है।

व्यंग्य के सम्बन्ध में

शरद जोशी 'व्यंग्य' के सम्बन्ध में कोई निश्चित विश्लेषण नहीं प्रस्तुत करते हैं। यदा-कदा यथा प्रसंग ही इन्होंने व्यंग्य के सम्बन्ध में कुछ वक्तव्य दिया है। अपनी दो रचनाओं 'यथासम्भव' और 'मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं' में ही इन्होंने भूमिका लिखी है। अन्य रचनाओं की इन्होंने भूमिका भी नहीं लिखी है।

व्यंग्य के सन्दर्भ में उन्होंने 'व्यंग्यम्' में लेख लिखा है कि "व्यंग्य कर्म से पलायन नहीं, बल्कि निष्कर्ष और दुष्कर्म के खिलाफ लिखा गया सार्थक साहित्य है। हिन्दी व्यंग्य उपेक्षा एवं

---

१. शरद जोशी – यथा सम्भव – पृष्ठ ४२९

२. शरद जोशी – १ जनवरी १९७७ – पृष्ठ ८

विरोध की स्थितियों में गुजर चुका है और उसका स्वरूप अब साफ है, जहाँ कहीं सच है, वहाँ व्यंग्य है। एक अन्य स्थान पर वे लिखते हैं कि "मेरे अन्तर में एक कवि है जो काफी देर होने के बाद सुप्त हो जाता है भीतर के कवि को सुप्त करने के लिए यह 'हूटिंग' किसने की तो यह निश्चित है– व्यंग्य ने। कवि अतिरिक्त कल्पनाशीलता, भावुकता का प्रतीक माना जाता है और व्यंग्य इस सबका विरोध करता है जो सन्दर्भ यथार्थ से कटते हैं और विसंगति उत्पन्न करते है लेखक उन पर व्यंग्य करता है क्योंकि व्यंग्य कोई अजूबा या ताज्जुब नहीं है। जिस देश के लोग हजारों वर्षो से आक्रमण, अत्याचार, अन्याय, भूख, गरीबी, बीमारी, निराशा सहन करते हुए अपने कतिपय मूल्यों, विश्वासों और आस्थाओं से जुड़े है। उनमें जिन्दा रहने के लिए कोई 'सेन्स आफ ह्यूमर' है यही सेन्स ऑफ ह्यूमर' व्यंग्य की प्रतिबद्धता है जो अन्याय, अत्याचार और निराशा के विरुद्ध लड़ने की ताकत देता है, प्रदान करता है और व्यंग्य की पहचान बन जाती है कि साहित्य कष्ट सहती सामान्य जिन्दगी के करीब है या जुड़ा हुआ है।"[१]

शरद जोशी ने समाज की सभी विसंगतियों को लक्ष्य करके व्यंग्य किया है। उनकी शैली प्रभावी रही है। इनके बाद की एक पीढ़ी इनका अनुसरण कर रही है। डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी जी शरद जोशी के विषय में कहते हैं "हिन्दी व्यंग्य में संप्रेषण की जितनी विविधताएं उपलब्ध है भाषा का जितना अनूठापन विद्यमान है, शिल्प की जितनी भंगिमाएं मौजूद है उन सबका समन्वित श्रेय शायद सबसे अधिक शरद जोशी को दिया जा सकता है।"[२]

अन्ततः यह कहा जा सकता है कि सामाजिक व्यवहार, साहित्यकारों का खोखलापन, प्रशासनिक कमजोरी अन्धविश्वास आदि के ऊपर शरद जोशी की कुशलतापूर्वक व्यंग्य प्रहार किया है। शरद जोशी का विशिष्ट योगदान व्यंग्य विधा की दृष्टि से यह रहा है कि इन्होंने अपनी विशिष्ट शैली द्वारा, व्यंग्य विधा को रोचक, प्रौढ़ और उदात्त चेता बनाया।

---

१. शरद जोशी – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं (भूमिका)

२. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान, पृष्ठ १५

श्री लाल शुक्ल

परसाई के समकालीन श्रीलाल ने 'स्वर्ग ग्राम और वर्षा' नामक रचना के माध्यम से व्यंग्य क्षेत्र में प्रवेश किया। 'अंगद का पाँव' उनकी दूसरी व्यंग्य रचना थी। लेकिन व्यंग्यकार के रूप में प्रतिष्ठित करने वाली उनकी महत्वपूर्ण रचना थी 'राग दरबारी'। 'राग दरबारी' से पूर्व जितने भी व्यंग्य उपन्यास लिखे गये। वे किसी आवरण में छुपे होते थे। 'रानी नागफनी की कहानी' फैंटेसी में लिखित उपन्यास है। राधाकृष्ण का उपन्यास सपनों की चादर ओढ़कर लिखी गयी है। श्याम सुन्दर घोष का 'उलूक कथा' उल्लू प्रतीक को पकड़ता है। डॉ. पुझताम्बेकर 'एक मंत्री स्वर्ग लोक' में पाठकों को स्वर्ग की यात्रा कराते हैं। लेकिन 'राग दरबारी' रेणु के अंचल को अपनाकर पहला आवरणहीन उपन्यास है जिसे 'व्यंग्य उपन्यास' कहा जाता है।

'राग दरबारी' सम-सामयिक राजनैतिक विचारधारा का स्पष्टीकरण करने वाला उपन्यास है। उपन्यास की विशेषता इस बात में विशेष है कि इसमें किसी समस्या या पात्र विशेष पर व्यंग्य नहीं किया गया है। बल्कि इसमें सम्पूर्ण देश को व्यंग्य का विषय बनाया गया है। इस कृति में 'शिवपालगंज' की कथा के माध्यम से 'भारत की आत्मा' गाँवों में सभ्य समाज की धुल रही विकृतियों को दिखलाया गया है। श्रीलाल शुक्ल 'राग दरबारी' में एक स्थान पर लिखते हैं –

"जो कहीं नहीं है, वह यहाँ है, और जो यहाँ नहीं है वह कहीं नहीं है।[१] संक्षेप में यह रचना मात्र नहीं है, एक सामाजिक दस्तावेज है जिसमें देश की मनोदशा का खाका खींचा गया है।

श्रीलाल शुक्ल का व्यंग्य एक वैचारिक आधार और तीक्ष्ण भावात्मक सम्बन्ध को सम्मिलित करते हुए लिखा गया है।

स्तरहीन और ऐरी-गैरी रचना के सन्दर्भ में व्यंग्य करते हुए शुक्ल जी कहते हैं कि

---

१. श्रीलाल शुक्ल – रागदरबारी, पृष्ठ ६६

"भूमिहीन लेखकों के लिए भूमिका का इसलिए और भी महत्व है। भूमिका इसलिए होती है कि पाठक समझ ले लेखक की एक अपनी भूमि भी होती है।" इसी प्रकार उन आलोचकों को फटकारते हैं जो अपनी आलोचना द्वारा रचना को सरल बनाने की अपेक्षा दुरुह बना देते हैं। उनकी दृष्टि में आलोचना का मूल कार्य सुपाच्य और रसनिष्पत्ति में सहायता करना होना चाहिए। इसके विपरीत आज की आलोचना मूल कृति को ही क्लिष्ट बना देती है।

शुक्ल जी का व्यंग्य वाण किसी प्रतीक पर चढ़कर नहीं छूटता। वे लक्ष्य पर सीधे-सपाट व्यंग्य करना प्रारम्भ करते है।

पाश्चात्य शैली को अपनाने तथा गोरे लोगों से मिलने में हम गर्व का अनुभव करते है। इसको लेकर उन्होंने 'यहाँ से वहाँ' में व्यंग्य किया है कि किस प्रकार हम गोरे लोगों से मिलने को लालायित रहते हैं और उनके प्रभाव में आकर पहनावा और अपनी संस्कृति को बदलने पर उतारु हो जाते हैं।

सांस्कृतिक आदान-प्रदान करने के बहाने विदेश भ्रमण की प्रवृत्ति पर भी शुक्ल जी ने प्रभावी व्यंग्य किया है।

राजनैतिक व्यंग्य शुक्ल जी की रचनाओं में अधिक मिलता है। नेताओं के ऊपर व्यंग्य करते हुए वे लिखते हैं कि नेताओं का काम आज क्या है ? बोलते रहना। बहुत बोलने से लोग उसे विचारशील प्राणी समझने लगते हैं।[१]

प्रजातान्त्रिक प्रणाली की बैलगाड़ी से तुलना करते हुए कहते हैं जिस प्रकार कालिदास को उत्कृष्ट साहित्य रचने की प्रेरणा बैलगाड़ी से मिली थी ठीक उसी प्रकार प्रजा तन्त्र को बैल गाड़ी से प्रेरणा मिली है। बैलगाड़ी कैविनेट के समान है गाड़ीवान प्रेसीडेन्ट का कार्य करता है जो बैलों को चलाता है और नहीं भी चलाता है।[२]

---

१. श्रीलाल शुक्ल – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं, पृष्ठ ९

२. श्रीलाल शुक्ल – अंगद का पाँव, पृष्ठ ८६

शुक्ल के सबसे अधिक प्रभावशाली व्यंग्य अफसरशाही से जुड़े हुए है। जिसमें उन्होंने अफसरों की कार्य प्रणाली, उनकी भाव-भंगिमा, अपने मातहतों से उनके व्यवहार आदि के ऊपर व्यंग्य किया गया है। 'अंगद का पाँव' में 'सी आफ' करने को लेकर नौकरों की लाचारी का प्रदर्शन किया गया जिसमें चाहकर भी रेलगाड़ी छूटने से पहले वे लौट नहीं सकते।

अफसरों के व्यवहार और कार्यप्रणाली को 'कुत्ते और कुत्ते' में अच्छी तरह से शुक्ल जी ने व्यंग्य का विषय बनाया है।

छात्रों की अनुशासनहीनता को उन्होंने उन अर्थों में अनुशासनहीनता होते नहीं प्रकट किया जो सर्वमान्य है। "क्लास न आना, फीस न देना, अध्यापकों से अबे-तबे करना, किताबों को कभी न देखना, सहपाठिनी छात्राओं को टकटकी लगाकर देखना, ऊल-जुलूल कपड़े पहनना, उससे भी ज्यादा ऊलजुलूल बोली बोलना यह सब अनुशासनहीनता में नहीं आता।"[१]

डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी ने श्रीलाल शुक्ल के विषय में लिखा है कि "श्री लाल शुक्ल का व्यंग्य बुरा बतलाने भर का पक्षधर नहीं हे। अपितु बुरी बात के परिपार्श्व से झाँकती अच्छी बात को कुरेदकर निकालने का प्रयास भी है।"[२]

शैली

श्री लाल शुक्ल की अधिकांश रचनाएं व्यंग्य की फुलझड़ी में दिखलायी पड़ती है। जैसे–

"आज के साहित्यिक, साहित्यिक नहीं लठैत है लठैत"

"अफसर का कुत्ता विकासशील देशों की तरह पनपता है"

"अपनी परीक्षाएं छात्रों के लिए भले बेकार हो, मास्टरों के लिए बड़े काम की चीज है।

---

१. श्रीलाल शुक्ल – अंगद का पाँव, पृष्ठ १०६

२. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान

अलंकारों एवं मुहावरों का प्रयोग भी श्रीलाल शुक्ल ने यत्र-तत्र किया है। संस्कृतनिष्ठ शब्दावली का प्रयोग भी वे करते हैं।

श्री लाल में व्यंग्य शैली की विविधता नहीं थी। व्यंग्यकार के रुप में प्रतिष्ठित होकर भी उनकी एक रचना 'राग दरबारी' ही का नाम आता है।

व्यंग्य के सन्दर्भ में

'मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं' के अन्तर्गत 'परिचय' के द्वारा तथा 'यह घर मेरा नहीं' में 'अपने बारे में' इन्होंने व्यंग्य के ऊपर प्रकाश डाला है। वे अपने व्यंग्य लेखन के विषय में वे कहते हैं कि क्षमा तब माँगनी पड़ेगी जब ये रचनाएं पाठकों का केवल मनोरंजन करे।[१] मुझे जो कुछ कहना था वह मैंने अपनी रचनाओं में कह दिया है। उसके अलावा मुझे कुछ नहीं कहना है।"[२]

श्री लाल शुक्ल के व्यंग्य वैशिष्ठ्य के विषय में उपेन्द्रनाथ अश्क लिखते हैं कि "श्री लाल शुक्ल ऐसे सशक्त लेखक है जिन्होंने व्यवस्था के अन्दर रहते हुए भी नितान्त निर्मम और निरपेक्ष-भाव से उसे बीच बाजार नंगा कर दिया।"[३] श्री रघुवीय सहाय उनके व्यंग्य को और अधिक स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि "वह (श्रीलाल शुक्ल) अपने समकालीन परसाई से काफी भिन्न है, जो कि टूटने योग्य है उसे तोड़ डालने के कायल है और शरद जोशी या रवीन्द्रनाथ त्यागी से तो बहुत ही भिन्न है जिन्होंने चुनी हुई चीजों पर हँसने-हँसाने में दक्षता अर्जित की है। श्रीलाल शुक्ल प्रेमचन्द्र और अज्ञेय के अधिक निकट पड़ते है जो टूटे हुए मूल्यों की स्थापना के लिए प्रयत्नशील है और बंकिम के तो बहुत निकट है क्योंकि वह भी बार-बार उसकी याद दिलाते है जो टूट चुका है वह टूटकर नष्ट होने योग्य नहीं था।"[३]

विसंगतियों को उभारने में श्रीलाल लाठी और आक्रोश का सहारा नहीं लिया है उन्होंने

१. श्रीलाल शुक्ल – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं, पृष्ठ ६

२. प्रकर, अप्रैल १९८१, पृष्ठ १५

३. श्रीलाल शुक्ल – यहाँ से वहाँ, 'परिचय' पृष्ठ २, श्री रघुवीर सहाय का अभिमत

परिवेश के द्वारा विद्रूपताओं को प्रकट होने दिया। शिक्षा, साहित्य, समाज और राजनीति के ऊपर शुक्ल जी अधिक व्यंग्य कसा है।

रवीन्द्र नाथ त्यागी

रवीन्द्र नाथ त्यागी हिन्दी व्यंग्य के प्रतिस्थापक 'व्यंग्यत्रयी' में से एक है। परसाई और शरद जोशी के बाद ये अगली कड़ी है जिन प्रमुख लोगों ने व्यंग्य को स्वतन्त्र विधा के रूप में प्रतिष्ठा दिलाने में सहयोग किया रवीन्द्र नाथ त्यागी उनमें प्रमुख हस्ताक्षर हैं। डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी जी ने उनकी रचना-प्रक्रिया के सन्दर्भ में कहा है कि "रवीन्द्र नाथ त्यागी की व्यंग्य रचनाओं में कहीं सें रोचकता का सबल नहीं छोड़ा गया है। सम्भवतः यह उनकी व्यंग्य रचना की विशेषता भी है और खामी भी।"[१]

रवीन्द्र नाथ त्यगी ने बहुत अधिक व्यंग्य रचनाएं की है जिनमें प्रमुख इस प्रकार है– 'खुली धूप में नॉव (१९६३), 'भित्ति चित्र' (१९६६), 'मल्लिनाथ की परम्परा' (१९७१), 'कृष्णवाहन की परम्परा' (१९७१), 'देवदार के पेड़' (१९७३), 'शोक सभा' (१९७४), 'फुटकर' (१९७६), 'अतिथिकक्ष', 'मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ' (१९७७), 'उर्दू-हिन्दी हास्य व्यंग्य' (१९७८), 'फूलों वाले कैक्टस' 'सुन्दर कली' (१९७८), 'ऋतु वर्णन' (१९७९), 'भद्रपुरुष' (१९८०), देश-देश के लोग (१९८२), 'पदयात्रा' (१९८५), 'पराजित पीढ़ी के नाम' (१९८८), 'प्रसंग वश' (१९८८), 'रवीन्द्र नाथ त्यागी', 'प्रतिनिधि व्यंग्य' (१९८९) आदि।

रवीन्द्र नाथ त्यागी का रचना संसार विस्तृत था जहाँ साहित्य, सरकारी कर्मचारी, प्रेमी-प्रेमिका, मित्र-शत्रु, नौकर-चाकर, भ्रष्टाचार-रिश्वत, मँहगाई-बेकारी, रुढ़िया अन्धविश्वास, साहित्य प्रकृति, शिक्षा-दीक्षा, आलोचना, शोध कार्य, समाजवाद, परिवार नियोजन आदि सभी विषय सम्मिलित है। इन सभी के बीच रवीन्द्र नाथ त्यागी 'सजीली नव यौवना' के लिए भी स्थान

---

१. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – हिन्दी का स्वातन्त्रयोत्तर हास्य और व्यंग्य, पृष्ठ २१०

निकाल कर उसे डाल देते है जिसके कारण उनके व्यंग्य को 'काता सम्मत और कान्ता संग' व्यंग्य कहा जाता है।

धर्म के ठेकेदारों के ऊपर इन्होंने 'इतिश्री भगवान उवाच' में जमकर खबर ली है। इसमें इन्होंने उनके इच्छित फल देने की घोषणा को व्यंग्य का मुख्य लक्ष्य बनाया है। इसी प्रकार 'अन्धे लोगों का देश' में उन्होंने ढोंगी साधुओं और अन्ध भक्तों के ऊपर व्यंग्य करते हुए लिखा कि "कोई दस ही दिन में उन्होंने सेठानी जी से लेकर जमादारिन तक सबको पवित्र कर दिया, सन्तों में भेदभाव कहाँ"[१] 'यथा कदा हि धर्मस्य' में इन्होंने भगवान को भी नहीं छोड़ा जो समाज के पतित होने की प्रतिक्षा करता है।

समाज और साहित्य की चर्चा करते हुए उन्होंने 'एक बदलता हुआ नायक' में लिखा कि "अब साहित्य और समाज के बीच से दर्पण हट गया और वह नाई की दुकान पर चला गया।"[२]

साहित्य चोरी के ऊपर 'अन्धें लोगों का देश' में व्यंग्य किया गया है तो कवि-सम्मेलनों, अभिनन्दन ग्रंथों के ऊपर 'कवि सम्मेलनों की याद में', 'वीर रस का एक कवि सम्मेलन', 'सिदंबाद की अन्तिम यात्रा' आदि रचनाओं को व्यंग्य का विषय बनाया है।

रवीन्द्र नाथ त्यागी की व्यंग्य की एक विशेषता है 'प्रसंग वक्रता' इसमें विषय कोई उठाते है और व्यंग्य किसी अन्य पर करते हैं जैसे – डिनर में मुझे तो एक संभ्रान्त महिला अपने साथ खींचकर ले गयी थी क्योंकि उनके पति थे दौरे पर, काफी जोड़े हमारे ही तरह के थे।"[३]

वर्तमान जीवन प्रणाली और उसमें नैतिकता की गिरावट को भी उन्होंने अपने व्यंग्य का

---

१. रवीन्द्र नाथ त्यागी – देवदार के पेड़, पृष्ठ ११२

२. रवीन्द्र नाथ त्यागी – भित्तिचित्र, पृष्ठ ५५

३. रवीन्द्र नाथ त्यागी – अतिथिकक्ष, पृष्ठ ६२

विषय बनाया है। जहाँ अलग से चाय में चीनी लेने, पापा कहे जाने तथा लड़कियों के सम्पर्क मात्र से आधुनिकता को निर्धारित किया जाता है वहाँ नैतिकता का हृदय यह है मित्रों की पत्नियों को पतियों के सामने दीदी और अकेले में भाभी कहते हुए पाये जाते है। इस सतही जीवन प्रणाली और छद्‌म आवरण को उन्होंने प्रमुख रुप से व्यंग्य रचनाओं में स्थान दिया है।

दहेज समस्या को 'प्राप्ते तु पोषडे वर्षे' के अन्तर्गत उठाया है। जहाँ घर से विदाई के साथ घर का अस्तित्व भी समाप्त हो जाता है। 'कुमार सम्भव के वाक्यांश' में इसी विषय को लेकर रवीन्द्र जी ने व्यंग्य किया है।

प्रजातन्त्र के वास्तविक अर्थ को बतलाते हुए लिखते है कि प्रजा की हम इज्जत करते हैं और इसी कारण प्रजा शब्द का प्रयोग तन्त्र से पहले किया है पर सच्चाई में स्थिति यही है जो सीता राम शब्द में सीता की और राधा कृष्ण शब्द में राधा की। इसे इन्होंने 'अपना देश चिन्तन के कुछ क्षण' के अन्तर्गत व्यक्त किया है। 'एक खबरदार लेख' में संसद और विधान-सभाओं की कार्य प्रणाली के ऊपर व्यंग्य किये है जहाँ गाली-गलौच, मार-पीट तो होती है, समस्या के ऊपर बहस नहीं। 'पाँच लड़कियों की कहानी' में उन्होंने नेताओं के दल बदल प्रवृत्ति को व्यंग्य का विषय बनाया है।

भूदान आन्दोलन की विसंगतियों को 'सहयात्री' निबन्ध में, समाजवादी की आडम्बर पूर्ण शैली को 'मेरा अन्तिम हास्य लेख' तथा 'अ-डाकुओं का आत्मसमर्पण' में चित्रित किया है। 'तीन ऐतिहासिक पत्र' में बैल को प्रतीक बनाकर सत्ताधारियें के ऊपर चोट की है।

न्याय प्रणाली की दुरुह क्रिया-कलापों को आधार बनाकर 'किस्सा एक दिलचस्प गवाह का' में रवीन्द्र त्यागी ने व्यंग्य वाण छोड़े है। गवाह कभी सच्चा नहीं होता उसे बच्चों के पाठ की तरह झूठ बोलने वाले वाक्यों को रटाया जाता है। इसी प्रकार न्याय मिलने में देरी को लेकर उन्होनें लिखा है कि "न्याय प्रणाली खूब समय लेती है परिणाम स्वरूप न्याय मँहगा और जान

लेवा बन जाता है .... सबसे पुराना जो मुकदमा है १९३० का है।"[१]

सार्वजनिक सेवाओं के विभिन्न पहलुओं पर व्यंग्य हुए वे 'पुलिस को गाँधीवादी कहते हैं' तो सब कुछ देखने के बाद भी हस्तक्षेप नहीं करती है। अस्पताल को वह स्थान बताते हैं जहाँ आदमी बीमारी की हालत में दाखिल होता है और मुर्दा होकर बाहर निकलता है।'

'मृत्युबोध' के कुछ क्षण' में उन्होंने डॉक्टर की परिभाषा इस प्रकार की है। "जब कोई आदमी सबके सामने आपके पैसे लेकर आपकी हत्या करता है तो वह डॉक्टर कहलाता है, बढ़िया डॉक्टर वह होता है जिसका मरीज ठीक उसी बीमारी से मरता है जिसका डॉक्टर ने निदान किया था।"

रेल और बसों को केन्द्र में रखकर भी रवीन्द्र त्यागी ने व्यंग्य रचना की है। 'ग्यारहवें राजकुमार का चरित्र' में दिल्ली में बसों की स्थिति के विषय में लिख गया है।

प्रशासकीय विषयों से सन्दर्भित व्यंग्य भी उनकी रचनाओं में आता है 'घर से चलकर दफ्तर की परिभाषा कुछ इस प्रकार देते हैं "दफ्तर उस जगह को कहते हैं जहाँ लोग कपड़े साफ पहनते हैं, काम गन्दे करते हैं।" दफ्तर की महत्वपूर्ण वस्तु फाइलों को लेकर उन्होंने अनेक व्यंग्य लेख लिखे। 'फाइलें और फाइलें', 'एक फाइल का सफर', 'कर्मों का बन्धन और गीत गोविन्द' आदि।

'संगीत मेरा दुश्मन' शीर्षक से लिखे गये व्यंग्य लेख में उन्होंने सार्वजनिक निर्माण विभाग का लेखा जोखा किया है।

प्रशासनिक और राजनीतिक व्यंग्य उन्होंने अपेक्षाकृत कम ही लिखा है। इसका कारण वे बताते हुए कहते हैं कि "सरकारी बातों को एक सीमा के बाहर नहीं ले जा सकते। व्यवस्थापिका जो है उसके अधिकार इतने व्यापक है कि वह चाहे तो आपको जेल भी भिजवा

---

१. रवीन्द्र नाथ त्यागी – आत्मलेख, पृष्ठ ५६

सकती है। कार्यकारिणी के पास 'ऑफिसियल सीक्रेट्स एक्ट' है जिसके पीछे सब कुछ छिपा है। अदालत जो है वह अपनी मानहानि के लिए आप पर मुकदमा चला सकती है और आपको सजा दे सकती है।"[१]

रवीन्द्र नाथ त्यागी संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी और उर्दू साहित्य के उद्धरणों द्वारा अपने रचना विधा में चमत्कार उत्पन्न कर देते है। जैसे– "मेरे पिता कहा करते थे कि बड़ो होकर तू गोबर निकलेगा। उनका आर्शीवाद सोलहो आने फलीभूत हुआ गोदान में एक पात्र गोबर है और उसके बाद दूसरा गोबर मैं हूँ इस दृष्टि से मेरे पिता का दर्जा मुंशी प्रेमचन्द्र के बराबर ठहरता है।"[२]

शैली

रवीन्द्र त्यागी के व्यंग्य की प्रमुख शैली उद्धरण युक्त रचना है। इसकी प्रमुख विशेषता है इनके वाक्यांशों में अनावश्यक रुप से 'जो' का प्रयोग –

"जो साहित्य प्रेमी मच्छड़ है उन्हें छोड़ दें [३]

"हिन्दी का भविष्य जो है वह सदा से उज्ज्वल रहा है परेशानी जो रही है वह हमेशा वर्तमान को लेकर रही।"[४]

रवीन्द्र त्यागी– व्यंग्य में उपमाओं का प्रयोग कुशलता और नवीनता के साथ करते हैं जैसे –

"वह गाजर के हलवे की भाँति मुलायम, नाशपाती की तरह सुडौल और फूलगोभी की भाँति खुली थी।"[५]

"सड़क के साथ बलात्कार करने वाले जो ठेले है उनका तो कोई जबाब ही नहीं।"[६]

---

१. रवीन्द्र नाथ त्यागी – आत्मलेख, पृष्ठ ५६
२. रवीन्द्र नाथ त्यागी – आत्मलेख, पृष्ठ १०८
३. रवीन्द्र नाथ त्यागी – सहयात्री, पृष्ठ ५६
४. रवीन्द्र नाथ त्यागी – सहयात्री, पृष्ठ ८३
५. रवीन्द्र नाथ त्यागी – अतिथिकक्ष, पृष्ठ ८८
६. रवीन्द्र नाथ त्यागी – फूलों वाले कैक्टस, पृष्ठ ३२

मूल्यांकन

रवीन्द्र नाथ त्यागी ने व्यंग्य की किसी स्पष्ट अवधारणा का विवेचन नहीं किया है लेकिन उनके 'साक्षात्कारों' एवं भूमिका में लिखे लेखों द्वारा व्यंग्य के सन्दर्भ में उनका अभिमत स्पष्ट होता है। डॉ. रणवीर सांगा के साथ साक्षात्कार में वे कहते हैं कि "हास्य और व्यंग्य अलग-अलग चीजें हैं और दोनों में शुद्ध रुप से पृथकता रखते हुए भी कलाकार प्रथम श्रेणी की रचनाएं दे सकता है।"

डॉ. कमल किशोर गोयनका से बातचीत करते हुए कहते हैं, "जब मैं दुःखी होता हूँ तो हास्य व्यंग्य लिखता हूँ और जब प्रसन्न चित्त होता हूँ तो उदास कविता" वे आगे कहते हैं कि "मैंने व्यंग्य का उद्देश्य मनोरंजन माना है।"[१]

'मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ' में धनंजय वर्मा द्वारा भूमिका लिखी गयी है जिसमें वे लिखते हैं कि "रविन्द्र नाथ त्यागी ने साहितय और लालित्य पर विशेष ध्यान दिया है और समाज तथा नौकरशाही को पकड़ा जिसके कारण वे परसाई और शरद जोशी से अलग हो गये"[२]

केशव चन्द्र वर्मा

व्यंग्य के प्रतिष्ठापक व्यंग्यकार केशव चन्द्र वर्मा की मूल विशेषता किस्सागोई का रुप शिल्प और परिस्थितियों का सूक्ष्म पड़ताल रहा है। इनकी प्रमुख रचनाएं इस प्रकार है – 'लोमड़ी का माँस' (१९५४), 'मुर्गा छाप हीरो' (१९५९), 'प्यासी और बेपानी के लोग' (१९५९), 'अफलातूनों का शहर' (१९७४), 'वृहन्नला का वक्तव्य' (१९७४), 'ज्यादातर गलत' (१९७५), 'हड़ताली बाबू' (१९७७), आधुनिक हिन्दी हास्य व्यंग्य (सं.)(१९६१)।

केशवचन्द्र वर्मा समाज के किसी भी वर्ग को अपने व्यंग्य का विषय बनाते हैं, नेता के

---

१. संपादक कमल किशोर गोयनका – प्रतिनिधि व्यंग्य रचनाएं, पृष्ठ २९३, ३२०

२. रवीन्द्र नाथ त्यागी – श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं, पृष्ठ – २५

ऊपर व्यंग्य करते हुए वे लिखते हैं कि "समस्या का उत्पादन नेता के लिए संजीवनी बूटी है, जो नेता समस्या नहीं उठा पाता, वह मर जाता है। उसकी नेतागिरी समाप्त हो जाती है, उसे सब जाहिल और बेकार समझने लगते हैं। जब जनता खर्राटा भर रही हो उस आकांक्षी नेता को चाहिए कि वह इतनी जोर जोर से चोर-चोर चिल्ला कर सड़क पर दौड़ने लग जाय कि भले चंगे सोने वाले घबड़ा उठे और समझें कि उनका असली चौकीदार यही नेता है जो बेबात से भड़क उठता है।"[१]

केशव चन्द्र वर्मा का अधिकांश व्यंग्य कथोपकथन के द्वारा ही उभरता है। पौराणिक प्रसंगों जैसे विश्वामित्र मेनका के द्वारा भी ये व्यंग्य को उभारते हैं। अंग्रेजी-हिन्दी उर्दू के शब्द इनके व्यंग्य निबन्ध की शोभा बढ़ाते हैं। इनकी विशेषताओं का उल्लेख शेरजंग गर्ग इस प्रकार करते हैं "केशवचन्द्र वर्मा की व्यंग्य कथाओं में विसंगतियों को चुटकियों में उड़ाने का भाव नहीं है। अपितु विसंगतियों को छीलकर सार्थक और संगतियों की दीशा में कुछ करना ही अभीष्ट है।"[२]

लतीफ घोंघी

आधुनिक व्यंग्यकारों में लतीफ घोंघी का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। इनका व्यंग्य आक्रामक नहीं होता है, ये अधरोष्ठ में हँसने वाले व्यंग्य करते हैं। अपने व्यंग्य के विषय में ये कहते हैं कि "मेरी व्यंग्य रचनाओं में आक्रमकता नहीं है, तिलमिलाहट पैदा करने वाली स्थितियां नहीं है दरअसल आक्रमकता को व्यंग्य के लिए गैर जरुरी मानता हूँ जो रचना आपके मुँह का स्वाद बिगाड़ दे उसे मैं सफल रचना मानने को तैयार नहीं हूँ मेरी रचनाएं आपको आलपिन की चुभन सा मीठा-मीठा दर्द दे ओर एक गुदगुदी आपके अन्दर पैदा कर दे, मैं समझूँगा कि मेरा व्यंग्य लेखन सफल हुआ।"[३]

---

१. केशव चन्द्र वर्मा – प्यासा और बेपानी के लोग, पृष्ठ ८०

२. डॉ. शेरजंग गर्ग – व्यंग्य के मूलभूत प्रश्न, पृष्ठ १५२

३. लतीफ घोंघी – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं, भूमिका

घोंघी की प्रमुख व्यंग्य रचनाएं इस प्रकार हैं –

'उड़ते उल्लू के पंख' (१९७२), 'मृतक से क्षमा याचना सहित' (१९७४), 'बीमार न होने का दुःख' (१९७७), 'संकट लाल जिन्दाबाद' (१९७८), 'बब्बूमियां क़बिस्तान में' (१९७९), 'तीसरे बन्दर की कथा' (१९७९), 'मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं' (१९७९), 'किस्सा दाढ़ी का' (१९८०), 'कुत्ते से साक्षात्कार' (१९८१), 'खबरदार व्यंग्य' (१९८२), 'जूते का दर्द' (१९८४), 'सोने का अण्डा' (१९८४), 'चोरी न होने का दुःख' (१९८४), 'मुर्दानामा' (१९८५), 'बधाइयों के देश में' (१९८६), 'लाटरी का टिकिया' (१९८६), 'क्षमा करना हम दुखी नहीं है' (१९८७), 'सड़े हुए दाँत' (१९८७), 'ज्ञान की दुकान' (१९८८), 'बुद्धिमानों से बचिए' (१९८८), 'जुगुलबन्दी' (१९८७), मेरा मुख्य अतिथि हो जाना (१९८९)।

घोंघी के इस विस्तृत साहित्य में व्यंग्य के विषय भी कई क्षेत्रों से सम्बन्धित है। राजनीति सरकारी नौकरी, प्रशासन, दोस्ती, साहित्यकार, चित्रकला दिखावा, संगीतकार, सच–झूठ आदि।

सरकारी काम–काज को सबसे अधिक राजनीति प्रभावित करती है जिसमें घुसने वाला व्यक्ति सबसे पहले अपने लिए साधन जुटाना प्रारम्भ करता है तत्पश्चात जनसेवा की बात सोचता है।

लतीफ घोंघी कहते हैं कि 'पिछले अड़तीस सालों में देशी' बन्दर बहुत अधिक चालाक हो गये हैं।

रवीन्द्र नाथ त्यागी की भाँति लतीफ घोंघी के व्यंग्य में भी किसी न किसी बहाने औरत अवश्य आती है। उन्होंने औरतों के ऊपर खूब व्यंग्य किया है जैसे –

"मेरी मरने के पश्चात मेरी पत्नी ने पानी पिया, फिर आदतन मेरी जेबे टटोलने लगी, कमीज की जेब से तीस पैसे निकले"[१]

---

१. लतीफ घोंघी – बीमार न होने का दुःख, पृष्ठ १२०

"जीते जी जिन महिलाओं के दर्शन ने कर सका वे आज बेपरदा होकर खड़ी थी"[१]

"औरते बेवकूफ मर्दो को पसन्द करती है यही कारण था कि मैंने भी दाढ़ी बढ़ा ली"[२]

मुस्लिमों की धर्म आधारित रुढ़ियाँ, विवाह की अधिकता, बच्चों की बहुतायत आदि को लेकर लतीफ घोंघी ने व्यंग्य कसा है –

"हाजी साहब की यह चौथी बीबी थी। मुस्लिम कानून का पूरा फायदा उन्होंने जीते-जी उठा लिया था"[३]

"उसके तीन लड़के और सात लड़कियाँ थी। दो बीबीयां थी। वह पक्का मुसलमान था, इसलिए उसने परिवार नियोजन नहीं करवाया था"[४]

लतीफ घोंघी कबीर के बाद पहले साहित्यकार है जो अपने समाज को सुधारने का प्रयास करते हैं। मुस्लिम समुदाय की सभी प्रकार की बुराइयें को इन्होंने अपने व्यंग्य का लक्ष्य निर्धारित किया। उनके तेवर के बारे में डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी कहते हैं– लतीफ घोंघी ने बिना लाग लपेट के स्थितियों और अनुभवों का प्रस्तावन किया है। इन व्यंग्य रचनाओं में परम्परागत रुढ़ियें और नई आस्थाओं के खिलाफ संघर्ष किया गया है।"[५]

अपनी चुलबुलीदार शैली और अश्लील सा हो जाने वाले स्त्री प्रसंग से लतीफ घोघीं जल्द बाहर निकल गये और उन्होंने समाज के ऊपर अपना ध्यान खींचा। १९८० के पश्चात उनके व्यंग्य के तेवर में तिक्तता और प्रहारात्मक क्षमता का गुण विकसित हो गया।

---

१. लतीफ घोंघी – बीमार न होने का दुःख, पृष्ठ ५०
२. लतीफ घोंघी – किस्सा दाढ़ी का, पृष्ठ ८५
३. लतीफ घोंघी – किस्सा दाढ़ी का, पृष्ठ २२
४. लतीफ घोंघी – बुद्धिजीवी की चप्पले, पृष्ठ १३
५. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान, पृष्ठ ३०

विद्यार्थी की नकल करने की प्रवृत्ति पर व्यंग्य करते समय वे कहते हैं कि प्रश्न इस प्रकार का आना चाहिए जिससे शिक्षा का भविष्य उज्ज्वल हो जैसे – "जूली और संन्तोषी माता में अन्तर स्पष्ट कीजिए। नीतू सिंह के पतन के कारण बताइए ? रेखा और राखी का तुलनात्मक अध्ययन कीजिए।"[१]

डॉक्टरों और वकीलों के ऊपर भी उन्होंने अपनी रचनाओं द्वारा व्यंग्य वाण छोड़े हैं। 'इक्कसवीं सदी का पाणिग्रहण अधिनियम' 'इक्कीसवीं सदी का गर्भाधान विधेयक', 'बाकी बाते अदालत में होगी' में लेखक ने अधिवक्ताओं को व्यंग्य का विषय बनाया है।

"वकील के यहाँ जाकर पाँच रुपये के स्टाम्प पेपर पर जो कुछ लिखा जाता है वही सच्चा होता है नकारने की स्थिति में अदालत में जाना पड़ेगा और चार पेशी में ही फरिश्ता भी भूल जायेगा कि वह फरिश्ता है"[२]

'कश्मीर से कन्या कुमारी तक' और 'किस्सा फिल्मी पुलिस का' में पुलिस के ऊपर व्यंग्य किया है। 'ज्ञान की दुकान' में वे लिखते हैं कि "भारत में पुलिस और मौत का कोई भरोसा नहीं है।"[३] इसी प्रकार 'पी के घर आज प्यारी दुल्हनियां चली' में डाकू और पुलिस में अन्तर करते हुए लिखा है कि "डाकू से बचकर सही सलामत आ ही जाओगे लेकिन जब पुलिस के चंगुल में फंसोगे तो भीख मांगने के लायक होकर ही निकलोगे"[४]

'एक टिकट का सवाल है बाबा', में उन्होंने काँग्रेसी सोच को व्यंग्य का आधार बनाया है जो सोचता है "मेरा जन्म कस्तूरबा गाँधी अस्पताल में हुआ अतः मैं गाँधीवादी हूँ।"[५] 'हमें इक्कीसवीं सदी में जाना है' राजीव गाँधी की घोषणा से प्रभावित होकर उन्होंने लिखा है कि–

---

१. लतीफ घोंघी – किस्सा दाढ़ी का, पृष्ठ १०७–१०८
२. लतीफ घोंघी – बुद्धिजीवी की चप्पले, पृष्ठ १०–११
३. लतीफ घोंघी – कश्मीर से कन्याकुमारी तक, पृष्ठ ४०–४५
४. लतीफ घोंघी – बुद्धिजीवी की चप्पले, पृष्ठ २३
५. लतीफ घोंघी – बुद्धिजीवी की चप्पले, पृष्ठ ३६

"हम (कुत्ते) इसलिए नहीं जाना चाहते क्योंकि आदमी वहाँ जा रहा है, साम्प्रदायिकता वहाँ जा रही है, स्वार्थ वहाँ जा रहा है, इसलिए कोई वहाँ नहीं जायेगा।"[१]

'पटवारी को मत पकड़ो' में राजस्व विभाग एवं घूसखूरी-भ्रष्टाचार का पर्दाफाश किया गया है। 'गरम हवा और भैया जी' में नेताओं की कथनी और करनी के अन्तर को दिखलाने का सफल प्रयास धोधीं जी ने किया है।

मार्डन आर्ट के ऊपर लतीफ घोंघी चित्र खींचते हुए कहते हैं कि "चित्र भिखमंगों का और शीर्षक करोड़पति वे बोले यही मार्डन आर्ट है जिन्दगी की विसंगतियों का रेखांकन है।"

शैली

एक ही मुहाबरे का बार-बार प्रयोग करके अनुप्रास युक्त व्यंग्यार्थ को प्रस्तुत करते हैं–

"वह बोली बड़े आये नाक वाले ! मैं कहती हूँ इतने पैदा करवा दिये तो कहाँ गयी थी तुम्हारी नाक, परिवार नियोजन करवा लेते तो क्या तुम्हारी नाक कट जाती।"

नवीन उपमानों को उन्होंने अपनी रचनाओं में स्थान दिया है –

"अपनी नाक तो देखा लगता है जैसे चेहरे पर छिपकली चिपकी है"

"टयर इतने चिकने कि ताजमहल का संगमरमर भी शरमा जाएं"

आत्म व्यंग्य और संवाद तथा सूक्ति वाक्यों द्वारा भी इन्होंने व्यंग्य को स्वर प्रदान किया है।

"बिना पालिश का जीवन किस काम का' (सूक्ति)

"यह तेरा दुर्भाग्य कि मैं मरा भी तो इतवार के दिन। खामखाँ एक दिन की छुट्टी बेकार हो गयी।"

---

१. लतीफ घोंघी – बुद्धिमानों से बचिए

रवीन्द्र त्यागी, लतीफ घोंघी के योगदान एवं रचना संसार का मूल्यांकन करते हुए कहते हैं "हिन्दी में हास्य व्यंग्य को उपेक्षा के बिन्दु से उठाकर उसे एक समृद्ध विधा बनाने की दिशा में जिन गिने-चुने लेखकों ने काम किया उनमें लतीफ धोधीं का महत्त्वपूर्ण योगदान है। उनका हास्य बड़ा निश्छल और स्वाभाविक है और उनका व्यंगय वेहद तीखा और मर्मान्तक चोट करने वाला है।"[१]

लतीफ घोंघी के रचना संसार को देखने के पश्चात निश्चयपूर्वक यह कहा जा सकता है कि इन्होंने परसाई की भाँति वैचारिक प्रतिबद्धता नहीं दिखलायी, रवीन्द्र नाथ त्यागी की भाँति शैली के नये-नये आयाम विकसित नहीं किये तथा के. पी. सक्सेना की भाँति भाषिक प्रयोग नहीं किया। यही लतीफ की विशेषता है तो संवादों की बहुलता इनकी दूसरी विशेषता है।

नरेन्द्र कोहली

हिन्दी के प्रमुख प्रतिस्थापक व्यंग्यकार और व्यंग्य समीक्षक डॉ. नरेन्द्र कोहली 'मैं बच्चों से घृणा करता हूँ' नामक व्यांग्यात्मक निबन्ध के साथ व्यंग्य विधा में प्रवेश करते हैं। यद्यपि व्यंग्य लेखन वे १९५७-५८ से ही करते रहे है लेकिन इनकी व्यंग्य कृतियां १९७० से प्रकाशित होना प्रारम्भ हुई। इनकी प्रमुख व्यंग्य रचनाएं इस प्रकार है।

१. एक और लाल तिकोन - १९७०
२. पाँच एब्सर्ड उपन्यास - १९७२
३. जगाने का अपराध -
४. आश्रितो का विद्रोह - १९७३
५. शम्बूक की हत्या - १९७४
६. मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं - १९७९

---

१. लतीफ घोंघी - नीर-क्षीर, भूमिका

७. आधुनिक लड़की की पीड़ा – १९७९

८. त्रासदियां – १९८२

९. परेशानियां – १९८६

नरेन्द्र कोहली का रचना संसार विस्तृत है। आक्रोश में व्यक्तिगत भाव को मिलाकर उन्होंने 'व्यंग्य' का सृजन किया है। वे कहते हैं "मैं व्यंग्य तभी लिखता हूँ जब केवल व्यंग्य लिखने के लिए मेरे पास कुछ नया हो। लिखने को नया हो तो शिल्प भी गया बन जाता है।"[१]

इनके रचना संसार में खोखले रोमांस, नकली फैशन, रेलवे प्रशासन, शिक्षा, परिवार-नियोजन पुलिस, लोकतन्त्र आदि सम्मिलित है। यथार्थ की पृष्ठभूमि पर इन सभी विषयों को लेकर इन्होंने व्यंग्य रचना की है। डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी इनके व्यंग्य के विषय में कहते है कि "नरेन्द्र कोहली का व्यंग्य सामाजिक सच के एकदम निकट है और व्यंग्य विधा को अपनाकर उन्होंने अपने मन की पीड़ा को वाणी दी है हरिशंकर परसाई और शरद जोशी की अपेक्षा नरेन्द्र कोहली का व्यंग्य गम्भीरता के लबादे से अधिक बोझिल है।"[२]

धर्म के पाखण्ड और धर्म के प्रभाव को नरेन्द्र कोहली ने करीब से देखा है। उनकी रचनाओं में इस कारण धर्म के ऊपर किया गया व्यंग्य बड़ा ही चुटीला होता है। 'कर्तव्य निष्ठ पड़ोसी' में वे लिखते हैं कि "धर्म के नाम पर लोगों को नंगे रहने, सशस्त्र रहने, एक से अधिक पत्नियां रखने का अधिकार है। वैसे सत्यवादिता के नाम पर चुगली करने का अधिकार है– धर्म तो इस देश में 'वीटो' है उसके सामने न कोई तर्क चलता है, न नियम, न कानून।"[३]

इसी प्रकार धर्म से जुड़ी संस्कृति के ऊपर भी उन्होंने अपना व्यंग्यवाण छोड़ा है जो मात्र 'चमड़े के जूते' पहनने से नष्ट हो जाती है।

---

१. नरेन्द्र कोहली – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं

२. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – हिन्दी का स्वातन्त्रयोत्तर हास्य और व्यंग्य, पृष्ठ – २१७

३. नरेन्द्र कोहली – जगाने का अपराध, पृष्ठ ८०

कला साहित्य तथा इनके सर्जक की दशाओं के ऊपर कोहली ने लेखनी चलायी है। साहित्यकार एवं कलाकार की दयनीय स्थिति के विषय में वे कहते हैं– "कला का पुरस्कार ज्ञानपीठ का एक लाख रुपये का पुरस्कार नहीं है। कला का पुरस्कार तो विक्षिप्त होकर, बिना इलाज के मरना है निराला को यही पुरस्कार मिला, प्रसाद भी कुछ इन्हीं परिस्थितियों में मरे। शम्भू महाराज के चित्र रोज समाचार-पत्रों में निकलते रहे, वे कैंसर से पीड़ित होकर कलाकार का पुरस्कार पाते रहे और अन्त में मृत्यु का गोलड मेडल पाकर निगम बोध घाट जा पहुँचे।"[१]

विसंगतियों के ऊपर व्यंग्य करते हुए नरेन्द्र कोहली इतने अधिक उत्तेजित हो जाते हैं कि अपने ऊपर नियन्त्रण खो देते है और बेहिचक गाली देना प्रारम्भ कर देते है 'जगाने का अपराध' में वे इसी प्रकार आक्रोशित लेख लिखते हैं "इस देश का पुरुष क्या है ? कूप मंडूक ! अपनी पत्नी और परिवार के हितों के खूँटे से बँधा, रहट का बैल। स्वार्थी ! नीच। देश को लूटकर अपने परिवार का पेट भरने वाला। न उदार दृष्टि न, न उन्मुक्त चिन्तन।"[२]

समाज की निरन्तर घिस रही नैतिकता को उन्होंने 'प्रेम पत्र और हेड मास्टर' के माध्यम से वाणी दी जै। इस लेख में हेड मास्टर साहब पाखाने में छिपकर सिगरेट पीते हैं। लड़कों को धूम्रपान करने से मना करते है। विद्यार्थियों को शृंगार के पद पढ़ाते हैं अगर किसी लड़के ने किसी लड़की को प्रेम पत्र लिख दिया तो उसे कालेज से निकाल देते है। इस में नैतिकता का भेद खुले और छिपे के कारण है। वे छिपकर सिगरेट पीते है इसलिए नैतिकतावादी है और लड़के सड़क पर पीते है इसलिए वे अनैतिक है।

'मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं' में संकलित रचनाओं में विदेशी वस्तुओं की ललक, विदेशी जीवन शैली, खान-पान, नामकरण आदि की दोगली मानसिकता पर कोहली जी ने गम्भीर व्यंग्य किया है। 'इम्पोर्टेड' कपड़े को नीलामी से खरीद कर भी हम गर्व का अनुभव करते हैं।

---

१. नरेन्द्र कोहली – आधुनिक लड़की की पीड़ा, पृष्ठ ३७

२. नरेन्द्र कोहली – आधुनिक लड़की की पीड़ा, पृष्ठ ३७

विदेशी आयतित माल की हम लोगों को खाने-पीने की इतनी अधिक और स्वाभाविक आदत पड़ गयी कि हम लोगों को यह आभास ही नहीं होता कि एक तरह का परजीवी होना है। गेहूँ है अमरीका से चला आ रहा है मशीने है अमरीका से चला आ रही है। हथियार है वह भी अमरीका से चला आ रहा है– आदत नहीं पड़ गई रेडीमेड चीजों की तो और क्या-क्या भिखमंगे कहीं के।[१]

'दि लाइफ' के द्वारा नरेन्द्र कोहली ने हाई सोसाइटी की जीवन शैली पर व्यंग्य किया है जो क्लबों एवं सतसंगों के माध्यम से बढ़ावा देती है। इन सबमें एकाकीपन का भाव कुण्ठा के रुप में धर लेता है जिसके कारण यौन कुण्ठा का भी जन्म होता है। नरेन्द्र कोहली 'पाँच एब्सर्ड उपन्यास' में इसे स्थान दिया है वे लिखते हैं "मम्मी, तुम अपने व्वॉय-फ्रैण्ड से डैडी की गर्ल-फ्रैण्ड को नहीं पिटवातीं'।

मध्यवर्ग का असन्तोष, अभाव, कुण्ठा, निराशा, आकांक्षा। नरेन्द्र कोहली ने 'पाथेय' में ध्वनित किया है। मध्यवर्ग हमेशा अपना जीवन जोड़-गाँठ करके चलाता है। उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति कभी नहीं होती है। वह छोटी-छोटी जरुरतों के लिए भी अपने से समझौता करता रहता है। इसी आत्मतोष को सन्तुष्ट करने के लिए वह परनिन्दा शुरू कर देता है। दूसरों को वह अपनी बुद्धि, शक्ति और चतुराई द्वारा नीचा दिखाना चाहता है।

निम्न मध्यम वर्गीय मनोदशा का चित्रण उन्होंने 'पाँच एब्सर्ड उपन्यास' में इस प्रकार किया है "ये लोग कालेज की लायब्रेरी में बैठते है, सबसे डरते है। किसी से मन की बात नहीं कहते। न ऊँचा बोलते है न ऊँचा हँसते है। ये कालेज के वैकवर्ड लोग हैं। एकदम डल और भोंदू समझे जाते है। इनसे कोई बात करना भी पसन्द नहीं करता है ये लोग ऐसे मूर्ख है, केवल पढ़ने के लिए ही कालेज में आते हैं।[२]

---

१. नरेन्द्र कोहली – एक और लाल तिकोन, पृष्ठ ४४

२. नरेन्द्र कोहली – पाँच एवसर्ड उपन्यास, पृष्ठ ४

शिक्षा, शिक्षा संस्थान, शोध प्रबन्ध और उनकी प्रकृति पर भी नरेन्द्र कोहली ने अपने विभिन्न रचनाओं में व्यंग्य का विषय चुना है। 'दि कालेज' में अध्यापकों की स्टाफ रुम में बैठकर गप्प बाजी की चर्चा की है तो 'रिसर्च एक्सपीरियेन्स' में उच्च कोटि की थीसिस भी नहीं जमा हो पाती है इस पर प्रकाश डाला गया है।

'अस्पताल' रचना में अस्पताल की कार्य प्रणाली को व्यंग्य का विषय चुना है। जहाँ 'एप्रोच' के बगैर मरीज भर्ती भी नहीं हो पाता।

पुलिस की मनमानी प्रवृत्ति और उसकी लूट खसोट को नरेन्द्र कोहली ने अपनी गम्भीर व्यंग्य शैली के द्वारा व्यक्त किया है वे कहते हैं कि पुलिस का आदमी आदमी नहीं होता है वह सिपाही होता है सब उसे आदमी समझने लगेंगे तो उनसे डरेगा कौन ?" अर्थात पुलिस से डरने में उसकी अमानवीय प्रवृत्ति ही मुख्य कारक है।

'साहित्यकार की घोषणाएं' में इस बात की कल्पना की गयी है कि अगर कभी स्वर्ग पृथ्वी पर आ जाये तो क्या होगा "भूदानी अपना झोला लिए दौड़ेंगे कि डाकुओं के आत्म समर्पण के समान ही स्वर्ग भी बिनोबा ने ही उतारा है। कांग्रेसी अपनी टोपी संभाले दौड़ेंगे कि स्वर्ग उनके लिए उतरा है और गाँधी ने उतारा है। नई कांग्रेस वाले गुलाब के फूल लिए दौड़ेंगे कि भेज दिया, भेज दिया नेहरू जी ने हमारे लिए भेज दिया। और इस झगड़े का परिणाम यह होगा कि "प्रत्येक दल स्वर्गवासी होना चाहेगा और वामपन्थी दल इसलिए सब स्वर्ग से नाराज होंगे कि वह धार्मिक सी चीज साली उतरी ही क्यों ?

'ब्लड बैंक की अप्सरा' में युवती नेताओं का खून लेने से मना कर देती है। वह कहती है एक बार लिया था से खटमल मारने लिए रख दिया।

नरेन्द्र कोहली का व्यंग्य समाज के सभी क्षेत्रों में फैली विसंगतियों पर घोरतम प्रहार है। इसमें किसी को छूट नहीं मिली है। जो गलत है उस पर प्रहार अवश्यम्भावी है। विचार और

दृष्टि को लेकर वे सीमावद्ध नहीं होते है। मुक्त भाव से विसंगतियों पर प्रहार ही उनके व्यंग्य की पहचान है।

शिल्प

नरेन्द्र कोहली स्वीकार करते हैं कि अन्य विधाओं की अपेक्षा व्यंग्य में पुनरावृत्ति का खतरा होता है इस कारण शिल्प परिवर्तन कर उसे नये रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। नरेन्द्र कोहली ने ऐसा किया भी। उनकी रचनाओं में शिल्प-वैविध्य देखने को भी मिलता है।

'पाँच एब्सर्ड उपन्यास' में शिल्प वैविध्य स्थितियों के एब्सर्ड होने के कारण आया है। यह उपन्यास हिन्दी व्यंग्य साहित्य का बेजोड़ शिल्प विचित्र उपन्यास है।

नरेन्द्र कोहली ने उपमा और सादृष्य विधान को प्रस्तुत कर गम्भीर किस्म का व्यंग्य किया है–

"पत्नी का स्वास्थ्य देश की आर्थिक स्थिति के समान बिगड़ता जा रहा है विशेष रूप से उसकी खाँसी दिनोदिन मँहगाई के समान बढ़ती जा रही थी।"

"वे देश को चूस रहे है जैसे कुत्ता हड्डी को चूसता है"

"एक वृहद डिक्शनरी जैसे महिला" "वे खड़े है जैसे बस स्टाप नहीं संयुक्त राष्ट्र संघ की जनरल असेम्बली में खड़े हो"

उदाहरणों एवं दृष्टान्तों द्वारा नरेन्द्र कोहली जहाँ व्यंग्य की धार को तेज कर देते हैं वहीं वे प्रभावी भी बना देते है।

"मकड़ा स्वयं जाला बुनकर उसमें उलटा लटककर तड़पता है आदमी जात बुनकर सन्तान चाहता है और जब सन्तान उसे अंगूठा दिखाकर दुखी करती है तो वह तड़पता है एक ओर

१. नरेन्द्र कोहली – आधुनिक लड़की की पीड़ा, पृष्ठ २६-२७

लोग पेन्शन, बीमा तथा भविष्य निधि का प्रबन्ध करते हैं ताकि वृद्धावस्था में आराम से रह सके दूसरी ओर वे सन्तान का प्रबन्ध भी करते हैं ताकि वह उनका सारा पैसा उड़ा दे और वे आराम से न रह सके।"

व्यंग्य के विषय में

नरेन्द्र कोहली अपने व्यंग्यकार बनने के पीछे पीड़ा को मुख्य मानते हैं 'अस्पताल' रचना को लड़के की मृत्यु से उत्पन्न पीड़ा ने ही लिखने को प्रेरित किया। 'पाँच एब्सर्ड उपन्यास' में वे कहते हैं जब तक सह सका, सहा पर जब सह न सका तो मैं व्यंग्य पर उतर आया पीड़ा ने ही मुझे अपने से कुछ बड़ा कर दिया था और एक ऐसी आँख दी थी, जिसने उस सारे वातावरण को एक कार्टूनिस्ट की दृष्टि से देखा था।"

नरेन्द्र कोहली की व्यंग्य अवधारणा ने इस प्रकार की रूपरेखा ग्रहण की है। व्यंग्य का निर्माण पीड़ित आक्रोश की असहाय स्थिति में वक्र होकर आता है। सशक्त व्यंग्य पुचकारता नहीं कोड़े लगाता है। दूसरों की पीड़ा पर हँसना विकट व्यंग्य बन जाता है व्यंग्य की हँसी में असहायता एवं पीड़ा होती है।

समग्र रूप से नरेन्द्र कोहली का अगर मूल्यांकन किया जाय तो बालेन्दु शेखर तिवारी के कथन से बात स्पष्ट हो जायेगी "व्यंग्य के माध्यम से एक विशिष्ट सोच को विकसित करने वालों में नरेन्द्र कोहली की पहचान इसी कारण सुस्थिर हो सकी है कि उन्होंने सोद्देश्य और प्रभावक व्यंग्य की गम्भीर प्रस्तुति की है।"[१]

नरेन्द्र कोहली हिन्दी व्यंग्य साहित्य के गद्य लेखकों में मात्र एक ऐसे व्यंग्यकार है जिन्होंने प्रचलित सभी गद्य विधाओं का प्रयोग किया और सफलता पूर्वक किया।

---

१. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान, पृष्ठ २६

अमृत राय

योग्य पिता के, योग्य पुत्र अमृत राय ने प्रेमचन्द्र की भाँति दुखियों, पीड़ितों, शोषित की आवाज बनकर कहानी तथा उपन्यास का लेखन किया। सामाजिक कुप्रथाओं, विसंगतियों तथा विद्रूपताओं को उन्होंने अपने लघु निबन्धों में स्थान दिया। उनके व्यंग्य संकलन इस प्रकार है–

१. बतरस – १९७३

२. मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं १९७७

३. विजिट इंडिया – १९८२

व्यंग्यकार का यह सामाजिक दायित्व बनता है कि जो कुछ गलत दिखता है कुत्सित दिखता है उसे लक्ष्य करके चोट करे। अमृत राय ने व्यंग्यकार के दायित्व को निभाते हुए राजनीति, साहित्य, समाज, व्यक्ति आदि के दोषों को खोज–खोजकर व्यंग्यवाण द्वारा भेदना प्रारम्भ किया।

मनुष्य की अनैतिकतावादी प्रवृत्ति दिनों–दिन बढ़ती चली जा रही है वह अपने मूल कर्तव्यों से भी च्युत होता जा रहा है। युवा पीढ़ी अगर इसमें सबसे आगे है तो बुजुर्ग भी कम पीछे नहीं है वे अपना समय इस चर्चा में अधिक व्यतीत करते हैं कि मुहल्ले के किन लोगों का किनसे सम्बन्ध है। इसकी तरफ अमृतराय ने संकेत किया है "मतलब यह कि मुहल्ले के जो बड़े–बूढ़े हैं उनका पड़ोसी धर्म है कि मुहल्ले के हर लड़के–लड़की के चाल–चलन पर कड़ी निगरानी रखें।"[१]

सदियों से शान्तिप्रिय देश भारत में आज अशान्ति की हवा चल रही है। बन्धुत्व की भावना लुप्त हो गयी हर पड़ोसी एक दूसरे से डरा सहमा रहता है। इसको लेकर अमृत राय लिखते हैं "अब तो ये हाल है कि हमारी रगों का खून हरदम खैलता रहता है जरा सा बत–बड़ाव

---

१. अमृतराय – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं, पृष्ठ १३५

हुआ नहीं छुरा चल जाता है या फिर सीधे धाँय-धाँय होने लगती है जैसी कि शोले फिल्म में होती है। सच तो यह है कि अब हम विकट सूरमों की कौम है, हमारा बच्चा गब्बर सिंह है।[१]

कानून की विसंगतियों को लक्ष्य करके भी अमृतराय अपने व्यंग्य-वाण छोड़ते हैं। कानून का दीर्घकालीन अलाप, जिसमें व्यक्ति अपने सर्वस्य को नष्ट कर देता है, बेकार की कवायद है इसका कोई निश्चित परिणाम नहीं। आज के समय में कानून की इतनी अधिक संख्या है कि बगैर कानून तोड़े हम सांस भी नहीं ले सकते हैं इसको लेकर अमृतराय ने यह विचार दिया-

"हम तो साँस भी नहीं ले सकते, एक न एक कानून तोड़े बिना। लोग सारी-सारी उम्र मुकदमें ही लड़ते रह जाते हैं, घर-दुआर, दुकान-दौरी, लुटिया-थरिया तक बिक जाती है मगर मुकदमा चलता रहता है क्योंकि हमारे कानून का कहीं अन्त नहीं है।[२]

गाँधीवादी चिन्तकों, विचारकों के ऊपर आरोप लगाते हैं कि "सब झूठ बात है और तुम्हारे ये तीनों बन्दर एक नम्बर के ढोंगी है। तुम्हारे सामने कैसे कान पूँछ दबाये बैठे रहते थे और तुम्हारी पीठ फिरी नहीं कि सब कुछ तहस-नहस करके रख दिया।"[३]

प्रशासनिक अव्यस्था, भ्रष्टाचार, मूल्य हनन, अन्धविश्वास आदि को लेकर उन्होंने व्यंग्य किया है कि "बलुक आदमी क जान सबसे सस्ते बिकाय रहता है, सौ पचास रुपैया में दिन दहाड़े ठाँय-ठाँय मार के खूनी चंपत। जो न हो जाय सब थोड़ा है धब्बा जौन आ गया है सूरज के भीतर। ऊ न आया होता तो सब ठीकै रहा। ऊसरवा बिडिओ दोनों हाथ से रुपया बटोर रहा है जानै कै ठो हवेली खड़ी हो गयी उसकी पैसा आता है बिलाक के काम बेद बिडिओ सब अपने ही घर में रख लेता है"।[४]

---

१. अमृतराय – विजिट इण्डिया, पृष्ठ १४

२. अमृतराय – विजिट इण्डिया, पृष्ठ १३

३. अमृतराय – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं, पृष्ठ १०२

४. अमृतराय – विजिट इण्डिया, पृष्ठ ९४

राजनीतिक नेताओं की जन सेवा को छोड़कर, स्वसेवा करने की प्रवृत्ति को लक्ष्य किया है–

"ये हमारे बस का रोग नहीं है बुराई को न देखें न सुने और न उसके बारे में कुछ कहें। यह काम कोई मंन्त्री ही कर सकता है। सारी दुनिया देख रही है कि जहाँ–तहाँ लोग भूख से मर रहें है मगर खाद्य मंन्त्री को ऐसा कुछ दिखायी नहीं पड़ता है।"[१]

भारतीयों के विदेश प्रभाव को लक्षित करते हुए अमृतराय कहते हैं कि "क्विट इण्डिया की बड़ी तड़प है आज हिन्दुस्तानियों में। तमाम तमाम डॉक्टर, इंजीनियर, गतिणतज्ञ, अर्थशास्त्री, रसायनशास्त्री, भौतिकशास्त्री, आदि–आदि क्विट इंडिया किये चले जा रहे हैं।"[२] क्विट इण्डिया ब्रिटिश शासन को भगाने के लिए प्रयुक्त किया जाता था। लेकिन वर्तमान में शिक्षित भारतीय विदेश बसने को आकुल हैं।

भारतीय आर्थिक स्थिति और उसकी हमेशा धन मांगने की प्रवृत्ति को कटाक्ष के माध्यम से अमृतराय ने व्यक्त किया है "पता नहीं क्यों भारतीय पासपोर्ट देखते ही दूतावासों के होश उड़ जाते हैं जैसे भूत देख लिया हो बाप रे बाप हिन्दुस्तानी है। घुसने भर मत देना इसको नहीं चार दिन में अपने ही जैसे कंगाल कर देगा और तुम भी कटोरा लेकर गली–गली भीख माँगते दिखायी दोगे।"[३]

शिल्प

अमृतराय के निबन्धों में विषय वैविध्य के साथ शिल्प में भी परिवर्तन हुआ है"

भाषा के स्तर पर अमृतराय ने अपने पिता की भाँति ऐसी भाषा का प्रयोग किया जो जन

---

१. अमृतराय – विजिट इण्डिया, पृष्ठ ३५

२. अमृतराय – विजिट इण्डिया, पृष्ठ १२४

३. अमृतराय – विजिट इण्डिया, पृष्ठ १२०

साधारण को आसानी से समझ में आ जाय। मुहावरों, कहावतों, का प्रयोग भी यथा स्थान इनकी रचनाओं में मिलता है। उनके व्यंग्य शीर्षक कभी बहुत छोटे तो कभी बहुत बड़े होते हैं जैसे– 'भोंपू, वोटर' 'मेरे पिया गये रंगून वहाँ से किया है टेलीफोन' फिर भी भगत ने जब तक दिन खुश होकर छोटे लाट साहब को चिट्ठी लिखी" आदि।

अमृतराय के व्यंग्य निबन्ध मनोरंजनपूर्ण, रोचक, सजीव, सारगर्भित, व्यंग्ययुक्त है इनके वाक्य, कथन और शब्द व्यंग्य की सार्थक उत्पत्ति करते हैं। उनके व्यंग्य में विघटित मानवीय मूल्यों को पुनः स्थापित करने का प्रयास किया गया है, वे केवल विसंगतियों को संकेतित ही नहीं करते, उससे छुटकारा पाने के लिए प्रेरित भी करते हैं।

'मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं' की भूमिका में वे कहते हैं व्यंग्य पाठक के क्षोभ या क्रोध को जगाकर प्रकारान्तर से उसे अन्याय के खिलाफ संघर्ष करने के लिए सन्नद्ध करता है और हास्य उस अशिव और असुन्दर का मखौल उड़ाकर जहाँ एक ओर पाठक को हँसाता है, वहाँ दूसरी ओर उस अशिव को हास्यास्पद बनाकर उसके आतंक को समाप्त कर देता है।[१]

अन्यत्र उनकी मान्यता है कि "हास्य व्यंग्य सच्चे अर्थों में दुःख हरण साहित्य होता है। लेकिन व्यंग्य के लिए न्याय और अन्याय का प्रश्न होता है और हास्य के लिए सुन्दर असुन्दर का।"[२]

राधाकृष्ण

१९३० से ३ फरवरी १९६९ तक इन्होंने विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में हास्य–व्यंग्य का लेखन कार्य किया।

मुर्गे और लोमड़ियों के प्रतीक विधानों द्वारा इन्होंने अपनी बात को प्रखरता प्रदान की है

---

१. अमृतराय – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं

२. अमृतराय – विज़िट इण्डिया, पृष्ठ ३०

इनके दृष्टान्त पौराणिक कथाओं से सन्दर्भित होने के कारण और अधिक प्रभावशाली हो जाते हैं। 'कुम्भकर्ण गोलियां' 'अनुत्तर योगक्षेम की पर्येषणा' आदि इनकी पुष्ठ रचनाएं है। राधाकृष्ण का सिद्धार्थ चुनाव टिकट लेने के लिए यशोधरा को अपने 'बाँस' के पास छोड़ देता है और वर्तमान कुम्भकर्ण 'युवक' हमेशा गोली खाकर नींद में रहना पसन्द करता है।

राधाकृष्ण के राम गाँधीवादी चिन्तन से ओत-प्रोत है जो सोचते हैं "इतने खूने-खराबे और शोर-शराबे की क्या जरुरत है ? रावण का यदि हृदय परिवर्तन कर दिया जाय तो सब कुछ ठीक हो जायेगा। हृदय परिवर्तन होने पर वह आप ही समझ जायेगा कि बुरा काम किया है। तब उसे पाश्चाताप होगा और वह आप ही सीता को लेकर आ जायेगा और क्षमा माँग लेगा"[१]

राधाकृष्ण का अधिकांश व्यंग्य लेखन काल के गाल में समाहित हो गया। इसे डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी ने निकालने का प्रयास किया है। वे राधाकृष्ण के व्यंग्य के विषय में कहते हैं कि "राधाकृष्ण ने गोबर पर भी कलम चलाकर, उसे सोहन हलवा बनाया है बाँसुरी से लाठी का काम किया है तो लखेनी धारदार तलवार की तरह चलती है।"

डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी

हिन्दी व्यंग्य साहित्य के प्रतिष्ठा प्राप्त लेखक एवं व्यंग्य समीक्षक ऐसे पहले व्यंग्यकार है जो उच्च शिक्षा प्राप्त है। इन्होंने व्यंग्य में पी.एच.डी. एवं डी. लिट. की है। इन्हें स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी व्यंग्य का 'प्रवक्ता' कहा जा सकता है। अपनी सूक्ष्म अन्तर दृष्टि और गहरी विषय पैठ के कारण हास्य-व्यंग्य के पार्थक्य को इन्होंने जिस प्रकार विवेचित किया है, शोधार्थियों एवं व्यंग्य आचार्यों के लिए वह आधार ग्रंथ का कार्य करता है। हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमानों को भी इन्होंने भी उसके सम्पूर्ण गुणों-अवगुणों के साथ विश्लेषित किया है। व्यंग्यकार एवं व्यंग्य

---

१. सारिका – फरवरी – १९७०, पृष्ठ २६, हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान

२. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान, २०

समीक्षक के रूप में इनकी रचनाएं इस प्रकार है – व्यंग्यकार के रूप में

१. रिसर्च गाथा – १९७९

२. बानगी – १९८०

३. बिना यात्रा की यात्रा – १९८०

४. किरायेदार का साक्षात्कार – १९८५

५. व्यंग्य ही व्यंग्य (संपा) – १९८७

६. क्रिकेट कीर्तन (संपा) – १९८८

७. मेरी प्रिय व्यंग्य रचनाएं – १९८८

८. इक्कीसवीं सदी में व्यंग्यकार (संपा.) – १९८९

व्यंग्य समीक्षक के रूप में

१. हिन्दी का स्वातन्त्रयोत्तर हास्य और व्यंग्य – १९७८

२. वचन देव कुमार की व्यंग्य रचनाएं – १९८०

३. राग दरबारी व्यंग्य सन्दर्भ की परख – १९८३

४. हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान – १९८८

डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी व्यंग्य के लघु रुप 'लघु व्यंग्य' को विधा के रुप में प्रतिस्थापित करने के लिए आन्दोलन छेड़ा हुआ है। इसी के तहत उन्होंने 'व्यंग्य ही व्यंग्य' नाम के लघु व्यंग्य का संपादन किया। 'लघु व्यंग्य' को प्रतिस्थापित करने के उद्देश्य से इन्होंने 'हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान' में एक स्वतन्त्र अध्याय को जगह दी है।

डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी का रचना संसार बहुआयामी और बहुरंगी है। इनकी रचना यात्रा 'झड़ते बालों की दास्तान' से शुरु होकर 'किरायेदार से साक्षात्कार', 'पुलिस प्रकरण की पावनता' से होते हुए 'जेल डायरी' तक पहुँचती है। इनके व्यंग्य विषय सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक रहे हैं। डॉ. तिवारी स्वयं यूनिवर्सिटी में कार्यरत हैं इसलिए साहित्यिक एवं शैक्षिक

के साथ सांस्कृतिक विषय इनके प्रिय रहे हैं। 'रिसर्च गाथा' की भूमिका में वे लिखते हैं "जिस इलाके में मैं रहता हूँ उसकी कुल पाँच समस्याएं हैं। कापियां देखकर उसके बिल को चेक के रूप में प्राप्त करना, तरक्की पाना, पाठ्यक्रम में पुस्तकें लगवाना, समितियों के सदस्य बनना और सहकर्मियों के कार्यकलापों की शास्त्रीय समीक्षा करना।"[१]

हिन्दी पी.एच.डी. के गिरते स्तर पर उन्होंने लिखा है "हिन्दी साहित्य को विषय मानकर एम. ए. करने वाले हर प्राणी का यह परम पावन धर्म है कि एम. ए. कर लेने के बाद वह पी. एच. डी. करे। हालत यह कि छात्र एम. ए. करते ही घास खोदना शुरू कर देते हैं।"[२]

बालेन्दु शेखर तिवारी के व्यंग्य में आक्रोश का तेवर दिखलायी नहीं पड़ता है जबकि व्यंग्यकार के लिए यह अनिवार्य सा माना जाता है। वे व्यंग्यकार एवं व्यंग्य समीक्षक भी हैं फिर भी उनके अन्दर वह आक्रोश नहीं है। सीधी भाषा, सरल भाव को उचित स्थन पर बैठाकर तिवारी जी तेजी धार वाली व्यंग्य छुरी चलाने में सक्षम है। जैसे –

"अनुभवी जन सेवक ठेकेदार तो इतनी खूबसूरती से सड़क बनाते हैं कि आगे सड़क बनती जाती है और पीछे-पीछे मरम्मत का कार्यक्रम भी शुरु हो जाता है"[३]

भाारतीय परिवेश के भीड़ और बस के रिश्ते को रेखांकित करते हुए तिवारी जी लिखते हैं कि "रुस और अमरीका ने भी अभी तक बसों के मामले में ऐसा विकास नहीं किया है कि इन्सान बस के अन्दर ही नहीं, वो बस के ऊपर भी सफर करे।"[४]

पुलिस के ऊपर सजीला लेकिन सटीक व्यंग्य किया है। जो पुलिस समाजवाद को अपनाकर अपना आर्थिक स्तर ऊपर उठा रही है भौतिक संशाधनों को आवश्यक रुप से जुटा

---

१. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – रिसर्च गाथा, पृष्ठ ५
२. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं, पृष्ठ ३८
३. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – किराएदार से साक्षात्कार, पृष्ठ ७८
४. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं, पृष्ठ ८५

रही है लेकिन समाज के कुछ पदों के बराबर नहीं समझी जाती है इसलिए उसकी छटपटाहट अभी भी विद्यमान है इसको चुटीले ढंग से तिवारी जी कहते हैं –

"भारत वर्ष को नेताओं, दलालों, इंजीनियरों और ठेकेदारों का स्वर्ग कहा जाता है जबकि पुलिस का विनम्र निवेदन यह है कि इस लिस्ट में पुलिस कर्मियों का भी उल्लेखनीय होना चाहिए।"[१]

तिवारी जी की व्यंग्य प्रहारात्मक क्षमता का परिचय उनके 'लघु व्यंग्यों' में मिलता है। 'आत्मा की टोक', 'अंगूर खट्टे नहीं है', 'मंच के नीचे', 'मरम्मत', 'रिश्वत', 'प्रश्न प्रसंग' आदि उनके प्रसिद्ध 'लघु व्यंग्य' है। (अंगूर खट्टे नहीं हैं) में नेताओं की खिल्ली उड़ायी गयी है जिनकी छाया मात्र पड़ने से लोगों के विचार बदल जाते हैं। एक नमूना – "ऊँची दीवार पर फैली अंगूर की बेलों में लटके गुच्छों को देखकर लोमड़ी बहुत परेशान थी। उसने लोमड़ी संघ की बैठक में यह खबर करने का मन ही मन फैसला कर लिया था कि अंगूर खट्टे है। भारी मन से वह वापस हो रही थी कि उस पर भूतपूर्व मंत्री की छाया पड़ गयी। बस लोमड़ी का सारा सोच बदल गया। उसने लोमड़ी संघ में 'अत्यन्त गूढ़ वक्तव्य दिया – 'अभी अंगूर मीठे हैं, कल भी मीठे थे और अब से शायद खट्टे हो जायेंगे।"[२]

'परिचर्चा' के माध्यम से भी तिवारी ने व्यंग्यकार मेघा का परिचय दिया है। इसी प्रकार की एक 'परिचर्चा' जिसका विषय था 'यदि राम राज्य में व्यंग्यकार होते' में तिवारी जी कहते हैं "राम राज्य में सब कुछ था। नहीं था तो केवल व्यंग्यकार। रामराज्य इसी कारण राम राज्य बना रहा। यह भी मालूम है भला कि राम राज्य में पुलिस क्या करती थी ? क्योंकि चोरी नहीं होती थी, डाके नहीं पड़ते थे, बलात्कार नहीं होते थे, तस्करी नहीं थी तो क्या पुलिस बेचारी मक्खियां मारती रही होंगी। और एक बात की ऊपर आमदनी के भयानक सूखे में पुलिस

---

१. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – किराएदार से साक्षात्कार, पृष्ठ ५८

२. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – किराएदार से साक्षात्कार, पृष्ठ ५८

का काम कैसे चलता था।"[१]

डॉ. तिवारी का व्यंग्य इस अर्थ में अधिक महत्वपूर्ण है कि यह सीधे फटकार न लगाकर, बौद्धिक फटकार लगाता है।

शिल्प एवं भाषा

व्यंग्य के लिए वाग्वैदग्ध्य एक अनिवार्य गुण है। डॉ. तिवारी की रचनाओं में वाग्वैदग्ध्य की प्रचुरता है इन्होंने सीधी-सपाट शैली में व्यंग्य का गहरा घाव करने वाला वाक्य गढ़ा है। जैसे-

"अपना यह बॉस है न, सहसा प्रवेश करने की कला में पद्मविभूषण है"[२]

"वे जिस उत्साह से इन्दिरा जी की जय बोलते है, उसी शक्ति के साथ जय प्रकाश नारायण की भी जय बोलते है।"[३]

डॉ. तिवारी ने कथोपकथन के द्वारा सुन्दर व्यंग्य का सृजन किया है, जो व्यंग्य विषय को, सीधे मन मस्तिष्क को सोचने के लिए विवश करता है इनका व्यंग्य हास्य नहीं दर्द, चुभन उत्पन्न करता है।

"आपके पति क्या काम करते हैं ?"

"जी वे काम करने के लिए बचे ही कहाँ है ?"

"मतलब।"

"उनके मरे दस साल हो गये"

"दस साल ! क्या कह रही हैं आप ? आपकी गोद में डेढ़ साल की लड़की है .... मेरा मतलब है ?

---

१. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – किराएदार से साक्षात्कार, पृष्ठ ६१-६२

२. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – किराएदार से साक्षात्कार, पृष्ठ ६४

३. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – किराएदार से साक्षात्कार, पृष्ठ २७

"अजी बाबू जी वे नहीं है तो क्या हुआ ? मैं जिन्दा हूँ।"[१]

डॉ. तिवारी ने सर्वथा नवीन उपमानों की इतनी सुन्दर सृष्टि की है कि यह देर तक मन-मस्तिष्क को झकझोरता है –

"मेरे सिर के बालों ने अपनी मातृभूमि के खिलाफ विद्रोह कर दिया"[२]

"बालों के झुंड में भगदड़ मच गयी।"

डॉ. तिवारी व्यंग्य तक चुटकुले से होकर पहुँचते हैं यही उनके व्यंग्य की पहचान भी है और कमी भी। 'बाल वर्ष बीत जाने पर' में वे ७ चुटकलों का प्रयोग किया है।

डॉ. तिवारी ने एक 'अदद', 'मुसम्मात', 'सीन पर', 'कन्या राशि', 'फ्रूट सलाद' जैसे शब्दों का प्रयोग अधिक किया है।

व्यंग्य सम्बन्धी विचार

'रिसर्थ गाथा' के अतिरिक्त तिवारी जी ने अन्य किसी कृति की भूमिका नहीं लिखी है। लेकिन अपने समीक्षात्मक लेखों, एवं रचनाओं में इन्होंने व्यंग्य के ऊपर प्रकाश डाला है-

"व्यंग्य किसी अध्यात्मिक दृष्टि का परिणाम नहीं है अपितु सर्जक का अनुभव इस विधा में एक तार को छूकर सहस्त्रों तार झनझना डालने की विलक्षण क्षमता पर संगम कर डालता है .... व्यंग्य लेखन बनावट और दिखवट भरे परिवेश में सच को पकड़ने की जोखिम भरी कोशिश है।"[३]

इसी प्रकार अपने शोध-प्रबन्ध में भी इन्होंने व्यंग्य की परिभाषा की है।

डॉ. तिवारी की मान्यता है कि व्यंग्य का उद्देश्य मनोरंजनात्मक नहीं है निर्माणात्मक होता है।

---

१. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – किराएदार से साक्षात्कार, पृष्ठ ५५
२. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – किराएदार से साक्षात्कार, पृष्ठ ५५
३. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – किराएदार से साक्षात्कार, फ्लैप से

डॉ. तिवारी के व्यंग्य और उनके व्यंग्य साहित्य में योगदान को रेखांकित करते हुए डॉ. शंकर पुणताम्बेकर लिखते हैं कि "बालेन्दु शेखर तिवारी व्यंग्य साहित्य के जाने माने व्यंग्य समीक्षक हैं।

समीक्षक एक प्रकार से रेफरी होता है खेल में अनुभवी खिलाड़ी या रिटायर्ड खिलाड़ी अच्छे रेफरी सिद्ध होते हैं। साहित्य में ऐसी बात नहीं है। तिवारी जी लगता है रेफरीशिप के चक्कर में शैक या व्यवसाय के कारण पड़ गये, परास्त खिलाड़ी के कारण नहीं। अब वे मैदान में उतरे हैं तो उनका खेल लोग बड़ी चौकस दृष्टि से देखेंगे।[१]

डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी के व्यंग्य साहित्य के विषय में कहा जा सकता है कि "साधारण बोल-चाल की भाषा में गहरी चोट करने वाले, गिने-चुने व्यंग्यकारों में डॉ. तिवारी सबसे आगे खड़े हैं।"[२]

डॉ. शंकर पुणताम्बेकर

दूसरी पीढ़ी के प्रमुख व्यंग्कारों में एक डॉ. शंकर पुणताम्बेकर केवल कथ्य के आधार नवीनता का सृजन नहीं करते, बल्कि नये शिल्प का निर्माण और विकास भी करते हैं। जीवन की विसंगतियों को व्यंजित करता इनका व्यंग्य 'जीवन की व्याख्या' करता है। डॉ. बालुन्दु शेखर तिवारी आपके व्यंग्य की प्रमाणिकता पर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं "डॉ. पुणताम्बेकर के व्यंग्य कर्म में दंश की तीखी अनुभूति केवल चमत्कार की आतिशबाजी नहीं है।"[३]

डॉ. पुणताम्बेकर की प्रमुख व्यंग्य रचनाएं इस प्रकार हैं –

१. रेडीमेड कपड़े – १९७३

२. कैक्टस के काँटे – १९७९

---

१. डॉ. पुणताम्बेकर – अंगूर खट्टे नहीं हैं, अभिमत

२. डॉ. पुणताम्बेकर – अंगूर खट्टे नहीं हैं, अभिमत

३. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान

३. प्रेम-विवाह – १९८१

४. विजिट यमराज की – १९८१

५. अंगूर खट्टे नहीं है – १९८५

६. बदनामाचा – १९८८

दो एकांकी संग्रह भी हैं –

१. बचाओ मुझे डाक्टरों से बचाओ – १९७२

२. बचाओ मुझे कवियों से बचाओ – १९८०

इस प्रसंग में उस व्यवस्था के ऊपर चोट किया है जहाँ कौरवों का साम्राज्य है। अर्थात अराजकता का राज्य है और उन सामाजिक कार्यों को करने वाला व्यक्ति प्रतिष्ठा पाता है।

डॉ. पुणताम्बेकर ने व्यंग्य की सफलता का कितना सरल एवं सीधा उपाय बताया है "मैं बहरा हूँ, और तुम गूँगे, इसलिए आओ हम आपस में मिलें और प्रजातन्त्र को सफल बनाएं।"[१]

कम्प्यूटर और ब्यूरोक्रेसी की तुलना करते हुए उन्हें यन्त्र बना दिया है– "जिस तरह की आबोहवा में तुम्हें (कम्प्यूटर) रखा जाता है तुम्हारी तुनक मिजाजी को देखकर बिल्कुल इसी तरह की आबोहवा में व्यूरोक्रेट को रखा जाता है। फर्क बस यही है कि तुम्हारी तटस्थता मशीनी है, इनकी तटस्थता पथरीली है। इसलिए हे कम्प्यूटर हमें तुम अधिक अपने लगते हो बनिस्पत इन पत्थरों के।"

आदमी की आवश्यकताएं एवं विवशताएं उसकी संचेतना को ही नहीं बल्कि पूरी मानसिकता को भी प्रभावित करती है। डॉ. पुणतोम्बेकर इसको लक्ष्य करके लिखते हैं कि "वह खिड़की में आयी। इन दोनों ने उसे देखा। एक पेट भरा था सो इसे उसके चेहरे के सौन्दर्य

१. डॉ. पुणताम्बेकर – अंगूर खट्टे नहीं है, पृष्ठ १८१

२. डॉ. पुणताम्बेकर – अंगूर खट्टे नहीं है, पृष्ठ १७८

ने लुभा दिया। दूसरे का पेट खाली था सो इसके इसके उसके गले के हार ने। दोनों ने उसकी ओर कदम बढ़ाया। इनमें पहला प्रेमी कहलाया दूसरा चोर। इस उद्धरण द्वारा इस बात की शंकर पुणतोम्बेकर ने खुलासा किया है कि आदमी के गुण-अवगुण परिस्थितियों के कारण भी निर्मित होते हैं।

भाषा शिल्प

डॉ. पुणतोम्बेकर की रचना बहुआयामी और बहुविध है। उन्होंने निबन्ध, एकांकी, उपन्यास, कहानी कथा, लघुकथा, व्यंग्य, लघुव्यंग्य, परिचर्चा, प्रश्न पत्र आदि लिखे।

शुरु की इनकी व्यंग्य रचनाएं सामान्य स्तर की थी लेकिन जैसे-जैसे इनके अन्दर बौद्धिकता का समावेश होता गया इनकी रचनाएं हास्य से कटती गयी और व्यंग्य की तरफ मुड़ती गयी। इनका व्यंग्य मूलतः व्यक्ति और उससे सन्दर्भित विसंगतियां पर केन्द्रित रहा है। साहित्य समाज, राजनीतिक, प्रेम, पूँजी, न्याय, धर्म, प्रचार, कला, संस्कृति आदि सभी पर व्यंग्य करते हैं। अपने व्यंग्य विषय के विषय में कहते हैं कि "व्यंग्य आस पास के कूड़े-कचरे को कच्चे माल के रुप में इस्तेमाल करता है। कचरा जितना यथार्थ होगा, उतना वह व्यंग्य के लिए आदर्श है।"

चिकित्सा के क्षेत्र में फैली कुव्यवस्था को 'विजिट यमराज की' में व्यक्त किया गया है। जहाँ यमराज के आने पर लेखक को विश्वास नहीं होता वह कहता है। आप अकेले डॉ. है जो खुद को यमराज स्वीकार कर रहे हैं।

स्त्री पुरुष के सम्बन्ध प्रेम के कारण नहीं आज दहेज के कारण बनते-बिगड़ते है। इसे लक्ष्य करके पुणतोम्बेकर जी ने लिखा है कि –

स्त्री – देखो, तुम कहाँ की मैं कहाँ की ?

---

१. प्रकर – १९८४ मार्च – २५

२. डॉ. पुणताम्बेकर – विजिट यमराज की, पृष्ठ ८

पुरुष – हाँ, न तुम मुझे जानती थी न, तुम्हें मैं

स्त्री – पर दोनों को देखो जिन्दगी भर के लिए दहेज सूत्र ने कैसा बाँध दिया है।

डॉ. पुणतोम्बेकर ने पुराने धार्मिक प्रसंगों में नये अर्थ को व्यक्त करने वाले प्रभावी व्यंग्य की सृष्टि की है "उस लड़के से उस दिन गोपी की दही की हांडी फूट गयी तो वह गुस्सा नहीं हुई उसके पास जा करके बोली, बस अब तू नौकरी लायक हो गया है, जा, कौरवों के दरबार में तुझे जरुर कोई ऊँची जगह मिल जायेगी।"[१]

प्रशस्तिपत्र, पुस्तक–समीक्षा, भाषण–सम्बोधन, संलाप आदि विभिन्न विधाओं के माध्यम से व्यंग्य की छटा विखेर दी। गद्य की प्रायः सभी विधाओं में इन्होंने अपनी लेखनी चलायी है।

इनका भाषण (भाषण जोकर सम्मेलन का), संलाप (पहली रात के संलाप, कौरव प्रगति), साक्षात्कार (कविवर बिहारी का इन्टरव्यू, इण्टरव्यू मेरा मेरे ही द्वारा), प्रश्न पत्र (एक परचा व्यंग्य बोध का), गणितीय शैली (नया अंक गणित), पुस्तक समीक्षा (एक व्यंग्य यात्रा की समीक्षा, रंग में प्रकाशित, दी लब बुक : एक रिव्यू), उपन्यास (एक मंन्त्री स्वर्ग लोक में), नुक्कड़ नाटक (प्रेत का बयान), लघु कथा (सत्य की बात, अवैध सन्तान, टैक्सट बुक और गाइड, मरियल और मांसल, विरोध आदि) परिचर्चा (व्यंग्यकार होम फंट पर, प्रेमिका जब पत्नी बन जाए, आप हास्य–व्यंग्य क्यों लिखते हैं, आज के सन्दर्भ में इसके महत्व तथा पसन्द के क्या कारण है) लघु–व्यंग्य (समाचार सुनकर, तीन बैल), व्यंग्य छटा (वदनामचा), 'टुकड़े–मुखड़े शब्द कोश' (विजिट यमराज की, अंगूर खट्टे नहीं है)

उनके शब्दकोश और टुकड़े व्यंग्य को नयी देन है।

"जिनका भूगोल होता है, उनका इतिहास नहीं होता।"[१]

"उनका व्यक्तित्व फाइव स्टार होटल की तरह कैसा भव्य और ऊँचा है उसमें किराया

---

१. डॉ. शंकर – कैक्टस के लॉट – पृष्ठ १०४

२. डॉ. पुणताम्बेकर – विजिट यमराज की, पृष्ठ १७४

देकर कोई भी ठहर सकता है स्मगलर भी, वेश्या भी।"[१]

"जब वे सभी इलाजों से हार गये तो जाकर देश भक्ति में एडमिट हो गये।"[२]

व्यंग्य अमरकोश के एकाध उदाहरण देखिए –

छात्र संघ – शिक्षा जगत का हाई कमान।

जांच कमीशन – फर्माइशी न्यायालय।

इस अमरकोश का शिल्प नया है जो व्यंग्य में पहले नहीं प्रयुक्त होता था। यह एक प्रभावशाली शिल्प वैशिष्ठ्य है जो पुणतोम्बेकर को विशिष्ठ व्यंग्यकार बनाता है।

अन्य विद्वानों की भाँति ही इन्होंने भी नये उपमानों का सृजन किया। इनके उपमान व्यंग्यार्थ स्पष्ट करने में महती भूमिका निभाते हैं जैसे –

"किताब चीटी होती है पर भूमिका में हाथी दर्शायी जाती है।"

"भाषण एक ऐसी रेलगाड़ी है जो पटरी को छोड़कर चलती है।"

मुहावरे – गैया केवल बछड़ा कूदे

समरथ को नहीं प्रेस गोसाई,

उनका व्यंग्य के सन्दर्भ में मानना है कि "व्यंग्य युग की विसंगतियों की वैदग्ध्यपूर्ण तीखी अभिव्यक्ति है। युग विसंगतियां हमारे चारो ओर के यथार्थ जगत के वैदग्ध्य इन विसंगतियों को वहन करने वाले शैली सौष्ठव से तथा तीखापन विसंगति एवं वैदग्ध्य के चेतन पर पड़ने वाले मिले-जुले प्रभाव से सम्बन्धित है।

पुणताम्बेकर विसंगति, विदग्धता, तीखापन को व्यंग्य का तत्व स्वीकार करते हैं। वे व्यंग्य

---

१. सं. पाटील – एक व्यंग्य यात्रा, पृष्ठ ११४

२. सं. पाटील – एक व्यंग्य यात्रा, पृष्ठ ११४

को नकारात्मक दर्शन मानते हैं। व्यंग्य विडम्बना और विरूपता को नकारता है। रावणत्व को नकारते हुए रामत्व में आस्था रखता है। इसलिए व्यंग्य नकारात्मक होते हुए भी अनास्थावादी लेखन नहीं है। अनास्थावादी की चोट ध्वंसात्मक होती है जब कि व्यंग्य की चोट विधायक विचार प्रवर्तक होती है।

संक्षेप में डॉ. शंकर पुणताम्बेकर दूसरी पीढ़ी के नये शिल्पकार है जिन्होंने नये साँचे में ढालने का कार्य किया। इनके टुकड़े और शब्द-अमर कोश व्यंग्य के नये रास्ते ढूंढ़ने को दीपक लेकर आगे-आगे चल रहा है।

प्रेम जनमेजय

युवा व्यंग्यकार एवं व्यंग्य समीक्षक प्रेम जनमेजय का रचना संसार आस पास के परिवेश गत विसंगतियों के आक्रोश के कारण निर्मित हुआ है।

'राजाधानी में गँवार' रचना में उन्होंने एक ऐसे व्यक्ति का चित्र खींचा है जो दिल्ली आते ही कुली, टी. सी. आदि के चक्कर में पड़कर जेल चला जाता है अर्थात सामान्य आदमी की 'व्यवस्था' में दुर्गति हो जाती है। इसी प्रकार 'मंन्त्री की कृपा' में उन्होंने दिखलाया है किस प्रकार मंन्त्री की कृपा पर हर छोटे-बड़े कार्य सम्पादित हो जाते हैं।

नेताओं की दिन प्रतिदिन की बढ़ती संख्या और उनकी अनिवार्य योग्यता को प्रेम जनमेजय कुछ इस प्रकार से परिभाषित करते हैं। "जहाँ महत्ता होता है वहाँ कोई न कोई नेता होता है।"[१] जब यह सिद्ध हो गया है कि में नालायक हूँ और रहूँगा तो पिताश्री ने और कोई चारा न देखकर मुझे राजनीति में डाल दिया।"[२]

प्रेम जनमेजय ने 'पुलिस' को केन्द्र में रखकर अधिक रचनाएं की है। 'पुलिस लीला' में

---

१. प्रेम जनमेजय – राजधानी में गँवार, पृष्ठ ९८

२. प्रेम जनमेजय – देश में जयते, पृष्ठ ३९

उन्होंने समाज के उस आतंक को दिखलाया है जो पुलिस के कारण उत्पन्न होता है लोग रेल यात्रा के समय पुलिस के पास नहीं बैठना चाहते हैं।

'प्रमाण पत्र' रचना में सरकारी कार्यालयों के भ्रष्टाचार को उधेड़ा गया है तो 'परीक्षा पेपर थोक में जाँचना' में ठेके पर कापी दिखलाने की दृष्प्रवृत्ति को रेखांकित किया गया है।

'आह। आया महीना मार्च का' परसाई शैली में लिखा व्यंग्य है। जिसमें छात्र को अध्यापक का कई चित्र दिखलायी पड़ता है। कहीं छात्र रावण के रूप में देखते हें कहीं कृष्ण के रूप में, कहीं नायिका रूप में। तात्पर्य यह कि अपनी आवश्यकताओं और उनकी प्रतिक्रिया के कारण एक अध्यापक का कई रुप दिखलायी पड़ता है।

प्रेम जनमेजय ने अपने आस-पास के हर उस विषय को लेकर व्यंग्य किया है जिसको लेकर उनका मन आक्रोशित होता था।

शिल्प एवं भाषा

प्रेम जनमेजय शंकर पुणताम्बेकर की भाँति नवीन शिल्प का खूब प्रयोग करते हैं जैसे – समस्याएं समाधान (हरिश नवल के साथ), सिर मुड़ाते ओले (संपादक स्तुति), मंत्री जी का कुत्ता, राजधानी में गँवार, मंत्री क्षेत्र, कुरुक्षेत्र, सीता अपहरण केस (जासूसी) आदि।

मुहाविरे- अंगूठा चूसना (प्रकाशका) गंगा नहा आना का प्रयोग किया है।

उपमा का सुन्दर प्रयोग इनकी रचनाओं में मिलता है – डालडेसी अलभ्यपिये, देशी घी, की मधुर स्मृतियां "तेल मँहगाई की तरह भारत की पुण्य धरती पर फैल गया।"

डॉ. शंकर पुणताम्बेकर कहीं कहीं का व्यंग्य पंक्तियों द्वारा भी व्यंग्य वाण छोड़ते हैं –

क्षमा बड़न को चाहिए, छोटन को उत्पात

क्या विष्णु को घट गयो, जो भृगु मारी लात ।

व्यंग्य सम्बन्धी विचार

'राजधानी में गँवार' की भूमिका में डॉ. प्रेमजनमेजय लिखते हैं कि "इन्होंने व्यंग्य की समसामयिकता, प्रहारक शक्ति, तीव्र सम्प्रेषणीयता और जनवादी दृष्टिकोण के कारण उसे प्रगतिशील माना है व्यंग्य विधा में जनसम्पर्क की जितनी शक्ति है उतनी अन्य किसी विधा में नहीं है। व्यंग्य आम आदमी से जुड़ा हुआ है जनतन्त्र में सरकार से प्रत्यक्ष लड़ने का एक मात्र साहित्य के आधार व्यंग्य ही है वह आक्रोश को प्रहारात्मक अभिव्यक्ति देता है।"[१]

इस कथन द्वारा प्रेम जनमेजय की व्यंग्य सम्बन्धी धारणा का पता चलता है कि उनका व्यंग्य आम आदमी की पीड़ा से निकला है।

प्रेम जनमेजय का व्यंग्य पढ़ने के बाद यह आभास होता है कि मैं अपने को कहीं अधिक बेहतर समझने लगा हूँ। इनके व्यंग्य की यह सबसे बड़ी विशेषता कही जा सकती है।

डॉ. बरसाने लाल चतुर्वेदी

डॉ. बरसाने लाल चतुर्वेदी पहले व्यंग्यकार है जिन्होंने व्यंग्य पर डॉ. की डिग्री ली है। 'राष्ट्रपति' पुरस्कार प्राप्तकर्ता चतुर्वेदी जी ने व्यंग्य को परिभाषित करने का कार्य किया है। इनका व्यंग्य हास्य के रस में पगा होता है। ये हास्य-व्यंग्य धारा के बुजुर्ग विद्वान है। इन्होंने काव्य निबन्ध एवं कैरिकेचर रुपों को व्यंग्य के लिए अपनाया है –

इनकी कुछ प्रमुख कृतियां इस प्रकार हैं –

१. महामति चाणक्य राजदूत बने – १९६२

---

१. प्रेम जनमेजय – राजधानी में गँवार, पृष्ठ ५७

२. भोला पण्डित की बैठक – १९७५

३. बुरे फँसे – १९७६

४. नेता और अभिनेता – १९७७

५. मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं – १९७७

६. टालू मिक्स्चर – १९७८

७. मिस्टर चोखेलाल – १९८०

८. चमचागिरी – १९८१

९. मुसीबत है – १९८२

१०. नेताओं की नुमाइश – १९८३

११. हंसी के इन्जेक्शन – १९८६

१२. साली वी. आई. पी. की – १९८९

डॉ. वरसाने लाल चतुर्वेदी का लेखन शुरुआती दौर मे हास्य युक्त था। लेकिन जैसे-जैसे अनुभव गहराता गया। हास्य किनारे होता गया और व्यंग्य घुसता गया। डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी इनके व्यंग्य लेखन के विषय में कहते हैं –

"वरसाने लाल चतुर्वेदी का व्यंग्य लेखन हँसाता है और विसंगतियों के प्रति सचेत भी करता है।"[१]

चतुर्वेदी जी ने अपने लेखन में राजनीति, शिक्षा और समाज पर खूब चुटकी ली है। शिक्षा जगत की कुप्रवृत्तियों पर डॉ. वरसाने लाल ने सटीक व्यंग्य किया है क्योंकि वे स्वयं उन स्थितियों से दो चार हुए थें एक महोदय को पी. एच. डी. मिलने पर वे लिखते हैं कि बिना गर्भधारण किए बालक कूँ जन्म देकर प्रोफेसर वर्मा ने भारत में दूसरा भूमिगत विस्फोट किया। इसमें किराये पर व्यंग्य लिखे जाने का जिक्र है जो कि एक तरह का आम प्रचलन हो गया है।

१. बालेन्दु शेखर तिवारी – हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान, पृष्ठ ३२

इन्टरव्यू को इन्टरव्यू के रुप में न देखकर उसे वास्तविक रुप में चतुर्वेदी जी देखते हैं तभी उनकी लेखनी लिखती है "इन्टरव्यू वह थर्मामीटर है जिससे इच्छानुसार टेम्प्रेचर लिया जाता है।"

सामाजिक बुराइयों पर व्यंग्य करते समय उनकी दृष्टि जीवन की आवश्यकताओं की ओर जाती है। तो चतुर्वेदी जी देखते है कि जीवन में आवश्यक वस्तुओं का अभाव है, कारण व्यापारियों ने माल गोदामों में छिपा रखा है।

"जिसकी रग-रग में मुनाफाखोरी और जमाखोरी भरी हुई है कभी मान सकते हैं ? बाहर से तेल मँगाया इसे भी या लोग पी गये, मानौं दाले वातानुकूलित स्टोर में ठंडक ले रही है और उनके अन्दर ही अन्दर बढ़ रहे हैं।"[१]

इसी प्रकार बड़े-बड़े लोगों द्वारा अपना अभिनन्दन कराने के लिए 'अभिनन्दन समिति' का भी गठन कर लिया जाता है। इसे व्यापारिक प्रतिष्ठान माना जाता है जिसका प्रचार किया जाता है खुल गई, खुल गयी शैली में –

बरसाने लाल चतुव्रेदी जी भ्रष्टाचार को एक परिवार मानते हैं इसीलिए उन्होंने लिखा है कि –

"भ्रष्टाचार की पत्नी का नाम रिश्वत देवी है। चिरंजीवी श्री पक्षपात प्रसाद है, लड़की का नाम कु. लाल फीता शाही है, साले का नाम तस्करमल है, साली मिस मिलावट देवी है।, मौसा काला बाजार सिंह है"[२] इस प्रकार इन सबके बीच एक परिवारिक सम्बन्ध हैं सभी एक दूसरे की सहायता करत हैं –

भ्रष्टाचार को लेकर उन्होंने अन्य कई जगह कटाक्ष किया है एक स्थन पर वे लिखते

---

१. बरसाने लाल चतुर्वेदी – टालू पिक्चर, पृष्ठ २२

२. बरसाने लाल चतुर्वेदी – मूँछ पुराण, पृष्ठ २८-३३

हैं कि "नौकरी योग्यता से नहीं सिफारिश से मिलती है जैसी सिफारिश करो तुलसी, वैसी मिलेगी नौकरी। यानि सोर्स की योग्यता पर, नौकरी का पद निर्भर होता है।

राष्ट्र भाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए सरकारी कर्मचारियों को प्रशिक्षण दिया जाता है लेकिन हालात उससे भी अधिक खराब हो जाता है इसे लेकर वे लिखते हैं कि

"सरकारी कर्मचारी कूँ हिन्दी पढाइबे की योजना की कहानी सुनि के कहावत याद आवै है कि नौ दिन चलै अढ़ाई कोस। पूँछ टेढ़ी की टेढ़ी।"[१]

राजनीतिज्ञों को सफलता का मंत्र बताते हुए चतुर्वेदी जी कहते हैं कि "एक कुशल राजनीतिज्ञ को साहसी, चालबाज, बदला लेने की तीक्ष्ण भावना रखने वाला होना चाहिए। शत्रु को न्याय अन्यथा दोनों ही तरह से तबाह कर डालना है।[२] यह राजनीतिज्ञों के लिए आवश्यक गुण भी है।" इसी प्रकार राजनीतिज्ञों और मन्त्रियों की सर्वज्ञता के ऊपर चतुर्वेदी जी अपनी लेखनी को घसीटा है। नेता किसी भी विषय पर बोल लेते हैं चाहे वह अन्तर्राष्ट्रीय विषय हो अथवा स्थनीय हो, धर्म से सम्बन्धित हो अथवा भ्रष्टाचार से इसी को लक्ष्य करके चतुर्वेदी जी लिखते हैं– "चाहे गीता जयंती हो अथवा आधुनिक बोध पर विचार गोष्ठी प्रातः स्मरणीय अभिनन्दनीय मंत्री किसी न किसी रुप में अपने दो शब्द अवश्य कहेंगे। मंत्री जी को सर्वज्ञ माना जाता है आकाश में ईश्वर तथा पृथ्वी पर मंत्री।"[३]

समग्र रुप से कहा जा सकता है कि चतुर्वेदी जी का व्यंग्य धीरे-धीरे गुदगुदाता है लेकिन एकाएक जो की चिकोटी काटता है, इनका व्यंग्य हँसाता भी है, चिढ़ाता भी है।

---

१. बरसाने लाल चतुर्वेदी – भोला राम की बैठक, पृष्ठ ४६

२. बरसाने लाल चतुर्वेदी – मिस्टर चोखे लाल, पृष्ठ ६९

३. डॉ. प्रकाश चतुर्वेदी – डॉ. वरसने लाल चतुर्वेदी-अभिनन्दन, पृष्ठ १५२

शिल्प वैशिष्ठ्य

इन्होंने मानवीकरण एवं उपमाओं द्वारा भाव को उपस्थित करके व्यंग्य किया है। यहाँ इनका हास्य मिश्रित भी अधिक परिलक्षित होता है जैसे – "बस रुपी प्रेयसी को अब लोग टकटकी लगाकर देख रहे हैं और गुनगुना रहे हैं 'आजा ओ आने वाली आ जा' और तब वह पधारती है।"[१]

कविता और दोहों के माध्यम से भी इन्होंने व्यंघ्य की सृष्टि की है –

रहिमन चुप हवै बैठिये परिमिट में लखि देर

जब नीके दिन आइहै, बनत न लागि बेर।[२]

"विज्ञापन देखकर भेज आया अर्जी

सूट सिलाने गया, हँसने लगा दर्जी" [३]

है कोई पुल, वरना रोशनी गुल

इसी प्रकार की अनेक कविता, गीत, दोहे के माध्यम से चतुर्वेदी जी ने सार्थक व्यंग्य को हँसाते हुए कह डाला है।

व्यंग्य के सन्दर्भ में इनकी मान्यता है कि "हास्य की मात्रा इतनी अधिक न हो जाये कि व्यंग्य का प्रभाव ही नष्ट हो जाये। व्यंग्य में जितनी अधिक मात्रा में वक्र उक्तियां होगी जितनी उसमें वचन-विदग्धता होगी जितनी अधिक प्रेषणीयता होगी उतना ही प्रभावी होगा।[४]

सृजन में अद्वितीय चतुर्वेदी, अपने समकालीन व्यंग्यकारों में इस कारण अलग दिखलायी

---

१. चतुर्वेदी – टालू पिक्चर, पृष्ठ ४९

२. चतुर्वेदी – मूँछ पुराण, पृष्ठ ८९

३. चतुर्वेदी – मूँछ पुराण, पृष्ठ ३४-३५

४. चतुर्वेदी – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं, भूमिका

पड़ते हैं कि इनके हाथ में तलवार ही नहीं, फूलों का उपहार भी रहता है। जिससे मन प्रसन्न होता है।

सुदर्शन मजीठिया

सुदर्शन मजीठिया ने व्यंग्य को मुर्गे की बाँग कहा है जो सुख की नींद में सोये हुए व्यक्ति के मानस में उद्धिग्नता भर देती है और सुख की नींद हराम हो जाती है। इस उद्धिग्नता में मजीठिया खिल्ली भर देते हैं जिससे हँसी का स्रोत फूट पड़ता है। डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी इनके व्यंग्य की दिशा को निर्धारित करते हुए लिखते हैं कि "उनका व्यंग्य एकदम वैष्णव तथा सहज है। एक किस्म की वर्फ है यह व्यंग्य की तराश, लेकिन इस वर्फ की शीतलता के पीछे सघन उष्णता छिपी रहती है।[१]

मजीठिया का व्यंग्य सामाजिक, राजनैतिक, शैक्षिक तथा साहित्यिक सभी क्षेत्रों से उठ कर आया है। इनका व्यंग्य मनुष्य को हँसाते-हँसाते रुला देने वाला है। अपनी विशिष्ट शिल्प योजना के कारण इनके व्यंग्य में दो विपरीत भाव, अधिक तेजी से उभरता है। इनका व्यंग्य आचरण ध्वंसात्मक न होकर, निर्माणात्मक है।

इनकी प्रमुख रचनाएं इस प्रकार हैं –

१. इंडिकेट बनाम सिंडीकेट – १९७१
२. मुख्यमंत्री का डंडा – १९७४
३. कुछ इधर की कुछ उधर की – १९७६
४. टेलीफोन की घण्टी से – १९८३
५. मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं – १९८५
६. डिस्को कल्चर – १९८५

---

१. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान, पृष्ठ ३४

७. इक्कीसवीं सदी – १९८८

८. छीटे – १९८९

९. पब्लिक सेक्टर का सांड – १९८९

धर्म के ठेकेदारों सन्त, महात्मा, साधु को लताड़ते हुए मजीठिया लिखते हैं कि "यदि संसार से राम-नाम को हटा दिया जाये तो सब 'राम की बहुरिया' बनने वाले एम्प्लायमेन्ट एक्सचेंज' में नाम लिखवा लेंगे क्यांकि भगवान के नाम से ही, कितने लोगों को नौकरी मिली हुई है।"[१]

राजनीति को मजीठिया ने सबसे अधिक अपने व्यंग्य का विषय बनाया है। अपनी प्रमुख रचनाओं 'कागजी सुल्तान', 'इंडीकेट बनाम सिंडीकेट', 'मुख्यमंत्री का डंडा', 'त्रिमूर्ति', 'भारत की समाजवादी नीति', 'डॉ भाठ जी भाई के विचार' आदि में इन्होंने भारतीय राजनीति की जमकर खबर ली है। राजनीतिज्ञों को बैल एवं 'सांड़' का प्रतीक बनाकर इनके ऊपर चोट की है।

"बैल को कांग्रेस ने अपना चुनाव चिन्ह रखा है क्योंकि उसमें बैल जैसे गुण हैं। काम करते हैं आराम के साथ। जैसे बैल खेत जोतता है उसके बाद उसकी बला से खेत में कुछ उगे या नहीं उसी तरह हमारी सरकार योजनाएं बना देती है आगे वे पूरी हो या न हों।"[२]

वर्तमान नेताओं की प्रतिबद्धता को उनकी जेल की यात्रा पर तय किया जाता है चाहे वे जेल चोरी में ही गये हों। अधिकांश नेता छद्म देशभक्ति का चोला पहने घूम रहे हैं। मजीठिया इन सभी को अपने व्यंग्यवाणों द्वारा आहत कर गिराने का कार्य किया है –

"उस समय तुम चोरी के अपराध में जेल गये थे। तुम्हारी भूख ने चोरी के लिए मजबूर कर दिया था और तुम अन्य भूखे मित्रों के साथ सरकारी गोदाम में चोरी करते पकड़े गये

---

१. सुदर्शन मजीठिया – कुछ इधर की कुछ उधर की, पृष्ठ ४६-४७

२. सुदर्शन मजीठिया – इन्डीकेट बनाम सिंडीकेट, पृष्ठ ९१

थे।

नेता की परिभाषा जो मजीठिया द्वारा दी गयी वह बहुत अधिक सही प्रतीत होती है जिस प्रकार भारतीय राजनीति में अपराधी तत्वों का प्रवेश हो रहा है तथा उसका वर्चस्व दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है उससे तो मजीठिया की परिभाषा अधिक अर्थवान हो गयी है –

"सफल गुण्डे लीडर होते हैं, असफल लीडर गुण्डे कहलाते हैं।"

मजीठिया भारतीय पराभव का कारण नेता को मानते हैं इसलिए वे कहते हैं "नेता ही सारी समस्याओं की जड़ है। जिसका निराकरण 'एक नेता की मौत' है। यदि भारत को भावात्मक और राष्ट्रीय एकता का विकास करना है, प्रगति करना है तो भारत के समस्त नेताओं का एक्सपोर्ट कर दिया जाये"[१]

राजतन्त्रातात्मक प्रणाली हो अथवा प्रजातन्त्र, राजा हो या शासक अथवा मुख्यमंत्री सभी का शासन शक्ति के बल पर चलता है इसे मजीठिया ने 'मुख्यमंत्री का डण्डा' में चित्रित किया है। जहाँ डण्डा चोरी होने से मुख्यमंत्री का भव्य व्यक्तित्व ही समाप्त हो जाता है।

'गरीबी हटाओ' नारे की तात्विक-विवेचना सा प्रस्तुत करते हुए वे लिखते हैं "सरकार गरीबी मिटाने की नहीं हटाने की बात करती है वह आपकी गरीबी हटाकर दूसरे को दे देगी गरीबी हटाने के लिए ही हर वस्तु की कीमत ऊपर जा रही है। कीमतों के ऊपर जाने से गरीब आटोमैटिक आत्महत्या कर लेंगे अतएव गरीबों के मरते ही गरीबी भी मिट जायेगी"[२] इस प्रकार सरकार गरीबी को आसानी से भारत से निकालने में सक्षम हो जायेगी।"

'कुँआ डूब गया' में भ्रष्टाचार की पोल खोली गयी है यहाँ कुआँ कागजों पर ही खुदता

---

१. सुदर्शन मजीठिया – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं, नलघट पर ९०

२. सुदर्शन मजीठिया – मुख्यमंत्री का डण्डा, पृष्ठ ६५

है, डूबता है। 'राय बहादुर का चमत्कार' में पुलिस व्यवस्था की कार्यवाही पर सवालिया निशान उठता है। 'सर्टिफिकेट फाड़ो आन्दोलन', 'गाइड विश्वविद्यालय' रचनाएं शिक्षा जगत की विसंगतियें पर प्रकाश डालती हैं तो 'सास-बहू प्राइवेट लिमटेड' सास-बहू के सम्बन्धों की पड़ताल करती है।

समाज की विसंगतियां मजबूरी में आदमी स्वीकार करता चला जाता है। आदमी का यही स्वीकार्य विसंगतियों का प्रेरक सिद्ध होता और उसकी भर्त्सना उसके पतन का कारण मजीठिया विसंगतियो की भर्त्सजना करते हैं।

डा. बालेन्दु शेखर तिवारी उनके व्यंग्य के विषय में लिखते हैं कि "डॉ. मजीठिया का व्यंग्य शिक्षा और संस्कृति, समाज और राजनीति के क्षेत्र में फैली अराजकता का उद्‌घाटन करता है।

मजीठिया का व्यंग्य माँ का हृदय धारण किये हैं जो स्नेह भी करता है और गलती पर पीटता भी है।

शिल्प

इनकी रचनाओं में काव्य-पंक्तियां, शेर-शायरी, वाक्य-प्रचार, मुहाविरा आदि का प्रयोग बहुतायत हुआ है।

संवाद और प्रश्न शैली में भी इनके व्यंग्य हाल के वर्षों में प्रकाश में आये हैं।

व्यंग्य-विचार

अपनी विभिन्न रचनाओं में यथा- 'इंडीकेट बनाम सिंडीकेट', 'मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं', 'पब्लिक सेक्टर का सॉण्ड' आदि में व्यंग्य कर्म को लेकर मन की बात कही है वे कहते हैं "हर हँसी के पीछे दुःख और पीड़ा के आँसू होते हैं।"[२] यदि शहर में जितने ज्यादा डाक्टर

---

१. बालेन्दु शेखर तिवारी – हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान

२. सुदर्शन मजीठिया – पब्लिक सेक्टर के सांड, पृष्ठ ७८

हों मतलब उतने ही अनुपात में रोगियों की संख्या भी बढ़ रही है यदि व्यंग्यकारों की संख्या बढ़ रही है तो समाज अपने गिरेबाँ में झाँक कर क्यों नहीं देखता।"[१] समाज की बुराइयों को उभार कर, मनुष्य को प्रेरित कर व्यंग्य एक स्थान पर दोनों ला खड़ा कर देता है जिससे मनुष्य दुश्मन को देखकर तिलमिला उठता है और उसको समाप्त करने का प्रयास करने लगता है।

'मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं' की भूमिका में व्यंग्य के सन्दर्भ में सुदर्शन मजीठिया कहते हैं– "व्यंग्य के वर्फ की ठण्ड, उस गर्मी के समान है, जिसके अन्दर हास्य के माध्यम से त्रासदी, करुणा तथा दर्द छिपा है।"

के. पी. सक्सेना

लखनवी अन्दाज में व्यंग्य परोसने वाले, सौम्य व्यंग्यकार के. पी. सक्सेना का व्यंग्य हास्य तिक्त है। डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी ने के. पी. सक्सेना के व्यंग्य विषय में लिखा है कि – "उनका व्यंग्य लेखन हास्य की फआरों से भीगता हुआ विकसित हुआ हैं और अपने आस-पास की विसंगतियों पर हँसते हुए प्रहार करता है।"[२]

के. पी. सक्सेना की प्रमुख रचनाएं इस प्रकार हैं –

१. नया गिरगिट – १९७५
२. कोई पत्थर से बात – १९७८
३. मूँछ-मूँछ की बात – १९८०
४. रहिमन की रेलयात्रा – १९८३
५. रमइया तोर लुल्हन लुटे बाजार – १९८३
६. लखनवी ढंग से – १९८३

---

१. सुदर्शन मजीठिया – इन्डीकेट बनाम सिंडीकेट, अपनी बात
२. बालेन्दु शेखर तिवारी – हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान, पृष्ठ २९

७. बाजू बन्द खुल-खुल जाय – १९८५

८. तलाश फिर कोलम्बस की – १९८६

९. खुदा खुद परेशान है – १९८८

इनका 'तरकश' नाम से कालम भी निकलता है।

के. पी. सक्सेना का व्यंग्य क्रिकेट, सिनेमा, तस्करी, विदेशी मानसिकता और बदले जीवन मूल्यों से उत्पन्न विसंगतियों आदि के दर्शन कराता है।

के. पी. सक्सेना ने समाज के हर वर्ग को अपने ढंग से उधाड़ा है। कहीं-कहीं परत दर परत उधाड़ा, तो कहीं एकाध परत।

देश की वर्तमान व्यवस्था में नेताओं का आश्रयाश्रम है सरकारी व्यवस्था जहाँ सफेद हाथी पलते हैं जो देश की सेवा करते समय और अधिक मोटे होते जाते हैं –

भ्रष्टाचारी नेता पार्टी से मंत्री, मंत्री से राज्यपाल का पद ग्रहण करता जाता है। केवल स्थान परिवर्तन से वह सच्चरित्र हो जाता है। इस बात को के. पी. सक्सेना इस प्रकार कहते हैं–

नेता चीफ मिनिस्ट्री से इस्तीफा देकर, राज्यपाली पकड़ लेता है, कैबिनेट से हटने पर पार्टी पदों पर आ जाता है।"[१]

के. पी. सक्सेना उसे सच्चा नेता मानते हैं जो अपनी कुर्सी बचाये रहता है राज्य तो खाला जी का घर है।

संगीत सभाओं, सांस्कृतिक कार्यक्रमों आदि में अधिकारियों की पत्नियां 'शो पीस' के रुप में अग्रिम पंक्ति में बैठी रहती है इसको लक्ष्य करके के. पी. सक्सेना लिखते हैं "मैंने कई भैंसों की संगीत सभाओं में, मुँह में चुईगम डाले पगुराते ही देखा है चाहे पूरबी बजे या भैरो, एकदम

---

१. धर्म युग – २० अप्रैल १९८६, ५२

निर्विकार स्वेटर बुन रही है, पुगरा रही है स्ट्रेटस की भारी संगीत सभाओं में जाना उनकी सांस्कृतिक मजबूरी है।"[१]

क्रिकेट की दीवानगी, खिलाड़ियों के प्रदर्शन, दर्शकों का व्यवहार, मैच का ड्रा होना आदि विषय को लेकर लेखक ने खूब चुटीले व्यंग्य किये हैं।

फिल्मी शौक और कॉमिक्स पढ़ने की लत को लेकर के. पी. सक्सेना ने 'बम्बई से लौटे चूजे' काश मनोरंजन कर लिया होता' 'कस्बा और फिल्म लेन' 'कामिक्स' आदि में व्यंग्य धारा को उसी प्रकार से छोड़ा जैसे शिव ने गंगा की धारा को अपनी जटा से छोड़ा था।

'पक्की और मजबूत पढ़ाई के दिन' रचना में के. पी. सक्सेना ने किताबों के बोझ को लेकर व्यंग्य किया है। वे लिखते हैं कि "दो पतली-पतली किताबों पर कहीं बच्चा जीनियस बनता है ? राम भजिए। आज का बच्चा जीनियस है क्योंकि कमर पर पूरी नेशनल लाइब्रेरी का बोझ उठाये, सिर झुकाये सुकरात जैसा चुपचाप स्कूल चला जा रहा है। .... जो कंधे बचपन में वस्ते का बोझ न उठा सकेंगे वे देश का बोझ क्या खाक उठायेंगे।"[२]

शिल्प

के. पी. सक्सेना का व्यंग्य लखनवी अंदाज की अदा लिए होता है जो सौम्य व्यक्तित्व के साथ अपने को प्रकट करता है–

"वे इस कदर बाल की बाल थे कि चेहरा नहीं नजर आ रहा था".....

"कनपटी के सफेद बालों ने अगर सहारा न दिया होता तो पहली ही नजर में उसके इश्क ने मुझे डुबो ही दिया होता"[३]

---

१. धर्म युग – २९ जून १९८६

२. धर्म युग – १ सितम्बर १९८५, पृष्ठ ३०

३. के. पी. सक्सेना – मूँह की बात, पृष्ठ २१

उपमाओं की सुन्दर योजना के. पी. सक्सेना की रचनाओं में मिलती है।

"जिस तरह पुराना जूता कुछ ज्यादा पॉलिश खाता है उसी तरह मुन्ना की अम्मा ने सिंगार पिटार खूब चुपड़ा।"

"वह कुल मिलाकर कमर से जितेन्द्र, बाडी से प्रेमनाथ और शक्ल से पेंटल नजर आता था।"

के. पी. सक्सेना का व्यंग्य हास्य से भीगा अवश्य है लेकिन तेवर को छोड़ा नहीं है जब कभी के. पी. सक्सेना पत्रकारिता से निकलकर लेखन कार्य करते हैं तो व्यंग्य के तेवर तेज हो जाते हैं।

रामनारायण उपाध्याय

समाज की सुन्न पड़ गयी शरीर को जगाने के लिए राम नारायण उपाध्याय ने व्यंग्य लेखन किया है। इनका व्यंगय गाँधी के असहयोग आन्दोलन की भाँति है जो बुराई का विरोध संयत ढंग से करता है।

अपने संयत और लघु संवादों द्वारा रामनारायण उपाध्याय ने अच्छा व्यंग्य किया है। व्यवस्था की सच्चाई को उभारता इनका यह लघु व्यंग्य है –

"शेर ने बकरी से पूँछा – क्यों री बकरी, माँस खायेगी ?

बकरी ने कहा – मेरा ही बच जाये, तो बहुत है।

पुलिस और थाने के दलालों के बीच की सांठ-गाँठ को रेखांकित करते हुए वे लिखते हैं – "एक व्यक्ति ने थानेदार साहब से कहा, हुजूर आज तो एक-दो चालान कर ही लीजिए। पूरा-पूरा एक महीना बीत गया अभी तक आप ने एक भी चालान नहीं किया है। ऐसे में दोनों

---

१. श्याम सुन्दर घोष – व्यंग्य क्या, व्यंग्य क्यों, पृष्ठ ६८

फंसेंगे और सरकार को हमारी मिली भगत पर शक भी हो सकता है।"[१]

जिस कुर्सी की हम रोटी खाते हैं उसकी कसम तो न खाया करो। नहीं तो कुर्सी हमें खा जायेगी"[२] उद्धरण में ऐसे नेताओं के ऊपर व्यंग्य किया गया है तो जनसेवा नहीं बल्कि इसे उपजीविका का साधन मान बैठे हैं।

इसी प्रकार पुलिस का जन्म सुरक्षा के लिए हुआ था लेकिन वर्तमान में वह समाज में भय उत्पन्न कर रही है इसे लेकर उन्होंने 'सेवकनामा' शीर्षक से व्यंग्य लिखा है।

इस प्रकार रामनारायण उपाध्याय का व्यंग्य, चुटकी-काट कर रोने को बाध्य करता है।

अजात शत्रु

परसाई सी भाव-भंगिमा लिए अजात शत्रु का व्यंग्य उन्हीं की तरह आक्रोश को व्यंग्य करता है अभी तक उनकी एक मात्र रचना 'आधी वैतरणी' (१९८५) ही प्रकाशित हो सकी है। उनका अधिकांश व्यंग्य पत्र-पत्रिकाओं में ही विखरा पड़ा है।

डॉ. शंकर पुणताम्बेकर अजात शत्रु को 'परसाई जैसा धारदार व्यंग्य देने वाला एक मात्र समर्थ व्यंग्यकार' कहा है तो डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी उनके व्यंग्य स्वरुप को समायित करते हुए कहते हैं "अजात शत्रु की भाषा वस्तु चयन और सम्प्रेषण सब कुछ उत्तेजनात्मक है इसी कारण इनका व्यंग्य गंभीर बना है।"

समाज की सभी विरुपताएं अजात शत्रु की व्यंग्य विषय बनी है। पूँजीवाद, सरकार, कानून, पुलिस, नेता सभी को उन्होंने व्यंग्य दरबार में बुलाकर खूब डॉट पिलायी है।

---

१. रामनारायण उपाध्याय – मुस्कराती फाइलें, पृष्ठ १५

२. प्रा. रा. वा. पाटील – एक व्यंग्य यात्रा, पृष्ठ ६८

३. डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी – हिन्दी के व्यंग्य के प्रतिमान, पृष्ठ ३७

कानून का कार्य है व्यवस्था को सही ढंग से चलने में सहायता करना, लेकिन ठीक इसके विपरीत कानून अव्यवस्था फैलाने को वाध्य करता है इसी बात को लक्ष्य करके उन्होंने लिखा है –

"अगर मैं हफ्ता न दूँ तो ?

फिर कानून किस लिए है ? यहीं पर तो हम कानून का सहारा लेते हैं।"[१]

सभी अपने–अपने स्थान पर यथासम्भव भ्रष्टाचार को बढ़ावा देकर सन्तुष्ट है। क्योंकि उन्हें आभास होता है कि उन्होंने कुछ समाज के लिए सार्थक कार्य किया। समाज में रहकर केवल खाना और सोना। समाज के प्रतिष्ठित संस्थानों में अपना सहयोग देना आज के समय में निठल्लापन है। इस विषय को लेकर अजात शत्रु ने कई स्थनों पर भौहें तानी है।

एक फूड इंस्पेक्टर की ईमानदारी का बयान करते हुए लिखते हैं

"इस सदी में अगर किसी को निखालिस दूध मिलता था तो उसे ही क्यों कि वह शहर के होटलों में दूध चेक करता था उसके बच्चे भी मोटे ताजे थे और उसकी बीबी गहनों से लदी रहती थी। वह स्वयं घी का व्यापारी नहीं था पर उसके घर में घी के कनस्तर रखे रहते थे।"[२]

गरीब की परिभाषा को रेखांकित करते हुए अजात शत्रु लिखते हैं "गरीब वह नहीं है जो गरीब है, गरीब वह जिसके पास गरीबी का प्रमाण पत्र है। शासकीय शब्दकोश में सच वही होता है जो राजपत्रित शासकीय अधिकारी अपने दस्तखत तथा मुद्रा के अन्तर्गत लिख दें। इसके लिए लोगों को पैसा देना होता है और जो वास्तव में गरीबी के कारण पैसा नहीं दे पाता। वह सरकारी दृष्टि से गरीब नहीं माना जाता।"[३]

---

१. आजत शत्रु – आधी वैतरणी, पृष्ठ ३३

२. आजत शत्रु – आधी वैतरणी, पृष्ठ ३३

३. काका हाथरसी एवं गिरिराज शरण – श्रेष्ठ हास्य व्यंग्य कहानियां

अजात शत्रु का व्यंग्य अन्यों से इस बात में अलग है कि वे भ्रष्टाचार के विरोध में खड़े हैं, जहाँ कहीं भी उन्हें भ्रष्ट आचरण दिखलायी पड़ता है वे संघर्ष के लिए तनकर खड़े हो जाते हैं, उसे ललकारते हैं जिससे उनकी भाषा आक्रोशयुक्त हो जाती है। अन्य व्यंग्यकार भ्रष्ट आचरण को देख केवल बुद-बुदाकर आगे निकल जाते हैं।

लक्ष्मीकान्त वैष्णव

लक्ष्मीकान्त वैष्णव समाज की विदूपताओं की देख शिव का रौद्र रुप धारण कर लेते हैं। वे अपनी बात कहने के लिए किसी माध्यम यथा – फैंटेसी, प्रतीक, बदहवासी आदि की पूँछ नहीं पकड़ते हैं, बल्कि सीधे शब्दों में, सीधे अन्दाज में व्यंग्य कसने लगते हैं।

जीवन की विसंगतियां, परेशानियां इस व्यंग्यकार के पास इतनी अधिक थी कि अन्ततः इसे मई १९८९ में आत्महत्या करनी पड़ी।

पीड़ा को निकालने के लिए इसने व्यंग्य को माध्यम चुना। जीवन की सभी स्थितियों में उभरने वाली विदूषताओं को इन्होंने व्यंग्य द्वारा सार्थक प्रहार किया।

शिक्षा जगत की विसंगतियां को जिससे छात्रों के बीच बढ़ती अनुशासनहीनता मुख्य विषय है, को लेकर इन्होंने लिखा है। अपनी रचना 'अश्वमेघ', 'तीन अदद मास्टर, तीन अदद झलकियाँ', 'खुलना कालेज का' में इन्होंने बेवजह के प्रतिदिन होने वाले छात्र आन्दोलनों, नकल करने और नम्बर बढ़वाने के लिए अध्यापकों की पिटाई करने तथा दिखावे के लिए इन्टरव्यू कार्यक्रम आयोजित करने, को विषय बनाकर व्यंग्य किया है।

'पुलिस लीला' नुक्कड़ नाटक में पुलिस आक्रान्त को व्यंग्य का विषय बनाया गया है।

शिल्प

कथा, नाटक, चम्पू, रेखाचित्र आदि के अलावा इन्होंने निबन्ध और कहानी के द्वारा भी व्यंग्य किया है।

इनके व्यंग्य की सबसे बड़ी विशेषता नाटकीयता है जिससे संवादों द्वारा ही विसंगति को उभारा गया है।

(मास्टर और नकल करती छात्रा के बीच बातचीत)

– यह क्या है देवि !

– यह चाक् है तात् !

– और यह क्या है देवि !

– यह पुस्तक है गुरुदेव !

– इन दोनों का यहाँ क्या कार्य !

– पारस्परिक सम्बन्ध है आर्य। चाक् पुस्तक के कारण है पुस्तक चाक् के कारण है।

व्यंग्य के सन्दर्भ में अति संक्षिप्त ढंग से उन्होंने अपने विचार व्यक्त किया है– व्यंग्य किसे कहेंगे जो पत्रिका के कालम में हजार-बारह सौ शब्दों में छपा होता है।

मधु सूदन पाटिल

मधु सूदन उन व्यंग्यकारों का प्रतिनिधित्व करते हैं जो उभरते व्यंग्यकारों के अन्तर्गत सम्मिलित है। १९८९ से थे एक त्रैमासिक 'व्यंग्य-विविधा' का सम्पादन कर रहे हैं।

राजनीति की प्रवृत्ति पर मधुसूदन पाटिल लिखते हैं। जो फूट डालो और राजकरों को लेकर आगे बढ़ रही है–

"बबूल के बीज बोए तो रसाल की आशा कैसे की जा सकती है। फूट के बीज बोकर एकता की फसल खड़ा करने का आडम्बर राजनीति ही कर सकती है।"[१]

चुगलखोर की मनोदशा का चित्रण करते हुए वे लिखते हैं कि "चुगलखोर बिल्ली है सामने चाटती है, पीछे खसोटती है। अधिकारी के आगे मिमियाती है अधीनस्थ के आगे गुर्राती है।

१. मधुसूदन – अथ व्यंग्यम्, पृष्ठ ७

अँधेरे में मुँह पर मलाई चुपड़ती है, उजाले में भीगते हुए भागती है नौ सौ चूहे खाती है फिर हज जाने की घोषणा करती है।"[१]

समाज में नेताओं की स्थिति और उनकी दादागिरी को लेकर उन्होंने 'हम सब एक हैं' की रचना की है। इसमें इन्होंने दिखलाया है कि किस प्रकार प्रचार और नारे के बीच वर्चस्व उन नेताओं का ही किसी वस्तु पर है। कहने को तो प्रजातन्त्र है लेकिन वास्तव में काम 'डण्डा तन्त्र' द्वारा चलाया जाता है।

"हमारा लोकतन्त्र हमें यही सिखाता है कि बकरी और शेर एक घाट पर पानी पीये, लेकिन घाट शेरों का ही रहेगा।"

शिल्प

मधुसूदन पाटिल की शैली विश्लेषण के करीब निबन्धात्मक है – एक उदाहरण देखिए–

"स्कूल आते समय सुभाषचन्द्र बोस की चाल में, शाम को छुट्टी के समय महात्मा गाँधी बनी मास्टरनियां।"

"बस में एक–एक पायदान चढ़ने के लिए बिनाका गीतमाला से कहीं ज्यादा संघर्ष करना पड़ता है।"[३]

वम्बइया तरीके से हिन्दी बोलने के प्रयोग को इन्होंने अपने व्यंग्य में स्थान दिया है–

"अपने फिकर नाट सर"[४]

मधुसूदन पाटिल के अनुसार व्यंघ्य मानवता और राष्ट्रीयता के प्रति आस्था का द्योतक

---

१. हरिगंधा – जुलाई-अगस्त १९८८,

२. मधुसूदन पाटील – हम सब एक हैं, पृष्ठ ८०

३. हरिगंधा – जुलाई अगस्त १९८८, पृष्ठ ३६

४. मधुसूदन – 'हम सब एक हैं' पृष्ठ ८०

है– यह क्रोध का अहिंसक रुप हैं।

मधुसूदन पाटिल का व्यंग्य स्थितियों को समझता है यह सोचने को विवश करता है, लड़ने को प्रेरित नहीं करता।

संतोष खरे

संतोष खरे वकालत के साथ, लेखन का कार्य भी कर रहे हैं। इनकी रचनाएं पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। केवल इनकी दो रचनाएँ पुस्तक के रूप में उपलब्ध है– 'धूप का चश्मा', 'सरकारी दफ्तरी में कबीर'।

दहेज को लेकर उन्होंने लिखा है "आज हर जगह शादी व्याह के लिए रिश्ते में मोल किया जाता है। भाव न तय होने पर लड़की 'मंगली' करार दिया जाती है। लेकिन दहेज मिलते ही लड़की का मंगलीपन दूर हो जाता है।"

'पति-पत्नी की निरीहिता' को इन्होंने त्रासदी रुप में स्वीकार किया है जो लगातार बिछुड़ रहे हैं।

लेखक, प्रोफेसर से एक क्लर्क आज अधिक खुश है इस बात को लक्ष्य करके उन्होंने धूप का चश्मा में लिखा है कि "मुझे हर्ष है कि मैं अंग्रेजी द्वारा निर्धारित की गयी शिक्षा-प्रणाली का सही प्रतिफल हूँ। और मुहल्ले में प्रोफेसर या लेखक से ज्यादा इज्जत है कारण कि कोटे के अतिरिक्त, गल्ला-शक्कर की अतिरिक्त व्यवस्था कर लेता हूँ।"[३]

संतोष खरे का व्यंग्य कंमेटरी शैली में होता है इसके दर्शन उनकी रचनाओं 'आम के आम गुठलियों के दाम' तथा 'आधुनिक नायिका का नख-शिख वर्णन' में होते हैं।

---

१. मधुसूदन पाटील – अथ व्यंग्यम्, पृष्ठ १५

२. मधुसूदन पाटील – हम सब एक हैं, मंगल चरण

३. संतोष खरे – धूप का चश्मा, पृष्ठ ८३

डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी ने इनके व्यंग्य कर्म के विषय में कहा है "संतोष खरे ने अपने व्यंग्यों द्वारा जीवन की कटुता का उद्घाटन मृदुल तरीकों से किया है।"[१]

यशवन्त कोठारी

समाज की विसंगतियों, विद्रूपताओं को देखकर हृदय में उठी पीड़ा व्यंग्यकार की वाणी बनकर 'व्यंग्य' के रूप हमारे सामने आती है। यशवन्त कोठारी का व्यंग्य वह कुत्ता है जो काट खाने की तैयारी करता दिखता है।

सूत्र शैली में यशवन्त कोठारी का व्यंग्य है

संस्था शरणम् गच्छामि।
कलक्टर शरणम् गच्छामि।
नेता शरणम् गच्छामि।

टीका – बाढ़ के समय लोगों को स्वयं सेवी, संस्थाओं, जिलाधीशों तथा नेताओं की शरण में जाना चाहिए।

व्यर्थ शंका – बाढ़ में जिलाधीश और नेताओं की शरण में क्यों जाना पड़ता है।"

निवारण – बाढ़ पीड़ित का प्रमाण-पत्र प्राप्त करने के लिए जिलाधीश व नेताओं की मदद आवश्यक है और असली बाढ़ पीड़ित तो बेचारा यह प्रमाण पत्र प्राप्त भी नहीं करना चाहता।"[२]

बाढ़ में जहाँ जनता को परेशानी है वहीं बड़े लोग और उनके परिवार पिकनिक स्पाट समझकर घूमने आती है – एक सीन

---

१. संतोष खरे – धूप का चश्मा, पृष्ठ ८३
२. रंग चक्कर मरन – ४४
३. यशवन्त कोठारी – यश का शिंकजा, पृष्ठ १०१

अफसर की पत्नी अपनी कॉन्वेन्ट में पढ़ी लड़की से कहती है, यू सी बेबी इट इज फ्लड।

बेबी का उत्तर– मम्मी। आऊ लबली। रियली फनी मम्मी ऐसी खूबसूरत बाढ़ हमेशा क्यों नहीं आती ? आओ आज पिकनिक मनाएं।[१]

राजनीतिक चलवाजियों को विषय बनाकर 'संसद का आँखों देखा हाल' तथा 'यश का शिकंजा' रचनाएं की है।

परिभाषिक शैली में भी इन्होंने व्यंग्य लिखा है।

साहित्य – जो पढ़ा न जाये वो साहित्य है, और जो पढ़कर समझ में न आये वह सत्साहित्य है। वैसे जो थोड़ा बहुत भी समझ में आये वह घटिया साहित्य है।

बजट पूर्व कीरातों में चोर, उचक्के, गुण्डे, धूम्रपान करने वाले बैठकर सरकार को कोसते "यार ये सरकार हम गरीबों की रोजी-रोटी क्यों छीन रही है।"[२]

यशवन्त कोठारी का व्यंग्य बच्चे और और दादा-नानी की हँसी ठिठोली है जो मूँछे उखाड़ता है लेकिन हँस-हँस करके।

श्याम गोइन्का

श्याम गोइन्का आधुनिक चर्चित व्यंग्यकारों में एक है। इनका पहला व्यंग्य संकलन (१९७९) में, दूसरा गंजत्व दर्शन (१९८९) में प्रकाशित हुआ।

अपने व्यंग्य लेखन को 'सौ फीसदी धरती की' बातें बताने वाले गोइन्का ने समाज के सभी क्षेत्रों से व्यंग्य विषय को चुना है।

किसी भी मुकदमें में वादी और प्रतिवादी का तो दीवाला पिट जाता है लेकिन वकील

---

१. यशवन्त कोठारी – यश का शिंकजा, फ्लैप

२. यशवन्त कोठारी – यश का शिंकजा, पृष्ठ १७०

मालोमाल हो जाता है।

"मुकदमें रुपी मुकाबले में फतह मुदई की हो या मुदाहिल की दिवाला दोनों का पिटता है, वकील की तो हर हालात में दिवाली ही दिवाली है।[१]

डॉ. और डाकू की तुलना करते हुए लेखक लिखता है कि "डाक्टर को संक्षेप में डॉ. लिखा जाता है जो डाकू का भी संक्षेप है डाक्टर भी डाकू जैसा व्यवहार करता है डाकू चाकू से जान लेता है और डाक्टर भी"[२]

'दूल्हे का सौदागर' में उन्होंने दहेज प्रथा के प्रचलन को दिखलाया है जहाँ लड़के के परिवार वाले दूल्हे को बेचेते हैं "दूल्हे ले लो-दूल्हे। बीस हजारी। तीस हजारी। अधलखिया लेलो नये नवेले ले लो। किस्म-किस्म के दूल्हे ले लो। दूल्हे ...।"[३]

'साहिबी की खूब बाढ़' में आजादी बाद की स्थितियों को चित्रित किया गया है। साहब हर तरफ से फायदा ही फायदा जाता है, पुरस्कार, उपहार, चोरी, सभी से वह कमा रहा है।

परनिन्दा से ऊर्जा प्राप्त होती है जो जीने के लिए आवश्यक है इसको लेकर उन्होंने लिखा है कि "आदमी भोजन के बिना दो माह पानी के बिना दस दिन निकाल सकता है लेकिन परनिन्दा और आलोचना के बिना एक दिन भी निकालना मुश्किल है।"[४]

इनके उपमान, मुहाविरें, कहावतें व्यंग्य सूक्तियां बनकर गहरे चोट पहुँचाती है।

"चट नालिस पट तलाक"

"सीधे खाते से घी नहीं निकलता है"

"बिना रोये वोटर वोट नहीं देता है।"

---

१. श्याम गोइन्का – गंजत्व दर्शन, पृष्ठ ९

२. श्याम गोइन्का – गंजत्व दर्शन, पृष्ठ ३७

३. श्याम गोइन्का – नसबन्दी, पृष्ठ १०७

४. श्याम गोइन्का – नसबन्दी, पृष्ठ ३९

सूक्तियां – "यह भी भला कोई घास में सूई या नेता में चरित्र ढूंढ़ने वाल बात है।"

"सौ-सौ जुल्मों के बलबूते पर पुलिस का कैरियर बनता है।"

श्याम प्रसाद गोइन्का का व्यंग्य खुली धूप है जहाँ सब कुछ स्पष्ट दिखलायी पड़ता है।

अशोक शुक्ल

परसाई, अजातशत्रु के समानधर्मा अशोक शुक्ल का व्यंग्य की अधिक आक्रामक है इनकी रचनाएं पत्र-पत्रिकाओं में इधर-उधर बिखरी पड़ी है 'प्रोफेसर पुराण' और 'हड़ताल हरिकथा' इनके उपन्यास है जहाँ इन्होंने शिक्षा जगत की विसंगतियों को उजागर किया है। इनका एक मात्र संकलन 'मेरा पैतीसवां जन्म दिन' है।

अशोक शुक्ल का व्यंग्य सहलाता नहीं है, कोड़े लगाता है यह वह निर्दयी पिता है जो लगातार फटकार देता है।

ज्ञान चतुर्वेदी

ज्ञान चतुर्वेदी ऐसे रचनाकार है जो सूक्ष्म अन्तर दृष्टि से, नीर-क्षीर विवेक शैली में, समाज की विसंगतियों को अपनी संवेदना से निकाल ले आते हैं। शिक्षा, साहित्य, राजनीति, समाज, अर्थनीति आदि सभी पर इनका व्यंग्य चोट करता चलता है।

गाँवों की परम्परागत प्रचलित शिक्षा पद्धति को लक्ष्य करके ज्ञान चतुर्वेदी जी लिखते हैं

"गाँव में शिक्षा का माध्यम हिन्दी तथा डण्डा था। शिक्षक हिन्दी की गालियां देते तथा डंडे चमकाते स्कूल के इस कमरे से उस कमरे में शिक्षा बाँटते फिरते।"[१]

'गरीबी हटाओ' नारे को लेकर लेखक व्यंग्य करता है भारत में २४०० कैलोरी प्रति व्यक्ति उर्जा से कम पाने वाले को गरीबी रेखा के नीचे रखा जाता है। साहब लोग गरीबी को कैसे

---

१. धर्मयुग – १४ जुलाई, १९८५

मिटा रहे हैं।"

"साहब को आते देख किसान अपने हाथ की रोटी छुपा लेता है। यह देख साहब ने घुड़ककर कहा क्या खा रहा है, पीछे क्या छिपा रहा है।"

"कुछ नहीं साहब जवार की रोटी है।"

"कितनी कैलोरी खा गया रे"

"कैसी कैलोरी – अन्नदाता"

× × ×

"बातें मत बना, कुर्की हो जायेगी, चुपचाप कबूलकर ले कि २४०० कैलोरी खाता हूँ...... खाता है कि नहीं।"

"हाँ साहब खाता हूँ, खाता हूँ"

"शावशः – हाँ भई लिखो इनका नाम जटाशंकर, गरीबी रेखा से ऊपर"

कथोपकथन द्वारा व्यंग्य प्रकट करने की विशिष्ट शैली ज्ञान चतुर्वेदी की पहचान है। जहाँ विसंगतियां स्वतः स्पष्ट हो जाता है।

सूर्य बाला

'सूर्य बाला' का व्यंग्य सोफे पर बैठ कर की गयी गप्पबाजी सा लगता है जहाँ मनोरंजन और निन्दा करने के लिए किसी एक विषय को उठाकर उसमें प्रसंग–दर प्रसंग जोड़े जाते हैं। इनके व्यंग्य का विषय कुत्ता, सोफा, सलवार, शाल है जहाँ ये चुस्त और सधी भाषा में अभिव्यक्ति देती हैं।

'सोफानामा' में बुर्जुगों को लेकर व्यंग्य कसा गया है जो नई चीज को गन्दी होने, जल्दी टूटने के डर से छूने नहीं देते। 'आत्मकथा हिन्दी फिल्म के पिताओं' में उस दयनीय स्थिति का वर्णन किया गया जहाँ पिता की मृत्यु किसी दीर्घकालीन बीमारी से हो जाती है। 'काटना

पागल कुत्ते का उर्फ देखना कला फिल्म का' में गाँव की अनर्गल और अश्लील दृश्यों का छायांकन करने की प्रवृत्ति पर व्यंग्य मिलता है। इसी प्रकार 'बन गयी मेरे उपन्यास पर एकअदद कला फिल्म' में मूलकथा के साथ की गयी छेड़छाड़ का वर्णन है। तो 'तुलना कलियुगी और सतयुगी वोटरों' की रचना में भगवान को उलझते हुए दिखलाने का प्रयास किया गया है।

सूर्यबाला के व्यंग्य तेवर प्रेमी का सा तेवर लिये हैं जो प्रिय से इसलिए नाराज होना चाहता है क्योंकि उसे खुश करना चाहता है।

घनश्याम दास अग्रवाल

कवि, कथाकार, व्यंग्य लेखक के रुप में प्रसिद्ध घनश्याम दास अग्रवाल नयी पीढ़ी के सशक्त व्यंग्यकारों में शामिल है।

इन्होंने अपनी महत्वपूर्ण रचना 'क्रिकेट इज इण्डिया, इण्डिया इज क्रिकेट' में क्रिकेट की दीवानगी को दिखलाया है। जहाँ सभी लोग सारे काम छोड़कर जीतने हारने की सारी परिस्थितियों का विश्लेषण करते रहते हैं। इन्हें भोजन की चिन्ता नहीं रहती है लेकिन रनों का ग्राफ इण्डिया का बढ़ रहा है कि नहीं इसके लिए वे व्याकुल रहते हैं।

'ईमानदार की खोज' में इन्होंने कम ईमानदार व्यक्ति को ईमानदार घोषित किया है। इनकी लघु व्यंग्य कथाएं इस प्रकार हैं – 'आजादी की दम', 'निष्कर्ष', 'गवाही', 'पुल की ईमानदारी', 'शाहजहाँ के बाद', 'मजबूती का रहस्य' आदि।

मनोहर श्याम जोशी

हिन्दी गद्य 'व्यंग्यकारों' में मनोहर श्याम जोशी अपनी किस्सागोई प्रवृत्ति के कारण काफी प्रचलित रहे हैं। विज्ञान के विद्यार्थी मनोहर श्याम जोशी लखनवी अन्दाज को ओढ़े हुए भी करारा व्यंग्य करने में सक्षम हैं। 'कसप' (१९९५), 'नेता जी कहिन' (१९८२), 'कुरु–कुरु स्वाहा' (१९८०) और व्यंग्य संकलन 'उस देश का यारों क्या कहना' (२००१) उनकी रचनाएं हैं।

इसके अलावा विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में भी ये लेखन कार्य करते हैं। टी. वी. सीरियलों और फिल्मों के लिए भी इन्होंने लेखन कार्य किया है।

इनके व्यंग्य संकलन 'उस देश का यारों क्या कहना' में विविध विषयों से सम्बन्धित व्यंग्य रचनाएं हैं जिससे समाज, राजनीति, पत्रकारिता, शिक्षा, साहित्य, घोटाला, धर्म, क्रिकेट, नौकरशाही, वोट, चुनाव, प्रजातन्त्र आदि है।

राजनीतिक नेताओं की भ्रष्टाचारिता पर उनका एक छोटा सा उद्धरण ही काफी बड़ा व्यंग्य करता है जहाँ सरकारी खजाने से उनकी समाधि बनती है।

"जो तीन पीढ़ियों के लिए पैसा छोड़ सकता है वह अपने अन्तिम संस्कार के लिए भी पैसा छोड़ सकता है, जय भारत, जय भ्रष्टाचार"[१]

तमाम प्रयासों के बाद भी भारत की समस्याएं कम नहीं हो रही हैं। १०वीं पंचवर्षीय योजना आ गयी लेकिन अभी भी भारत सभी क्षेत्रों में पिछड़ा है इसे लेकर लेखक व्यंग्य करता है।

"परमात्मा हमारे देश की पवित्र छवि को बनाए रखने के लिए इतना चिन्तित है कि उसने देश माता को एक अद्‌भुत वरदान दे डाला है। चाहे विकास के कितने भी पंचवर्षीय आयोजन पूरे हो जाये, चाहे तेरे कितने भी बेटों के लिए कितना भी आरक्षण कर दिया जाये, चाहे तेरे कितने भी बेटे शहरों को चले जायें, तू जहाँ है वहीं रहेगी, पवित्र धूल से धूसरित गाँव में।"[२]

मनोहर श्याम जोशी शिल्प के स्तर पर किस्सागोई अपनाते हैं – संस्कृति, अंग्रेजी और हिन्दी की कविताओं का उद्धरण भी ये खूब देते हैं।

इनका व्यंग्य चटखारे लेता, देसीपन के साथ फटकार लगाता ग्रामीण बुजुर्ग सा है।

---

१. मनोहर श्याम जोशी – उस देश का यारों क्या कहना, पृष्ठ २४०
२. मनोहर श्याम जोशी – उस देश का यारों क्या कहना, पृष्ठ ६९

व्यंग्य साहित्य की यात्रा में ऐसे अनेक व्यंग्यकार सम्मिलित हैं जो अपनी लेखनी से अच्छे परिणाम (रचना) दे रहे हैं लेकिन अति विस्तार के डर से उनका 'साहित्य विवेचन' नहीं कर रहा हूँ। लेकिन उनकी चर्चा व्यंग्यकार के रुप में अवश्य की जानी चाहिए। ऐसे महानुभावों के नाम इस प्रकार हैं –

श्री रोशन सुरीवाला – खाट पर हजामत (१९५८), डॉ. एम. ए. पी. एच–डी. १९६८, मंच के विक्रमादित्य १९६९, शंख और मूर्ख १९७१, पत्नी शरणम् गच्छामि १९७६, ये मंगाने वाले १९७६, मुर्दा शिरोमणि १९७६।

डा. संसार चन्द्र – सटक सीताराम १९५८, सोने के दाँत १९६२, अपनी डाली के काँटे १९६८, बाते ये झूठी है १९७४, गंगा जब उल्टी बहे १९८१।

श्रीवाल पाण्डेय – जब मैंने मूँछ रखी १९६८, माफ कीजिए हुजूर १९८२, साहब का अर्दली १९८५।

इस पीढ़ी के अन्य रचनाकार रहे डॉ. आत्मानन्द मिश्र, डॉ. सत्य प्रकाश सेंगर, डॉ जयनाथ नलिन, श्री रामावतार त्यागी।

दूसरी पीढ़ी ऐसे व्यंग्यकार जिनकी अभी बहुत प्रतिष्ठा नहीं है। ये परसाई की पीढ़ी और व्यंग्य समीक्षकों के बाद की पीढ़ी है–

श्री सुवोध कुमार श्रीवास्तव – शहर बन्द क्यों है १९७४, बचिए भभूत गिर रही है १९७४

श्री शिव शर्मा – 'ईश्वर जब नंगा हो गया' १९७८

श्री सुरेशकान्त – 'अफसर गये विदेश' १९८२, 'पड़ोसियों का दर्द' १९८४

श्री कृष्णचराटे – 'मेरे मोहल्ले का सूर्योदय' १९८२, 'साहब का टेलीफोन' १९८५

श्री सुरेश सेठ – 'तीसरी आजादी का इन्तजार' १९८३, 'सिरहाने के मीर' १९८६

डॉ. हरिश्चन्द्र वर्मा – 'चमचापुराण' १९८०, 'व्यंग्य के रंग' १९८७

श्री राम ठाकुर – 'अभिमन्यु का सत्ता व्यूह' १९८०, 'ऐसा भी होता है' १९७८, 'पच्चीस घण्टे' १९८०

श्री रास बिहारी पाण्डेय – 'उधार का भाषण' १९७८, 'स्पीकर क्रान्ति' १९७९, 'काका के जूते' १९८८, 'तीसरी आँख' १९९२

श्री कुन्दन सिंह परिहार – 'अन्तर्रात्मा का उपद्रव' १९८२

श्री विष्णुदेव पाण्डेय – 'नेताजी' १९७६, 'चौराहे पर' १९७९

श्री परन शर्मा – 'आत्म हत्या के पहले' १९८५, 'स्वयंवर आधुनिक सीता का', १९८६

डॉ. शिवानन्द कामड़े – 'इन्टरव्यू के चोंचले' १९८४, 'विधवा सहानुभूति' १९८५,

डॉ. रामेश्वर प्रसाद सिंह – 'एक अंगूठे की मसीहाई' १९८१, 'शिवमेव जयते' १९८३

डॉ. र. श. केलकर – 'कुत्ते की दुम', १९६७

श्री गोविन्द शेनॉय – 'मिस्टिक साहब का कुर्ता', 'आगे कौन हवाला' १९७१

श्री मालीराम शर्मा – 'आमने-सामने' १९७६, 'कैप्सूल नहीं टूटता' १९७७

श्री धर्म स्वरुप – 'लघु व्यंग्य कथाएं' १९७७

श्री मानिक बछावत – 'आदम सवार' १९७८

श्री सनत मिश्र – 'एक और अभिमन्यु' १९७८

श्री सुरेश सैनी – 'मरे आस पास' १९७९

श्री शशिकान्त – 'कुछ महाभारत और' १९८०

श्री दिलीप टेल – 'मैं मुन्ने को नहीं सम्भालँगा'

डॉ. रमाशंकर श्रीवास्तव – 'नमः प्रोफेसराय' १९८२, 'हल्ला मचाओ', 'गर्दन बचाओ' १९८२

डॉ धनराज चौधरी – 'गौतम बुद्ध और दुःखी आत्मा', १९८२

श्री पार्थ सारथी डबराल – 'नानीमदी दादी युग की' १९८२

डॉ. पूर्ण सिंह डबराल – 'जब जुल्फों पर रिसर्च होगी' १९८२

डॉ. रत्नलाल शर्मा – 'इधर से उधर' १९८२

श्री प्रेमेन्द्र श्रीवास्तव – 'लीक से हटकर' १९८०

श्री सुशील कालरा – 'चमचे का ढक्कन' १९८०

श्री वीरेन्द्र कुमार जैन – 'रावण की राख' १९८२, 'एक लोहार की' १९८५

श्री हरि मेहता – 'मारे गये शराफत में' १९८३

श्री शेर जगं जांगली – 'नेता जी का चमचा' १९८३

श्री प्रदीप पन्त – 'प्राइवेट सेक्टर का व्यंग्यकार'

डॉ. मनोहर प्रभाकर – 'अति सर्वत्र वर्जयते' १९८३

श्री बिहारी दुबे – 'आकड़ेबाजी' १९८४

श्री एम. उपेन्द्र – 'राजधानी में हनुमान' १९८४

श्री हरिकृष्णा तेलेग – 'कुत्ता पालक कलोनी' १९८४

श्री बलवीर त्यागी – 'पेट कन्धे पर' १९८४

श्री मनुमंत मनगटे – 'शोक चिन्ह' १९८४

श्री हरिजोशी – 'अखाडों का देश' १९८३

श्री शरतेन्दु – 'हम हड़ताली जनम के' १९८३

श्री कृष्ण मायूस – 'भ्रष्टाचार और हम' १९८३

श्री राजेश कुमार – 'पद के दावेदार' १९८४

श्री विश्वमोहन ठाकुर – 'मेरा इक्कीसवां मकान' १९८४

श्री धर्मपाल महेन्द्र जैन – 'सर क्यों दाँत फाड़ रहा है' १९८४

श्री राम आयंगर – 'एक बीमार सौ अनार' १९८५

श्री रामस्वरुप – 'प्रभु का पसीना' १९८५

श्री गोपाल चतुर्वेदी – 'असर की मौत, पोथी पढ़ि-पढ़ि' १९८५

श्री दिलीप गुप्ते – 'एक फइल का पोस्टमार्टम' १९८५

श्री राजेन्द्र निःशेष – 'दीवारों के कान' १९८५

श्री दिनेश चन्द्र दुबे – 'खुदा गवाह अपनी हत्या का' १९८५

श्री राजेन्द्र शर्मा – 'नेता जी का सफेद चूहा' १९८५

डॉ. चन्द्रेशेखर – 'बीबी के जन्मदिन पर' १९८५

श्री हरमन चौहान – 'पूत के पाँव' १९८६

श्री नन्द किशोर यादव – 'शुभ-लाभ' १९८६

श्री स्वयं प्रकाश – 'स्वतः सुखाय' १९८६

श्री हरीशनवल – 'बागपत के खरबूजे' १९८७ आदि।

व्यंग्य कर्म क्षेत्र की महिला कर्मियों का योगदान भी कम नहीं रहा उनमें जिन महिलाओं ने खासी उपलब्धि हासिल की है उनके नाम इस प्रकार हैं – डॉ. सरोजनी प्रीतम, डॉ. शान्ति मेहरोत्रा, विमला रैना, ऊषावाला, मृणाल पाण्डेय, डॉ. कुसुम कुमारी, स्नेहलता पाठक, अलका पाठक, साधना उपाध्याय, सुभद्रा मिश्र, सुशीला जोशी, कुसुम सेठी, और भीरी सीकरी।

विमला रैना का 'आहे और मुस्कान' १९६९, उषाबाला का 'कफन चोर का बेटा' १९७६, युधिष्ठिर के बेटे' १९८०, डॉ. कुसुम कुमारी के नाटक – 'ओम् क्रान्ति-क्रान्ति' १९७८ तथा 'रावणलीला' १९८३, मृणाल पाण्डेय के नाटक 'जो राम रचि राखा' १९८३ तथा डॉ. सरोजनी प्रीतम का 'बिके हुए लोग' १९८६ अधिक प्रसिद्ध रचनाएं हैं।

अब थोड़ा सा उनके विषय में भी जो मूलतः व्यंग्यकार नहीं है लेकिन व्यंग्य में अपनी लेखनी चलायी है उनका कृति के साथ नाम इस प्रकार हैं –

प्रभाकर माचवे – 'खरगोश के सींग', 'तेल की पकौड़ियां'।

इन्द्रनाथ मदान – 'सुगम और शास्त्रीय संगीत', 'कुछ उथले और कुछ गहरे', 'रानी और काकी', 'बहाने बाजी', 'भनुमति का पिटारा'।

डॉ आत्मानन्द मिश्र – 'जो हँसो', 'बेबात की बात', 'बात का बतंगड़'।

अमृत लाल नागर – 'भारत पुत्र', 'नौरंगी लाला काल दंड की चोटी', 'कृपया दाएं चलिए', 'चकल्लस'।

धर्मबीर भारती – 'ठेले पर हिमालय', 'गुलवीर की तीसरी यात्रा'।

उमाकान्त मालवीय – 'साहित्य महोदधिका चयन', रमेश बक्शी – 'गुप्ता जी माफ', रामेश्वर शुग्ल अंजच – 'गणत त्रवीदेन', फणीश्वर नाथ रेणु – 'उत्तर नेहरु परिचम'।

अन्त में व्यंग्य विधा को पूर्णतः समर्पित एक प्रतिष्ठित पीढ़ी मौजूद है, कुछ लोग है जो अपनी कहानी, उपन्यास आदि में यत्र-तत्र व्यंग्य की चर्चा भर कर देते हैं तो कुछ लोग कभी-कभी एकाध, व्यंग्य रचना कर देते हैं। कुल मिलाकर इन सभी से व्यंग्य विधा का विकास हो रहा है, व्यंग्य प्रौढ़ हो रहा है, व्यंग्य के नित नये प्रतिमान निर्धारित हो रहे हैं। व्यंग्य विधा पुराने लोगों से सीख कर नयी पीढ़ी के लोगों की अंगुली पकड़े आगे बढ़ रही है।

❑

चतुर्थ अध्याय

हरिशंकर परसाई – कृतियाँ और उनकी विशेषता

जीवन परिचय

हरिशंकर परसाई का जन्म २२ अगस्त १९२४ को हुआ और मृत्यु १९९५ में। इनका जन्म स्थान जमानी (इटारसी) के पास गाँव रहा है। एम. ए. हिन्दी में इन्होंने नागपुर से किया है।

बचपन के दिन बहुत अच्छे नहीं बीते। पिताजी (झुमकलाल परसाई) कोयले की ठेकेदारी करते थे। माँ घर पर रहती थी। अपने बचपन के दिनों को याद करते हुए वे कहते हैं, "खूब पढ़ने वाला, खूब खेलने वाला और खूब खाने वाला मैं शुरू से था। पढ़ने और खेलने में मैं सब भूल जाता हूँ। मौट्रिक हुआ जंगल विभाग में नौकरी मिली। जंगल में सरकारी टपरे में रहता था। ईंटे रखकर, उनपर पटिए जमाकर बिस्तर लगाता, नीचे जमीन चूहों ने पोली कर दी थी। रात भर नीचे चूहे, धमाचौकड़ी करते रहते और मैं सोता रहता। कभी चूहे ऊपर आ जाते थे। तो नींद टूटजाती पर मैं फिर सो जाता छह महीने मैं धमा चौकड़ी करते चूहों पर सोया"। [१]

कुछ समय पश्चात इनकी जिन्दगी में वह दिन आया जब वृक्षरूपी माता की छाया इनसे दूर हो गयी इसको लेकर वे लिखते है" बचपन की सबसे तीखी याद प्लेग की है। १९३६ या ३७ होगा। मैं शायद आठवीं का छात्र था। कस्बे में प्लेग पड़ी थी। आबादी घर छोड़कर जंगल में टपरे बनाकर रहने चली गयी थी। हम नहीं गये थे। माँ सख्त बीमारी थीं। उन्हें लेकर जंगल नहीं जाया सकता था। भॉय-भॉय करते हुए पूरे आस पास में हमारे घर ही चहल-पहल थी काली रातें। इनमें हमारे घर जलने वाली कंदील। मुझे इन कंदीलो से डर लगता था। कुत्ते तक बस्ती छोड़ गये थे। रात के सन्नाटे में हमारी आवाजें हमें ही डरावनी लगती थीं। रात को मरणासन्न माँ के सामने हम लोग आरती गाते- जय जगदीश हरे भक्त जनो के संकट पल में दूर करे। गाते-गाते पिताजी सिसकने लगते माँ विलख कर हम लोगों

---

१. सं. कमला प्रसाद - आँखन देखी-३६

को चिपटा लेती और हम भी रोने लगते। रोज का यह नियम था। फिर रात को पिता जी चाचा और दो एक रिश्तेदार लाठी बल्लम लेकर घर के चारों तरफ घूम-घूमकर पहरा देते। ऐसे भयकारी त्रासद दायक वातावरण में एक रात तीसरे पहर माँ की मृत्यु हो गयी। कोलाहल और विलाप शुरू हो गया। कुछ कुत्ते भी सिमटकर आ गये और योग देने लगे।"

"पाँच-भाई-बहनों में माँ की मृत्यु का अर्थ मैं ही समझता था। सबसे बड़ा था"।[१]

माँ की मृत्यु के पश्चात पिता जी टूट गये थे। वे अपना कार्य बन्द कर दिये थे। उस समय परसाई मैट्रिक भी पास नहीं किये थे कि परसाई समझने लगे थे कि "पिता जी भी अब जाते ही है। बीमारी की हालत में उन्होंने एक बहन की शादी कर दी थी बहुत मनहूस उत्सव था वह। मैं बराबर समझ रहा था कि मेरा बोझ कम किया जा रहा है पर अभी दो छोटी बहनें और एक भाई था।"[२]

इसी बीच पिता जी भी मृत्यु के नजदीक और उनको अपनी जंगल की नौकरी भी छोड़नी पड़ी फिर स्कूल मास्टरी फिर टीचर्स ट्रेनिंग और नौकरी की तलाश इधर पिता जी, मृत्यु के नजदीक। भाई पढ़ाई रोककर उनकी सेवा में, बहनें बड़ी बहन के साथ, हम शिक्षण की शिक्षा ले रहे हैं।"

इस बीच होशंगाबाद शिक्षा अधिकारी से नौकरी के लिए कहने लगे। लेकिन निराशा हाथ लगी। नौकरी जबलपुर में। होशंगाबाद से जबलपुर तक जाने के लिए पैसे नहीं थे लेकिन बेटिकट बैठ गये। कलेक्टर के एक खानसाये ने प्लेटफार्म से बाहर भी निकलवा दिया। "पहले दिन जब बाकायदा 'मास्साब' बना तो अच्छा लगा। पहली तनख्वाह मिली ही थी कि पिता जी की मृत्यु की खबर आ गयी । माँ के बचे जेवर बेचकर पिता का श्राद्ध किया।

---

१. सं. कमला प्रसाद – ऑखन देखी–३६

२. सं. कमला प्रसाद – ऑखन देखी– ३६

और अध्यापकी के भरोसे बड़ी जिम्मेदारियाँ लेकर जिन्दगी के सफर पर निकल पड़े।"[१]

किसी भी लेखक के कृतित्व को उसके व्यक्तित्व से अलग करके नहीं देखा जा सकता है और व्यक्तित्व बना बनाया नहीं मिलता है। हमें केवल अस्तित्व प्राप्त होता है यही अस्तित्व जीवन–यथार्थ से टकरा कर प्रतिभाशाली एवं चेतना सम्पन्न व्यक्ति के अन्दर आत्मसंघर्ष की प्रक्रिया से व्यक्तित्व में बदल जाता है। परसाई के व्यक्तित्व का निर्माण इन्हीं माध्यमों से हुआ। मध्यमवर्गीय परिवार की आर्थिक परेशानियां झेलते हुए परसाई अभी कायदे से अपने पैरों पर खड़े भी नहीं हो पाये थे कि इसके ऊपर से माँ बाप की छाया हट गयी और जिम्मेदारियां, जिम्मेदारियां दो बहनों और एक भाई की।

लेखक का आत्मकथ्य है कि गर्दिश के दिनों में एक चीज सीखी कि मुझे 'बेचारा परसाई' नहीं बनना है उसी उम्र से दिखाऊ सहानुभूति से मुझे बेहद नफरत है। बेटिकट यात्रा करना भी उन्हीं दिनों सीखा। जिस दूसरी विधा में कुशल हुए, वह था "निसंकोच भाव से किसी से भी उधार मांग लेना। तीसरी चीज सीखी अपनी बुआ से जो हमेशा कहती– 'चल चिन्ता नहीं।' उनका यह वाक्य मेरे लिए ताकत बना 'कोई चिन्ता नहीं '।[२]

इन सबके बीच ही लेखक के व्यक्तित्व का निर्माण हो रहा था "मैने कहा– मैं बहुत भावुक संवेदनशील और बेचैन तबियत का आदमी हूँ। सामान्य स्वभाव का आदमी ठंडे ठंडे जिम्मेदारियां भी निभा लेता। रोते–गाते दुनिया से ताल–मेल भी बिठा लेता और एक व्यक्तित्व हीन नौकरी पेशा आदमी की तरह जिन्दगी साधारण सन्तोष से भी गुजार लेता।

लेकिन मेरे साथ ऐसा नहीं हुआ, जिम्मेदारियां, दुखों की वैसी पृष्ठिभूमि, और अब चारो तरफ से दुनिया के हमले, इन सबके बीच सबसे बड़ा सवाल था अपने व्यक्तित्व और चेतना

---

१. सं. कमला प्रसाद – ऑखन देखी–३८

२. सं. कमला प्रसाद – ऑखन देखी– ३७

की रक्षा।"[१]

इधर लेखक के व्यक्तित्व का निर्माण हो रहा था उधर उसकी गर्दिशे जारी थी। जो तीन जगह अध्यापिकी की, छोड़ी। १९४३ में मॉडल स्कूल में अध्यापन शुरू किया। १९५२ में इस्तीफा दे दिया। १९५३ से ५७ तक प्राइवेट स्कूल में पढ़ाया। १९५७ में सदा के लिए तिलाजंलि दे दिया। १९५६ से जबलपुर से बसुधा नामक साहित्यिक पत्रिका का सम्पादन किया। अन्ततः आर्थिक कारणों से १९५८ में बन्द हो गया।

भाई बहनों की जिम्मेदारी आर्थिक संकट और समाज से सम्बन्धों का अभाव। इन सबके बीच लेखक जीना सीख रहा था और उसने सीखा-जिम्मेदारी को गैर जिम्मेदारी की तरह निभाओ। "पहले अपने दुःखों के प्रति सम्मोहन था। अपने को दुःखी मानकर और मनवाकर आदमी राहत भी पा लेता है मुझे भी पहले ऐसा लगता पर मैंने देखा, इतने ज्यादा बेचारो में मैं क्या बेचारा। इतने विकट संघर्षों में मेरा क्या संघर्ष।

"मेरा अनुमान है कि मैं व्यक्तिगत दुःख के सम्मोहन-जाल से निकल गया। मैं अपने को विस्तार दे दिया। दुःखी और भी है अन्याय पीड़ित और भी है। अनगिनत शोषित है मैं उनमें एक हूँ पर मेरे हाथ में कलम है और मैं चेतना-सम्पन्न हूँ मैने सोचा लड़ना है, जो हथियार हाथ में है उसी से लड़ना है। और तब एक औघड़ व्यक्तित्व बनाया और बहुत गम्भीरता से व्यंग्य लिखना शुरू किया।

साहित्यक उपलब्धियाँ अनगिनत है डी. लिट की उपाधि जबलपुर विश्वविद्यालय ने दी। १९६२ में विश्वशानित सम्मेलन में भारतीय प्रतिनिध मंडल से एक सदस्य की हैसियत से सोवियत रूस की यात्रा की। १९८२ में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित।

---

१. सं. कमला प्रसाद - आँखन देखी-३८

रचना के प्रेरणा स्रोत

जो कुछ जैसा हे उसे उसी रूप में स्वीकार कर लेना परसाई के स्वभाव में नहीं था। इसी कारण जीवन क्षेत्र में उन्हें तमाम उपलब्धियों से वंचित होना पड़ा। वे व्यक्तित्व को लेकर अधिक सतर्क थे। उन्होंने जब अपने दुःखों का विस्तार दिया तो समाज के असहायों मजबूरों, शोषितों की परेशानियों को अपना मानकर जीना प्रारम्भ किया। वे जागने वाला व्यक्तित्व का निर्माण कर सके। अपनी रचनाओं का प्रेरणा स्रोत वे उसी से पाते है एक स्थान पर साक्षात्कार देते समय उन्होने अपने व्यंग्य पात्रों के चयन के सन्दर्भ में कहा "पात्र में जीवन से लेता हूँ, सालों उनके चरित्र का अध्ययन करता हूँ तब व्यंग्य चरित्र बनता है। और मित्र कहते हैं कि तुम इस आदमी को ऐसे ही चिपकाये रहते हो। मैं कहता हूँ ऐसे ही नहीं चिपकाये रहता हूँ। मै स्टडी कर रहा हूँ। आगे इसका परिणाम पढ़ना।"[१]

परसाई की रचना के स्रोत वे झूठ, पाखण्ड, अन्याय, विसंगति पैदा करने वाले लोग भी हैं जो समाज के लिए खतरनाक है। हर व्यक्ति सामाजिक विसंगतियाँ भोगता है, जीता है, लेकिन सभी के अन्दर रचनाकार उपस्थित नहीं होता कि उसे अभिव्यक्ति भी प्रदान कर सके। परसाई उन विरले लेखकों में से है जो अपने भोगे यथार्थ को साहित्य में हथियार के रूप में प्रयोग कर सके हैं।

एक साक्षात्कार के उत्तर में वे कहते है "व्यक्तिगत पीड़ा के प्रति एक मोह होता है। मनोविज्ञान में इसे 'मेसाफिज्स' कहते हैं – याने स्वंय पीड़ा प्रमोद। मैं स्वंय-पीड़ा प्रमोद के मोहजाल से जल्दी मोह भंग हो गया और मेरी अनुभूति व्यापक होती गयी।

"मैने समझ लिया कि रोने से कुछ नहीं होता लड़ने से होगा और व्यापक पैमाने पर होगा।"[२]

---

१. सं. कमला प्रसाद – ऑखन देखी–५९

२. समय चेतना/अक्टूबर १९९५–पृष्ठ–३०

"हर लेखक जीवन की खोज और समीक्षा करता है इसी बीच उसे किसी माध्यम की तलाश होती है जिससे वह अपनी बात स्पष्ट रूप से कह सके। समाज की विसंगतियों विकृतियों, अन्याय, शोषण, पाखण्ड दोमुँहेपन इत्यादि को पकड़ने और उसे अभिव्यक्ति देने के लिए परसाई को व्यंग्य माध्यम ही उचित प्रतीत हुआ।"

परसाई के लेखन का उद्देश्य क्या है ? इसके विषय में वे बतलाते है। मेर` लेखन मे तिरस्कार नहीं, बल्कि आलोचना और जीवन समीक्षा है अगर मैंने विभिन्न क्षेत्रों में, व्याप्त विसंगतियों पर व्यंग्य किया है तो यह बतलाने की चेष्ठा की है कि कहाँ-कहाँ क्या गलत है और उसे बदलना चाहिए। तिरस्कार में मनुष्यता को नकारने, मनुष्य में आशा खो देने का भाव होता है। यह मेरे लेखन में नहीं है। यहीं से यह प्रश्न उठता है कि लेखन का उद्देश्य क्या है सारे लेखन का उद्देश्य मनुष्य है-वही केन्द्र है। जैसा जीवन हमारा है, उससे बेहतर जीवन हो यही मेरी इच्छा है-उसे उद्देश्य भी मान सकते है इसलिए मनुष्य जीवन के प्रति एक अटूट प्रतिबद्धता मेरे लेखन में है।"[१]

जीवन दर्शन

स्वतन्त्रता के बाद भी सामन्त वादी व्यवस्था, जड़ हो चुकी सामाजिक संरचना, पूंजीवादी व्यवस्था के बीच आदमी का दूषित चरित्र विद्यमान था। लगातार परेशानियाँ मजबूरियाँ झेलते-झेलते आदमी नियतिवादी हो गया था। 'हर हाल में जीने की कल्पना करने लगा था।

परसाई ने इन सभी लोगों पर खोज-खोजकर चोट करना प्रारम्भ किया। उनकी मान्यता थी कि जिस प्रकार भी मनुष्य वर्तमान परिस्थिति से अच्छा बन सके वही कार्य करना चाहिए। अपने जीवन दर्शन के विषय वे बतलाते "आरम्भ में ही राजनैतिक लोगों के साथ रहने के

---

१. समय चेतना - अक्टूबर १९९५- ३०

कारण राजनैतिक चेतना मुझमें थी। वे लोकतान्त्रिक समाजवादी लोग थे जिनके नेता जय प्रकाश नारायण थे पहले आम चुनाव में इनका सफाया हो गया। इनमें खीझ आयी और फ्रस्ट्रेशन आया और वे टूट-फूट गये। संयोग से तभी मेरा सम्पर्क कम्युनिष्ट पार्टी से हो गया और मार्क्सवादियों के सम्पर्क से मैने बहुत कुछ सीखा।"[१]

आपके दर्शन का एक अन्य स्थान पर पता चलता है "लेखक यही बताता है कि समाज में यह बुरा है, यह असंगत है, यह कल्याणकारी है। वह ऐसा इसलिए करता है क्योंकि वह दुःखी है कि इतना बुरा क्यों हुआ ? वह एक बेहतर मनुष्य, एक समाज व्यवस्था के प्रति आस्था रखता है इसलिए जो बुराई आज उसे दिखती है उन्हें इंगित करता है। डॉ. अगर मरीजों को रोग बताता है तो वह निराशावदी नहीं, नकारात्मक और सिनिकल नहीं है वह आदमी को स्वस्थ करना चाहता है, इसलिए रोग बताता है, अगर वह रोगी से कह दे कि वह तो स्वस्थ है तो वह मर जायेगा, यह लहजा क्या सकारात्मक है ?

परसाई की जीवन-दृष्टि मार्क्सवाद से प्रेरित रही है। वे अनुभवों से परिपक्व अवश्य हुए लेकिन उनकी धारणा में मार्क्सवाद ही वह दर्शन है जो जीवन की सही तरीके से व्याख्या करता है। "मैने दर्शन और इतिहास बहुत पढ़ा। भारतीय दर्शन मैने पूरा पढ़ा है। पश्चिम में सुकरात से लेकर, कॉट, हीगेल, मार्क्स सब पढ़ा है। पर मुझे विश्वास हे कि समाज में मानवीय सम्बन्धों का न्याय पूर्ण हल मार्क्स वाद ने ही दिया है।

परसाई को प्रभावित करने वाले व्यक्ति

कबीर परसाई के आदर्श पुरूष थे। उनके फक्कड़ाना अन्दाज, घर-फूँक तमाशा देखने का साहस, लापरवाही तथा अखण्ड विश्वास ने परसाई को अधिक प्रभावित किया।

कबीर सच्चे अर्थों में समाज के सिपाही थे जो समाज को सुधरने के लिए प्रेरित करते

---

१. सं. कमला प्रसाद - आँखन देखी - ४९

थे। कबीर विसंगतियों को समाप्त करने के लिए काव्य रचना करते हैं वे इसके लिए अपनी आत्मलोचना करने से भी नहीं चूकते है। परसाई कबीर की भाँति स्वीकार करते है" मैं काफी बेहूदा हूँ मैं पहुँचते ही आयोजकों के चेहरों व्यवहार और आवभगत, से हिसाब लगाना शुरू कर देता हूं कि ये अच्छे पैसे देंगे या नहीं।"[१] कबीर धर्म निरपेक्षता की प्रतीक थे। ऑखन देखी की बात करते थे। परसाई भी कबीर की भाँति दुनिया को देखकर आत्मसात करके उसे अभिव्यक्ति देते थे। परसाई कबीर की परम्परा को और अधिक आगे ले जाते लेकिन वर्तमान प्रेस और उसकी प्रबन्ध व्यवस्था के कारण परसाई को पूरा अवसर नहीं मिला, अपनी अभिव्यक्ति क्षमता के प्रदर्शन का। उनके तमाम कालम इसलिए रोक दिए गये क्योंकि व्यवस्थापक को उनकी खरी खरी बातें सुहाती नहीं थी। "आज छापाखाना बीच में आ गया और बीच में आ गये छापाखाने के मालिक जो धन-दौलत और पार्टीगत स्वार्थ भूल-भूलैयों में परसाई की उस वाणी को फटकने नहीं देते जो वास्तव में परसाई को कबीर बनाने में समर्थ हुए है। इस कबीर के 'कितने सुनो भाई साधों' के कालम छपने से रुक गये। क्योंकि छापेखाने के मालिक इस कबीर की फक्कड़ता को नहीं झेल सकता है।"[२]

परसाई कबीर की कुछ पंक्तियों को दुहराते है। जैसे- हम न मरिहै मरिहै, संसारा। सब कहते कागद की लेखी मैं कहता ऑखन देखी। तो उनके चेहरे पर सहज तेज दौड़ जाता है। सूनोभाई साधो' 'माटी कहे कुम्हार से, कविरा खड़ा बाजार में आदि कालम उन्होंने कबीर से प्रभावित होकर ही लिखा था। परसाई कबीर से अधिक जन मानस को समझते है। जहाँ कबीर धार्मिक एवं सामाजिक कॉइयेपन को उजागर करते है वही परसाई देश विदेश के बीच दर्शन, धर्म, आर्थिक सभी क्षेत्रों में देख आते है। कबीर के प्रभाव में आकर परसाई में भी बेफ्रिकी, निर्भीकता और जीवन की समस्या आती है। भारतेन्दु, प्रताप नारायण मिश्र, निराला,

---

१. सं. कमला प्रसाद - ऑखन देखी - २५

२. सं. कमला प्रसाद - आखन देखी - ६३

नागार्जुन आदि सभी में औघड़ाई आती है परसाई औघड़ाई में सबसे आगे है वे कहीं न कहीं कबीर से बेहद जुड़े हैं परसाई जी हिन्दी साहित्य में दूसरे कबीर है जो धर्म राजनीति एवं व्यवस्था की विद्रूपता को बिना किसी खटके के साथ समाज के समक्ष रखते है। परसाई ने कबीर की परम्परा से अपने को जोड़ा है कबीरदास ने 'जतन' से चदरिया ओढ़ी फिर भी अगर कहीं-कहीं फट गयी है तो हमारे आने वाले साथी रफू करवा लेंगे।

परसाई और मार्क्स

मार्क्सवाद ने सम्पूर्ण विश्व को एकजुट किया है। वह सामाजिक परिवर्तन में नहीं क्रान्ति में विश्वास करता है। वह सामन्तवादी पुरानी व्यवस्था को समाप्त करने के लिए तत्पर रहता है। अपने सिद्धान्तों में वह द्वन्द्वात्मक भौतिक वाद और श्रम को अधिक महत्व देता है। उत्पादन के साधनों द्वारा इतिहास की व्याख्या करता है। उत्पादन कभी भी अकेले नहीं किया जा सकता है वह आपसी सहयोग पर निर्भर है।

मार्क्स व्यक्ति की स्वतन्त्रता को स्वीकार नहीं करता है। समाज में पुराने मूल्यों का विध्वंस और नये मूल्यों की स्थापना होती रहती है। समाज के आपसी अर्न्तविरोध से ही समाज का विकास होता है। वर्तमान व्यवस्था में सर्वहारा और पूँजीवाद के बीच हमेशा द्वन्द्व चलता रहता है।

परसाई ने 'चूहा और मैं' नामक कहानी में इसी तरह की क्रान्ति का पक्षलिया है। वे लिखते है। तुम जिसे अपने हक का समझते हो उसे सत्ताधीशों के सिर पर सवार होकर वसूल कर लो उनके अनुसार मुक्ति कभी अकेले नहीं मिलती है। परसाई मार्क्सवाद से गहरे रूप से प्रभावित थे। "मार्क्सवादी हूँ, बेवकूफ मार्क्सवादी नहीं हूँ। इसीलिए अनजाने बैद्धिक गलती का सवाल मेरे सामने है ही नहीं। मैं मार्क्स की इतिहास की व्याख्या मानता हूँ। वर्ग संघर्ष में विश्वास करता हूँ।" "मैं ठेठ जनवादी हूँ और यदि मार्क्सवादी दलों को मेरे लेखन से

सहायता मिलती है तो ठीक बात है।"[१]

"वे मार्क्सवादी विचार धारा से प्रतिबद्ध है। उन्होंने पूँजीवादी समाज और संस्कृति के विघटनकारी तत्वों का विश्लेषण किया है और समाजवादी जीवन-मूल्यों की पक्षधरता को स्पष्ट किया है कि परसाई के व्यंग्य सोद्धेश्य है। परसाई ने आधुनिक भारतीय समाज में सड़ते हुए वर्ग-वैषम्य के स्तर-दर-स्तर की खोज की है। वे भारत के इतिहास में घुसे है। पुरातन-दर्शन धर्म-नीति और आचार मान्यताओं से परिचित है। उन्हें भारतीय मन से ऐतिहासिक विकास की जानकारी है उन्होंने भारतीय इतिहास के प्रत्येक युग के सामाजिक सम्बन्धों का विश्लेषण किया है। इसलिए परसाई आधुनिक समाज के शत्रुपूर्ण अन्तर्विरोधी को पकड़ने में सफल हुए है।"

"परसाई ने भारतीय समाज की वर्ग-विसंगति को पहचाना है उसे अपने लेखन में खोल-खोलकर नंगा किया है। खूब उघारा है तथा उसके मर्म स्थलों पर चोट की है। इस तरह परसाई ने भारत के जीवन-दर्शन की मार्क्सवादी मीमांसा की है।[२]

परसाई की व्यंग्य दृष्टि

किसी भी सफल रचनाकार के लिए आवश्यक है कि वह उसकी रचना में यथार्थ भविष्य की रचनात्मक संवेदन संस्कृति विद्यमान हो। इसके अभाव में रचना मृतप्राय और निष्चेष्ठ होती हें इसके लिए आवश्यक है कि रचनाकार को यथार्थ-बोध की द्वन्द्वात्मक समझ हो। समकालीन गुण तत्वों की प्रगति मान प्रारूप उपस्थति हो। रचनाकार के अन्दर एक पूरा समाज और एक समूचा युग अपने बाहरी और भीतरी अर्न्तविरोधों के साथ उद्धेलित हो। रचनाकार को इसी समय अपनी रचनात्मक अन्तर्विरोधो के बीच हल खोजना पड़ता है। जागने

---

१. सं. कमला प्रसाद - आँखन देखी - ५७
२. सं. कमला प्रसाद - आँखन देखी - २६७

वाले का रोना कभी खत्म नहीं होता"

भारतीय सामाजिक और राजनैतिक व्यवस्था इस कोटि की थी एक तरफ स्वतन्त्रता का बिगुल बज रहा था तो दूसरी तरफ भ्रष्टाचार का भोज हो रहा था। मानवीय आचरण और मानवीय विद्रूपताएं इस कदर फूल करके समाज के ऊपर उतराने लगी जैसे किसी तालाब को मथ दिया गया हो और पूरी गन्दगी ऊपर आ गयी हो। पूँजीवादी जीवन प्रणाली और नव स्वतन्त्र मन चेतना के बीच एक अन्तर्विरोध स्वाभाविक रूप से जन्म लेना प्रारम्भ किया। इस बीच लेखक एवं रचनाकार को एक पक्ष लेना पड़ा कि वह पूँजीवादी व्यवस्था का साथ दे अथवा उस व्यवस्था का जो समाज का प्रतिनिधित्व कर रहा है। "अधिकार सम्पन्न सम्पत्तिशाली वर्गो का नग्न दमन। इस भयानक यथार्थ के बीच सतह के आदमी के दुःखपूर्ण जीवन वास्तविक स्थितियों को विश्लेषित कर सामने प्रस्तुत करना और व्यापक सामाजिक और वैयक्तिक पाखण्ड और मूल्यहीनता के विरूद्ध करना यह परसाई के व्यंग्य रचना की जमीन है अपनी वैचारिक दृष्टि के साथ उन्होंने इस भीषण यथार्थ का सामना किया है। और इस आदमी के साथ अपनी सम्बद्धता प्रकट की है। जो एकदम सतह का आदमी है।"[१] इसमें हरिशंकर परसाई ने भारतीय मनुष्य की मुक्ति का रास्ता देखा।

अगर परसाई का व्यंग्य हथियार है, तो करूणा का एक रूप भी। परसाई के पास एक दृष्टि है "मैने विभिन्न क्षेत्रों में व्याप्त विसंगतियों पर व्यंग्य किया है तो मैने यही बतलाने की चेष्ठा की है कहाँ क्या गलत है और उसे बदलना चाहिए।"[२] परसाई की निगाह में जो गलत है वह समाप्त होना चाहिए।

परसाई व्यक्ति समाज और समूचे राष्ट्र की भीतरी कक्षाओं में घुसते हैं और गुँथी हुई,

---

१. डॅ. मनोहर लालदेवलिया – हरिशंकर परसाई की दुनिया – १५

२. समय चेतना – अक्टूबर, १९९५ – ३०

उलझी हुई, गॉठो भरी व्यवस्था में विद्रूपों, विसंगतियों, और विडम्बनाओं को सामने लाते है। इस तरह परसाई ने समूची, सांस्कृतिक अधिरचना को अपने लेखन का विषय बनाकर प्रस्तुत किया है। परसाई आधुनिक भारत के सामन्तवादी–पूँजीवादी, सामाजिक व्यवस्था की शल्य चिकित्सा की है उसके बीमार दिमाग और भष्ट आचरण की गन्दगी और बदबू को साफ किया है।

परसाई की व्यंग्य दृष्टि से कई पहलू उभरकर सामने आते हैं। प्रारम्भ से लेकर अन्त तक परसाई की दृष्टि में परिपक्वता आती रही है और उनकी दृष्टि को एक नयी जमीन मिलती रही है। मानवीय प्रतिबद्धता से, युगीन समस्याओं से रचनाकार बहुत अधिक टकराता है। इसी कारण छोटी–छोटी घटनाओं को आधार बनाकर परसाई रचना कर सकते हैं। रजनीश को आधार बनाकर 'टार्च बेचने वाला' कहानी लिखे। परसाई अपनी दृष्टि से उनघटनाओं को खोज निकाला जिनसे विसंगतियों का जन्म होता है। परसाई की दृष्टि को व्यापकता से जितना विशाल लोक शिक्षण किया है। वह उस समय की आवश्यकता थी। परसाई भारतीय मनुष्यता की क्षुद्रता एवं सहायता का एक–एक चित्र खीचने में सफलता पायी है दृष्टि की सूक्ष्मता के कारण ही परसाई संवाद एवं भाषा पर भी गहरी पकड़ बनाने में सक्षम है।

एक रचनाकार की पूँजी उसका अनुभव संसार हैं अनुभव का ज्ञान आदमी को नयी दृष्टि देता है। जीवन अनुभव की विविधता से आदमी के लेखन उद्देश्य में भी विविधता आती है। कभी–कभी अनुभव का सही विश्लेषण न होने पर उससे प्राप्त संज्ञान गलत होता है। इसलिए आवश्यक है कि अनुभव का विश्लेषण सही दिशा में किया जाय। जीवन की विराटता में सही विश्लेषण हो ही जाय यह आवश्यक नहीं है। परसाई ने जीवन अनुभव को सारे कोणों से विश्लेषण करके व्यंगय की अपनी सूक्ष्म दृष्टि का परिचय दिया है।

परसाई अनेकों मनुष्यों के व्यवहार आचरण तथा इसके आचरण एवं व्यवहार को

प्रभावित करने वाली परिस्थितियों घटनाओं का विश्लेषण बड़े ही सूक्ष्म ढंग से किया है। इस प्रकार परसाई का आदमी अपने परिवेश से अजनबी नहीं है वह उससे पूरी तरह सम्पृक्त है।

परसाई की रचनाएं एलीट वर्ग की भाषा में प्रस्तुत नहीं है उनका उद्देश्य शब्द चमत्कार करना नहीं था। बल्कि भाव उत्पन्न कर जनता की भावनाओं को जगाकर, लड़ने के लिए प्रेरित करना था। इसके लिए वे उन्हीं की भाषा में उनकी तकलीफों को समझाते है और जब पाठक समझ जाता है तब लड़ने के लिए उठ खड़ा होता है।

परसाई के लेखन काल से लेकर अन्त तक व्यंग्य चेतना और व्यंग्य दृष्टि के विकास के कई चरण आये। शुरू की रचनाओं में परसाई की दृष्टि उतनी स्पष्ट नहीं थी। उनका लेखन भावुकता पूर्ण था। वे किसी को चोट नहीं पहुँचाना चाहते थे। संस्कारित मर्यादावादी व्यंग्य लिखते थे। यह लक्षण 'हंसते है रोते हैं', 'तट की खोज', 'ज्वाला और जल' आदि से मिल सकता है। लेकिन बाद की रचनाओं में उनकी व्यंग्य प्रखरता बड़ी तीक्ष्ण एवं स्पष्टवार करने वाली बनी।

परसाई ने तुलसी की समन्वयवादी, आदर्शवादी लोक दृष्टि के विपरीत कबीर की क्रान्तिकारी लोक दृष्टि को अपनाया। परसाई की दृष्टि वहाँ भी पहुँची है जहाँ नौकरशाही घूस में नारद की वीणा रख लेती है। (भोला राम का जीव) तो घूस लेने के कारणों को खोजते हुए उन्होंने उसे ढूँढ निकाला (सदाचार का ताबीज)। आदमी अपने अधिकारों के लिए नहीं लड़ रहा है। लेकिन चूहा लड़ रहा है। (चूहा और मैं) इसी प्रकार 'गाँधी की शाल' और 'लँका विजय के बाद' 'आजादी की घास' में उन्होंने आजादी के लिए लड़ने वालों की मानसिकता का स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया है। परसाई की दृष्टि आर-पार की दृष्टि है "उनकी रचनाओं में राजनैतिक सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक विसंगतियों का सम्पूर्ण लेखा-जोखा उपलब्ध होता है। इन विसंगतियो के प्रति रचनाकार की दृष्टि मात्र व्याख्यात्मक नहीं है। वे

इन्हें सांस्कृतिक और सामाजिक परिप्रेक्ष्य में उभारते है। और उन कारणों की तह तक जाते है जो इन्हें जन्म देते है।"[१]

परसाई की रचना दृष्टि मौलिक है उनका पूरा लेखन अनुभव और मार्क्सवाद के गहन अर्थो के चिन्तन से उदभूत है। वे आत्म व्यंग्य भी करते हैं। लेकिन इसके माध्यम से समाज के एक वर्ग के प्रतिनिध का ही चुनाव वे करते है। इस प्रकार परसाई विचारात्मक अनुशासन की राजनीति के सबल तर्को से मिथ्यावादी सांस्कृतिक आचरण और चिन्तन के विरूद्ध यथार्थ वादी विकल्प को ही सामने रखा है।

परसाई की विचारधारा

परसाई ने अपने लेखन का केन्द्र समाज के छूत अछूत सभी विषयों को चुना है। इसमें धार्मिक, शैक्षिक, साहित्यिव, सामाजिक, व राजनीति, सम्बन्धी विषयों पर विचार करना उचित है।

धर्म सम्बन्धी विचार

विश्व के सभी धर्म सदभाव प्रेम और भाई चारा की भावना को लेकर ही प्रकट हुए थे लेकिन उनके अनुयायी सिद्धान्तों के विपरीत कार्य करने लगे। धर्म का जो वास्तविक तत्व है उसे छोड़कर, उसके बाहरी रूप को ग्रहण कर लिया है।" तत्व को खो दिया है, तप को पकड़े बैठे है। इसीलिए झगड़े होते है धार्मिक दंगों में जो लड़ते है वे क्या भक्त लोग होते है उनको धर्म से कुछ लेना देना नहीं। ईश्वर को वे कुछ नहीं समझते वे ऐसे होते है जो किसी भी धर्म के लिए कलंक होते है। गुण्डे, हुल्हड़बाज और गुण्डे।"[२] धर्म का जो वास्तविक तत्व है उसे भुलाकर आडम्बर किये जा रहे है। धन के चोचले बताये जा रहे है। मैने पहले

---

१. परसाई रचनावली – खण्ड चार, पृष्ठ २

२. परसाई रचनावली – खण्ड छः, पृष्ठ ४२

भी कहा था कि जिस धर्म के पालन करने में लाख रूपये लगे, वह धर्म नहीं धंधा होगा।"[१] सभी धर्मो में ऐसे पाखण्ड का जन्म हुआ है। "सबधर्मों को उसके भक्तों ने ही कलंकित किया है। सनातन धर्म वाले कभी बौद्धों के सिर काटते थे। फिर बौद्ध राज्य हुए तो सनातन धर्मियों के मस्तक उतारने लगे। इसाई धर्म वाले हिरोशिमा में बम पटकते है। और ओयान में नरसंहार करते है। इस्लाम वाले कश्मीर में लूट, आगजनी हत्या करते है। जैन धर्म वाले पानी छानकर पीते है, मगर खुले बाजार आदमी का खून बगैर छना पी जाते है।"[२]

व्यक्ति समाज में प्रतिष्ठा पाने के लिए लाखों रूपये का घी, दूध, दही पानी की तरह बहा देता है। इस सन्दर्भ में वे लिखते है कि "उसे यह नहीं मालूम कि उसके देश का उसके देश का अर्थमंत्री तमाम दुनिया में हाथ फैलाये भीख माँग रहा है उसे यह नहीं मालूम कि उसके देश का अर्थ मंत्री तमाम दुनिया में हाथ फैलाये भीख मांग रहा है उसे यह नहीं मालूम कि पंचवर्षीय योजना के लिए हमारे पास पैसे नहीं है।"[३] ऐसे लोगो से परसाई का कहना हे कि "तुम वो तीन लाख रूपये बर्बाद न करके समाज के हित में लगा दो। अस्पताल खुलवा दो, भिखारियों के सोने के लिए सराय बनवा दो। शिक्षा संस्था खुलवा दो। उपाधि चाहे जो ले ले, सारे समाज से आरती उतरवाने पर देश का धन बर्बाद न करे। घी को आदमी के पेट में जाने दे, रथ के पहिये में न डाले।"[४]

परसाई का धर्म मानवीयता का धर्म है वह मानवता को सबसे बड़ा धर्म मानते हैं वे लिखते है कि "धर्म से बड़ा कोई नहीं है मनुष्य का जिससे कल्याण होता है वह धर्म है

---

१. परसाई रचनावली – खण्ड छः, पृष्ठ ५४-५५
२. परसाई रचनावली – खण्ड छः, पृष्ठ ४१
३. परसाई रचनावली – खण्ड छः, पृष्ठ ४७
४. परसाई रचनावली – खण्ड छः, पृष्ठ ४७

जो मनुष्य का हित करता है वही साधु है जो मनुष्य को ऊपर उठाता है वही सन्त है।"[१] आज के धर्म–सन्दर्भ बदल रहें हैं यज्ञ का अर्थ अब हो गया है उत्पादन बढ़ाना, अशिक्षा दूर करना, नहर खोदना, जमीन तोड़ना आदि। जो धर्म के नाप पर बड़े–बड़े हवन कुण्डो में लाखों टन घी उड़ेलता है वह धार्मिक नहीं पाखण्डी है।

धर्म की विडम्बनाएं इस कदर बढ़ गयी है कि यहाँ भक्त पैसे देकर भगवान का नाम जपवाता है आखिर भगवान के पास इतनी तो अकल है कि जाप का फल किसे दिया जाय हमे तो आपका नाम लेने की फुर्सत नहीं इन्हें पैसे दे दिये है ये तुम्हारी स्तुति गा देंगे।" साधो अष्ठग्रहों को बुद्धू बनाने के प्रयत्न चालू हो गये है। जगह–जगह यज्ञ हो रहे है–हजारों लाखों रूपये यज्ञ के लिए चन्दे में मिल जाते है। जहाँ अस्पताल या स्कूल के लिए फूटी कौड़ी गाँठ से नहीं निकलती। वहाँ यज्ञ के लिए रूपये निकल आते है इस तरह से यज्ञ हो रहे है कि सारे देश में धुँआ छा जायेगा। और ग्रहो को दिखेगा ही नहीं कि भारत कहाँ है बस वे चीन की ओर चले जायेगे"।[२]

मध्य युग में धर्म की सत्ता थी। भारत और विश्व दोनो जगह धर्म की प्रधानता थी लेकिन आज के समय में विज्ञान और मनुष्य का बोलबाला है वे लिखते है कि "धर्म बीते युग का सिक्का था। जो खोटा हो गया है इसकी मूल्यवत्ता समाप्त हो गयी है"[३]

शिक्षा सम्बन्धी विचार

परसाई जी की मान्यता है कि इस देश में एक परम्परा विकसित हो गयी है कि जो जितने उँचे पद पर कार्य करेगा, वह उतना ही कम कार्य करेगा। यह क्रम प्राइमरी, मिडिल,

---

१. परसाई रचनावली – खण्ड छः, पृष्ठ ४७

२. परसाई – सदाचार का तावीज, पृष्ठ ९

३. परसाई – पगडन्डियों का जमाना, पृष्ठ ८९

हाईस्कूल, कालेज और फिर विश्वविद्यालय होते हुए पीठों तक पहुँचता है। विश्वविद्यालय के शिक्षक पढ़ाते नहीं है आर्शीवाद देते है। "अब साधो जहाँ तक अच्छे नम्बर मिलने और पहला दर्जा पाने का सवाल है। प्राइमरी से लेकर विश्वविद्यालय तक सब गुरू कृपा से आती है। गुरू अगर प्रसन्न हो जाये तो अपने प्रिय विद्यार्थी को एकलव्य का अंगूठा काटकर दे सकता है।"[१]

शिक्षकों की कमी और उनकी दुर्दशा पर परसाई जी लिखते है कि "साधो मुझे लगता है, सरकार जानती है कि देश को शिक्षक बगैरह की कोई खास जरूरत नहीं है। देश को जरूरत है कलेक्टर की आबकारी अफसर की। शिक्षक एक गैर जरूरी चीज है।"[२]

"साधो शिक्षकों को गर्मी की छुट्टी में नौकरी से अलगकर दिया जाता है और जुलाई में फिर भरती कर लिया जाता है यही कमी है....... शिक्षकों को रोज मजदूरी पर रखना चाहिये जिससे इतवार तथा छुट्टियों की मजदूरी भी न देनी पड़े। सुबह चौक में शिक्षक इकट्ठे हो और स्कूलो के मैनेजर तथा इंसपेक्टर वहाँ से मजदूरी तय करके दिन भर के लिए जरूरी शिक्षक ले आयें।"

शिक्षा के मामले विशेषज्ञो द्वारा तय न होकर मन्त्रियों द्वारा तय किये जाते हैं। इसके ऊपर परसाई जी कहते हैं एक और विचित्र बात है। हमारे यहाँ भाषा और साहित्य के मामले भी मन्त्रियों द्वारा तय किये जाते है। इन मन्त्रियों की शिक्षा साहित्य और भाषा के विषय में कितना ज्ञान है यह कोई बताने की बात नहीं है हमारी हर वस्तु का भाग्य विधाता-राजपुरूष था राजनेता है, सर्वज्ञ है। शिक्षा मन्त्रियों ने तय कर लिया है कि अंग्रेजी अनिवार्य रूप से

---

१. परसाई रचनावली - खण्ड छः, पृष्ठ ६३

२. सुनो भाई साधो, पृष्ठ ६९

३. परसाई रचनावली - खण्ड ५, पृष्ठ ५६

पढ़ाया जाने वाला विषय होना चाहिए।"[३] पाठयक्रम में नित नये परिवर्तन होते रहते है। इसके लिए परसाई लिखते है। "शिक्षा मंत्री ने बड़े साहस से स्थिति को स्वीकारा उन्होंने जवाब दिया कि बच्चे गधे को गणेश की अपेक्षा अधिक जानते है और गधा गणेश की अपेक्षा जीवन के अधिक निकट है। यह सही है इसीलिए बच्चों को शुरू से ही समझाना चाहिए कि बेटो, गणेश को भूल जाओ। उनका जमाना गया। आज गधे का जमाना आया है। इस जमाने में सफलता के लिए गधे का स्मरण करो पढ़ो ग-गधे का।"[१]

भाषा के सन्दर्भ में परसाई जी कहते है "भाषा वह होती है जिसे लोग बोलते हैं। वह भाषा नहीं होती जो विश्वविद्यालय और हिन्दी के दर्जनो संस्थान बनाते है"।[२]

बोल चाल की भाषा में अछूत प्रथा नहीं मानना चाहिए। बोलचाल की भाषा के अंग्रेजी शब्द आ गये है, उन्हें हिन्दी मान लेना चाहिए हिन्दी को अधिक से अधिक दूसरी भाषाओं के शब्द ले लेना चाहिए। तब हिन्दी समृद्ध होगी"।[३]

आज कल शिक्षा को अधिक से अधिक प्राइवेट किया जा रहा है। शिक्षा एक व्यवसाय हो गयी है। लोग दुकान-लगाकर बैठे है उसके सन्दर्भ में परसाई लिखते है "जैसा कि आरम्भ से ही घोषित कर दिया गया है यह कालेज हमारी फर्म की एक शाखा है इसलिए इसके पिसिपल का दर्जा हमारी दुकान के हेड मुनीम के बराबर रहेगा और प्रोफेसर लोग मुनीम माने जायेंगे।"[४]

एक कुलपति से भेंट में परसाई लिखते हैं कि ये सब गुण्डे और तुम्हारे जैसे आदमी इन्हें बिगाड़ते है न पढ़ने के लिए छात्र आते है और न पढ़ाने के लिए अध्यापक। अध्यापक

१. परसाई रचनावली - खण्ड ५, पृष्ठ १५४
२. परसाई - ऐसा भी सोच जाता है, पृष्ठ १२१
३. परसाई - ऐसा भी सोचा जाता है, पृष्ठ १२३
४. परसाई रचनावली - खण्ड ४, पृष्ठ ४३४

हाजिरी और तनख्वा के लिए आते है और छात्र ऊधम करने और नकल करने के लिए।

समाज सम्बन्धी विचार

परसाई समाज की सड़ान्ध को दूर करने के लिए तत्पर है। वे स्वंय यही उद्देश्य बनाकर लेखन कार्य करते है। "समाज की अव्यवस्था दूर करने के लिए सामान्य जन को सजग करते हुए परसाई लिखते है कि अव्यवस्था दूर करने के लिए ठोस कदम उठाना होगा। मात्र भाषणों, लेखों, और सर्कुलरों से समाज की स्थिति नहीं सुधर सकती। इसके लिए समाज की व्यवस्था में आमूल परिवर्तन लाना होगा। बिना व्यवस्था में परिवर्तन किये, भ्रष्ठाचार के मौके बिना खत्म किये और कर्मचारियों को बिना आर्थिक सुरक्षा दिए भाषणों, सर्कुलरों, सदाचार समितियों, निगरानी आयोगों द्वारा कर्मचारी सदाचारी न होगा।"[१] इसके माध्यम से परसाई उन परिस्थितियों को समाने लाते है जिसके कारण विसंगतियों उत्पन्न होती है।

आज अल्प समय में और कम मेहनत से लोग सफलता प्राप्त करना चाहते है। परसाई का यही पगडन्डियों का जमाना है। आज वे लोग पागल या मूर्ख समझे जाते है जो आम रास्ते से सफलता प्राप्त करना चाहते है। "सफलता के महत्व का सामने का दरवाजा बन्द हो गया है। कई लोग भीतर घुसे है और उन्होंने कुण्डी लगा दी है। जिसे उसमें घुसना है वह समाज नाक पर रखकर नाबदान में घुस जाता है।"[२]

परसाई उन बुर्जगों पर चोट करते है जो खुद तो फैशन के सारे कार्य करते है लेकिन युवाओं को इसके लिए मना करते है। इससे संकीर्ण और कुन्ठा का जन्म होता है। "तुम्हारे बुजुर्गवार जो स्वयं करते है उसे दूसरों के लिए वर्ज्य मानते है। ढलती उम्र का बूढ़ा बालों में खिजाब लगाता है और ताकत की गोलियां खाता है पर अगर उसकी तरूणी लड़की आइने

---

१. परसाई – बटी का सदाचार, पृष्ठ ९

२. परसाई – पगडन्डियों का जमाना, पृष्ठ ८०

के सामने ज्यादा देर खड़ी रहे तो उसे यह लगता है कि यह गलत है। रात की काली चादर ओढ़कर सब कुछ करने वाले दिन निकलने पर कैसे सभ्य बन जाते है। तुम्हारे सामाजिक जीवन का पाखण्ड है यह जिसके कारण असंख्य युवक युवती अपने जीवन को अन्त करने योग्य समझते है।"[१]

परसाई लिखते हैं कि "समाज में वह शक्ति आनी चाहिए कि सामाजिक मिथ्यावाद, असामाजिक कृत्य और समाज के लिए हानिकारक कर्मों का विरोध कर सके। तुम कहो प्रधानमंत्री अभी देश पर संकट आया है।[२]

हमारी संस्कृति का मूल स्वर है–

सर्वेनः सुखिन, सन्तु सर्वे सन्तु निराः मयः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखमाप्नयात् ।।

सबकी मंगल कामना। सब सुखी हो। यह संस्कृति लोग से आयी है और शास्त्र बद्ध हुई है। किन्तु आज यह भावना खत्म हुई है। समाज का एक सुशिक्षित डॉक्टर सोचता है क्या डल सीजन है। साला हैल्थी सीजन चल रहा है प्रैक्टिस आधी रह गयी है।"[३] परसाई अनुभव करते है कि "मानव सेवा में बहुत खतरे है मेरा दो बार घिराव हो चुका है और तीन बार पिट चुका हूँ।"[४]

---

१. परसाई रचनावली – खण्ड ६, पृष्ठ ४३
२. परसाई रचनावली – खण्ड ६,पृष्ठ ५१
३. भेंट चम्पाराम से, पृष्ठ ११३
४. भेंट चम्पाराम से, पृष्ठ १४०

साहित्य सम्बन्धी विचार

साहित्य को समाज की आवश्यकता पड़ती है क्योंकि वह केवल भोजन करके जिन्दा नहीं रह सकता है। साहित्य समाज को, अपने को समझने के लिए प्रेरित करता है। साहित्यकार सृजन तो अकेले करता है लेकिन उसके मानस में सम्पूर्ण समाज का अनुभव संशलिष्ट रहता है। साहित्य सृजन को लेकर वे कहते हैं कि "साहित्य का निर्माण कोई ईंट गारे की इमारत नहीं है जो कोई भी विशेषतः डिप्लोमा लेकर तैयार कर सकता है। यह तो एक भगीरथ प्रयास है जिसके लिए उत्साह, आत्मा की उज्ज्वलता, और पुण्य की धरोहर आवश्यक है। गंगा को पृथ्वी पर लाने की सभी की इच्छा है। पर भगीरथ बनने का प्रयास कोई नहीं कर सकता है। उनकी परिकल्पनाएं उनके जप-तप बस बादलों को चन्द बूंदें ही आसमान से जमीन पर ला पाते है संभवतः इन्हें ही वे गंगा के छीटे समझ रहे हैं।"[१]

परसाई ऐसे रचनाकारों को आगे बढ़ने का अवसर देना चाहते है जो समाज को बदलना चाहते है उसके अनुसार साहित्य में बुढ़ापा वालों के सफेद होने और झुरियां आने से नहीं होता है साहित्य में बुढ़ापे का अर्थ है नवीन चेतना को ग्रहण करने की शक्ति का लोप हो गया हो।

"मैं शाश्वत साहित्य रचने का संकल्प लेकर लिखने नहीं बैठता जो अपने प्रति ईमानदार नहीं होता। वह अनन्तकाल के प्रति कैसे हो जाता है ये मेरी समझ से परे है।"[२] साहित्य भारत में कभी व्यापार नहीं रहा। साहित्य ने यहाँ हमेशा मार्ग दर्शन का कार्य किया है "साहित्य हमारे यहाँ व्यापार कभी नहीं रहा। जो उसमें बनना चाहते है वे बेहतर है आढ़त की दुकान खोलें। यह वह धर्म रहा है जिसमें मिटना पड़ता है। कबीर की तरह घर फूँककर निकलना है।"[३]

---

१. परसाई रचनावली – खण्ड ६, पृष्ठ २४४

२. परसाई – रानी नागफनी की कहानी

३. परसाई रचनावली – खण्ड ६, पृष्ठ १९७

परसाई किसी भी बने-बनाये साँचे को तोड़ डालते है। चाहे वह कहानी हो अथवा निबन्ध। छायावाद में भी लोग अपनी सामर्थ्य के अनुसार शब्द डालकर कविता तैयार करते थे। वे प्रकृति सादृश्य विधान के साँचे में कविता करते हैं। "जीवन को विचित्र करने के लिए जीवन देखना पड़ता है, समझना पड़ता है। मानव-जीवन गणित के सूत्रों पर आधारित नहीं होता वह मनोविज्ञान के नियमों से भी बँधा नही होता। साँचे में ढला साहित्य प्राणहीन होता है।"[१] साहित्य जीवन से साक्षात्कार करता है।

राजनीतिक नेताओं की तरह साहित्यकार भी बड़े-बड़े गुटों में बँटे है वे जन आन्दोलन करते है इस पर परसाई कहते हैं- "भारतीय लेखक एक साथ दो युगों में जीता है मध्ययुग में और आधुनिक युग में वह कुम्भन दास की तरह घड़े बनाकर नहीं जीता है पर कहता है कि 'सन्तन कहा सीकरी सो काम'। वह रैदास की तरह जूते नही सीता, कबीर की तरह कपड़े नहीं बुनता, मगर बात उन्हीं के आदर्शों की करता हैं।"

यह एक छद्म क्रान्तिकारिता है, इनाम लेने की कोशिश में पीछे नहीं, अकादमियों के लाभ के लिए बराबर प्रयत्नशील अच्छी सरकारी नौकरी की बराबर तलाश मगर साथ ही यह भी सरकार लेखक को खरीद रही हैं। आप तो बाजार में खुद माल की तरह बैठे हैं और खरीदार को दोष देते है कि कमबख्त हम लोगों को खरीद रहा है। फिर खरीदार क्या सिर्फ सरकार ही है ? क्या इससे बड़े खरीदार नहीं है और क्या माल बिक नहीं रहा है।

हिन्दी में आलोचना की दुर्गति पर परसाई जी लिखते है कि आलोचना की स्थिति बड़ी दयनीय है विशेषकर आलोचकों के बारे में सोचा जाता है कि वे अपने समय के साहित्य से परिचित हो व विचार रखने में जल्दबाज न हो "पंडित हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है

---

१. परसाई रचनावली - खण्ड ६, पृष्ठ १६१

कि हिन्दी में जो पढ़ता है वह आलोचना नहीं लिखता है और जो आलोचना लिखता है वह पढ़ता नही। हमारा ख्याल है कि हिन्दी का सब काम बड़ा वैज्ञानिक है डिवीजन आफ लेबर' हो गया है।[१]

साहित्यकारों के मौसम के लिए लिखने पर परसाई अपनी लेखनी चलाते हैं" चीनी हमले के समय जो कुछ लिखा गया या तो आत्मवादी लेखकों के द्वारा या उनके द्वारा जिन्हें परसाई ने तीज-त्यौहार लेखक कहा है। ऐसा लेखक उनके अनुसार दिवाली आने पर दीपोत्सव पर लिखता है और सूरदास की जयन्ती पर लिखता है 'भारत में फिर से आजा कवि सूरदास प्यारे' स्थितियां उनके लिए बनकर आती है। राखी है, बसंतोत्सव है, होली है, और चीनी आक्रमण है कोई पर्व उससे बिना लिखे बच नहीं सकता। किन्तु इन पर्ववादियों की बात छोड़ दी जाय तो जो बड़े प्रसिद्ध लेखक है उनकी उपलब्धि क्या रही ? क्या उन्होंने जो लिखा उस सत्य का ईमानदारी से अनुभव भी किया जाय। जिन्होंने कभी युद्ध नही देखा उन्होंने युद्ध साहित्य लिखने का दावा किया।

राजनीति और साहित्य के सम्बन्ध में परसाई जी लिखते है कि "आजकल राजशक्ति और साहित्य का संघर्ष तीव्र होता जा रहा है। राजनेता सरकते हुए धीरे-धीरे साहित्य के मंच पर आसीन हो जाते हैं। कुछ पीछे के दरवाजे से घुस आते हैं लज्जा तो हमारे हिस्से में पड़ी है कि हम गाजे-बाजे के साथ साहित्य के मन्दिर में राजनीति की प्रतिमा स्थापित कर देते है। फिर नमन तो करते ही हैं जो नहीं करते उन्हें बुरा कहते है।"[१]

---

१. परसाई रचनावली - खण्ड ६, पृष्ठ १९१

२. परसाई रचनावली - खण्ड ६, पृष्ठ १९६

राजनीति सम्बन्धी विचार

परसाई मनुष्य को राजनीति से जुड़ा हुआ मानते हैं। उनका कहना है कि राजनीति हमारे जीवन का एक अंग है। जीवन एक सम्पूर्ण तथ्य है राजनीति हमारे जीवन का हिस्सा है राजनीति में बड़ी शक्ति होती है वह मनुष्य की नियति तय करने लगी है।"[१] विभिन्न प्रकार के वादो पर परसाई अपनी कलम चलाते है" गाँधीवादी और समाज वादी दोनो पगडण्डी माँगते है आसान रास्ता माँगते हैं अखबारों की सुर्खियां माँगते है, फूल मालाएं माँगते है, स्टंट मांगते हैं.......इस गरीब की रोटी छीनी जा रही है यह नारा लगाते रहो। मगर जो रोटी छीनता हैं उससे न उलझे तो समाजवाद की रस्म अदा हो गयी।"[२]

आजकल राजनीति लोगों की बपौती हो गयी। यद्यपि राजतन्त्र समाप्त होकर प्रजातन्त्र यहाँ आ गया है फिर भी उनके वंशंज ही लगातार राजनीति में प्रवेश करते रहते हैं।" सुदामा के चावल में कृष्ण कहते है कि "मेरी स्थिति तुम क्या समझोगे मैं यही नहीं समझ पाता कि कौन मेरा है और कौन पराया। जबसे मुझे यह राजपद मिला है असंख्य आदमी मेरे आत्मीय हो गये हैं। पचीस सहस्त्र भतीजे, दस सहस्त्र मौसियां, और सहस्त्रों चाचियां आ चुकी है।"[३] साहित्य और सत्ता के सम्बन्ध में वे आ चुकी है। साहित्य और सत्ता के सम्बन्ध में वे एक साक्षात्कार में कहते है। "हर रचना यथास्थिति के विरोध में होता है। सत्ता चाहे राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक या सामाजिक हो यथास्थिति वादी हो जाती है क्योंकि उसी में उसकी सुरक्षा है। लेखक इस यथा स्थितिवाद को तोड़ना चाहता है जिससे मनुष्य समाज आगे बढ़ सके और उसकी जिन्दगी बेहतर हो। यहीं लेखक और सत्ता का टकराव होता है।"[४]

---

१. सारिका, १ मार्च १९८०, पृष्ठ ३१

२. माटी कहे कुम्हार से, पृष्ठ ८२

३. परसाई – जैसे उनके दिन फिरे, पृष्ठ ३५

४. समय चेतना – अक्टूबर १९९५, पृष्ठ ३२

राजनीति में सब कुछ पूर्व निश्चित होता है। यहाँ लड़ाई भी इसलिए लड़ी जाती है क्योंकि इससे दोनों लोगों को फायदा होता है। 'जनाब भुट्टों से भेट' में वे लिखते है कि "राजनीति में सबकुछ होता है आपस में तय करके लड़ाई भी होती है"। उधर उनकी हालात खराब है इधर मेरी। क्यों न हम लोग १५ दिन की एक लड़ाई और लड़ लें एक टूर्नामेन्ट सरीखा। मैं अमेरिका से हथियार ले आऊँगा और वे रूस ले लें। फिर हम दोनों ५ साल तक जनता को बेवकूफ बनाकर मजे में राज कर सकते हैं"।[१]

'सदाचार की तावीज' में वे कैफियत में लिखते हैं कि राजनीति बहुत निर्णायक शक्ति हो गयी है । वह जीवन से बिल्कुल मिली हुई है। वियतनाम की जनता पर बम क्यों बरस रहे है ? क्या उस जनता की अपनी कुछ जिम्मेदारी है। यह राजनीतिक दॉव-पेच के बम है। शहर में अनाज और तेल पर मुनाफाखोरी कम नहीं हो सकती क्योंकि व्यापारियों के क्षेत्रों में अमुक-अमुक को चुनकर जाना है। राजनीति सिद्धान्त और व्यवहार की हमारे जीवन का एक अंग है उससे नफरत करना बेवकूफी है।"[२]

'कहाँ है भारत-भाग्य विधाता ?' में परसाई नेताओं की और करनी के आचरण को स्पष्ट करते हुए कहते हैं" लोकतन्त्र के रास्ते पर आम आदमी तो आगे बढ़ गया है क्योंकि उसका ध्यान चलने पर ही है, मगर नेता पीछे रह गये। वे एक-दूसरे को लत्ती मारकर गिराते है फिर उठते हैं, हाथ पाँव की चोट सहलाते है एक-दूसरे पर थूकते है फिर लातमार गिरते-गिराते हैं, धूल चाटते है गोया वहीं लड़ते-झगड़ते भाड झोंक रहे है जनता आगे निकल गयी। नेता जब मंच पर खड़ा होकर कहता है भाइयों, तुम्हे देश का निर्माण करना है तो लोग फुसफुसाते है इसलिए कि तुमने देश का नाश कर दिया है छात्रों की सभा में नेता कहते

---

१. सं. कमला प्रसाद – परसाई, चुनी हुई रचनाएं, पृष्ठ ३०४

२. परसाई – सदाचार की ताबीज

है तो लड़के कहते है कि इसलिए कि तुम चरित्रवान हो और सुधर नहीं सकते है।"

"राजनीतिज्ञों के ऊपर लिखते हुए वे उनका चरित्र बतलाते है। भाइयों हमारे हाथ में देश की बागडोर है। हमें महान उत्तर दायित्व निभाना है यह उत्तर दायित्व क्या है यही कि मैं मन्त्री बना रहूँ।"[१]

संस्कृति सम्बन्धी विचार

नेहरू जी ने दूसरों के विचारों को खुले दिमाग से सुनने और पढ़ने को तथा दूसरों के प्रति सहनशीलता का भाव रखने को संस्कृति का लक्षण माना है।

मनुष्य केवल बाहय उपलब्धि से सन्तुष्ट नहीं होता उसे आन्तरिक सुख की भी आवश्यकता पड़ती है। मनुष्य मंगलमय जीवन-मूल्यों को ग्रहण करना चाहता है। वह आत्मा का उदात्तीकरण और उन्नत भी चाहता है। यही संस्कृति का रूप है। परसाई मानते है कि "संस्कृति एक अनवरत मूल्य धारा है। वह जातियों के आत्म सचेत अस्तित्व से आत्मबोध से आरम्भ होती है। और मुख्य धारा में संस्कृति की दूसरी धारायें मिलती जाती है। उनका समन्वय होता जाता है, इसलिए किसी जाति की संस्कृति उसी मूलरूप में नहीं रहती बल्कि समन्वय से वह अधिक सम्पन्न अधिक व्यापक होती है।"[२] परसाई जनता की संस्कृति को ही संस्कृति का वास्तविक रूप मानते हैं। "संस्कृति वास्तव में लोक संस्कृति है वह लोक से पैदा होती है, और लोक में व्याप्त होती है। सामान्यजन की संस्कृति होती है और छोटे अभिजात्य वर्ग की दिखावट नहीं होती पंडित नेहरू ने लिखा है कि" भारत की समन्वय संस्कृति है। यह समन्वय लोक जीवन में है। रवीन्द्रनाथ ठाकुर की एक कविता है भारत तीर्थ इसमें कहा गया है, "भारत महा मानवता का पारावर है। ये मेरे ह्दय इस पवित्र तीर्थ में

---

१. परसाई - चुनी हुई रचनाएं - सं. कमला प्रसाद, पृष्ठ १४७

२. परसाई - चुनी हुई रचनाएं भाग-२ - सं. कमला प्रसाद, पृष्ठ ४३६

अपनी आँखे खोलो यहाँ आर्य है, यहाँ अनार्य है यहाँ द्रविंड और चीनी वंश के लोग भी है। शक हूण पठान और मुगल न जाने कितनी जातियों के लोग इस देश में आये और सबके सब एक ही शरीर में समाकर एक हो गये।"[१]

परसाई अपनी संस्कृति की बड़ाई तो करते है लेकिन उसकी मूल्यहीनता पर भी चोट करते हैं "साधो बात बहुत गम्भीर है वो विदेशी भारत को अभी तक समझ ही नहीं पाये है भूल जाते है कि हमारी हजारों साल की महान संस्कृति है और यह समन्वित संस्कृति यानि यह संस्कृति द्रविड, आर्य, ग्रीक, मुस्लिम आदि संस्कृतियो के समन्वय से बनी है। इसलिए इलायची में कचरे का समन्वय करेंगे, गेहूँ में मिट्टी का, शक्कर में सफेद पत्थर का, मक्खन में स्याही सोख कागज का। जो हमारे माल में मिलावट की शिकायत करते हैं वे नहीं जानते हैं 'समन्वय है जो हमारी संस्कृति की आत्मा है। और चाहे कोई एक हमसे एक पान भी न खरीदे, पर हम अपनी प्यारी प्राचीन संस्कृति को नहीं छोड़ सकते"।[२]

निष्कर्ष

परसाई का लेखन सम्पूर्ण भारतीय समाज का जीवित रूप है। जहाँ समाज का कोई कोना परसाई की समग्र दृष्टि से छूटा नहीं है। वे जीवन को सुधारने के लिए व्यक्ति को नहीं पूरी समाज व्यवस्था को बदलने की बात करते है। वे कल्पना जीवी नहीं यथार्थवादी रचनाकार थे। उन्होंने धर्म, राजनीति, शिक्षा, अर्थ, संस्कृति, साहित्य सभी क्षेत्रों की विद्रूपता ओं पर अपनी लेखनी चलायी है। राजनीति के सम्बन्ध में परसाई ने अधिक व्यंग्य रचा है। क्योंकि वे राजनीति को मनुष्य का नियन्ता मानते थे। परसाई के लेखन-संसार में विधाओं की विविधता के साथ विचारों की भी विविधता है।

---

१. परसाई – चुनी हुई रचनाएं भाग-२ – सं. कमला प्रसाद, पृष्ठ ४३९

२. परसाई – सुनो भाई साधो, पृष्ठ ५६

परसाई का रचना संसार

परसाई का लेखन समाज का सच्चा आइना है। वे भविष्यकर्ता भी है। जबलपुर के प्रहरी १९४७ से परसाई का लेखन शुरू हुआ। इसमें उनकी पहली कहानी 'पैसे का खेल' छपी तब से लगभग ९५ तक उन्होंने विभिन्न प्रकार की पत्र–पत्रिकाओं के अलावा दैनिक पत्रों में नियमित रूप से कालम लिखकर समाज को जागृत ही किया और अपने रचनाकार का कद स्वातन्त्रयोत्तर रचनाकारों में प्रतिष्ठित करा लिया। रवीन्द्र नाथ त्यागी परसाई के अवदान के विषय में लिखते है कि "आजादी के पहले का हिन्दुस्तान जानने के लिए सिर्फ प्रेमचन्द्र ही पढ़ना काफी है। उसी तरह आजादी के बाद के भारत का पूरा दस्तावेज परसाई की रचनाओं में सुरक्षित है।"

परसाई का रचना संसार इस प्रकार है –

१. हॅसते है रोते है – १९५६

२. तबकी बात और थी – १९५६

३. भूत के पॉव पीछे – १९६२

४. जैसे उनके दिन फिरे – १९६३

५. बेइमानी की परत – १९६५

६. सुनो भाई साधो – १९६५

७. पगडण्डियों का जमाना – १९६६

८. सदाचार का ताबीज – १९६७

९. उल्टी सीधी – १९६८

१०. और अन्त में – १९६८

११. निठल्ले की डायरी – १९६८

१२. ठिठुरता हुआ गणतन्त्र – १९७०

१३. अपनी अपनी बीमारी – १९७२

१४. तिरक्षी रेखाएं – १९७२

१५. वैष्णव की फिसलन – १९७६

१६. मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं – १९७७

१७. एक लड़की पाँच दीवाने – १९८०

१८ विकलांग श्रद्धा का दौर – १९८१

१९. पाखण्ड का आध्यात्म – १९८२

२०. दो नाक वाले लोग – १९८२

२१. काग भगौड़ा – १९८३

२२. प्रतिनिधि व्यंग्य – १९८३

२३. तुलसीदास चन्दन घिसै – १९८६

२४. कहत कबीर – १९८८

२५. हम इस उम्र से वाकिफ है – १९८७

२६. परसाई रचनावली – १९८५

२७. ऐसा ही सोचा जाता है – २०००

परसाई का स्वतन्त्र लेखन १९५७ से प्रारम्भ हुआ। १९५६ में 'वसुधा' मासिक पत्रिका निकालना प्रारम्भ किया जो आगे चलकर आर्थिक तंगी के कारण बन्द हो गया। परसाई 'प्रहरी' में 'नर्मदा के तट से' शीर्षक अर्न्तगत 'अद्योर भरैव' नाम से लिखते थे'। इसके अलावा परसाई इन्दौर अंक के नई दुनिया में 'सुनो भाई साधो' साप्ताहिक लेख माला लिखना प्रारम्भ किया। नई कहॉनियाँ में 'उलझी-उलझी' और 'पाँचवा कालम' लिखा।

परसाई ने १९६५ में 'जनयुग' में 'ये माजरा क्या है' साप्ताहिक लेख माला 'आदम' नाम से, एक अन्य लेखमाला 'सुनो भाई साधो' कबीर नाम से लिखी। 'सारिका' में 'कबिरा खड़ा बाजार में' 'कथायात्रा में' रिटायर्ड भगवान की कथा, परिवर्तन में अरस्तू की चिट्टी, करन्ट में 'देख कबीरा रोया' तथा 'माटी कहे कुम्हार से' कालम लिखा। १९८५ से 'तुलसीदास चन्दन घिसै' 'सारिका में लिखना प्रारम्भ किया। 'गंगा' में नियमित रूप से संस्मरण स्तम्भ लिखते रहे।

परसाई की प्रकाशित-अप्रकाशित सभी रचनाओं को एकत्रित करके 'परसाई रचनावली का प्रकाशन १९८५ में राजकमल से सं कमला प्रसाद तथा अन्य लोगों के सहयोग से किया गया है। परसाई रचनावली छः खण्डों में विभाजित है। प्रथम खण्ड में लघु कथात्मक रचनाएं, कहाँनियां रेखाचित्र, रिपोतार्ज, संस्मरण आदि है। डॉ. धनंजय वर्मा ने इसमें 'परसाई की कहॉनियां समकालीन हिन्दुस्तान का केलिडोस्कोव' नाम से लेख लिखा। इसमें कुल ९८ रचनाएं है। परसाई रचनावली के खण्ड दो में 'रानी नागफनी की कहानी' 'तट की खोज' दो उपन्यास कुछ कहानियां और लघु कथाएं है। इसमें ४४ कहाँनियां तथा ६६ लघुकथाएं है। 'ज्वाला और जल' नामक एक अन्य उपन्यास पाण्डुलिपि न मिलने के कारण छटा नहीं सका। रचनावली के खण्ड तीन में ललित निबन्धों और पत्रात्मक निबन्धों का संग्रह है। इनकी संख्या क्रमशः ९३ और ३४ है। परसाई रचनावली खण्ड चार में कुल एक सौ अट्ठावन निबन्ध है जिसमें राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय के साथ, आत्मपरक और वैचारिक निबन्ध संकलित है इसमें परसाई का पहला निबन्ध 'इन्डियनटाइम' भी है जो २० सितम्बर १९५७ को 'प्रहरी' में छपा था। परसाई रचनावली खण्ड पॉच में दो स्तम्भों 'ये माजरा क्या है' तथा 'सुनो भाई साधो' की सामग्री संकलित है इसमें क्रमशः सतम्भ के अठहत्तर और एक सौ आठ निबन्ध है। परसाई रचनावली के अन्तिम खण्ड में कुछ प्रारम्भिक लेख, कहाँनियां, निबन्ध, समय-समय पर छपी उनकी पुस्तकों की भूमिकाएं, संपादित आलेख, साक्षात्कार व्याख्यान, एक एक दीर्घ

कथा 'रिटायर्ड भगवान की कथा' आदि शामिल है १९५७ में 'परिवर्तन' में 'अरस्तू की चिट्ठी' नाम से लिखा गया नियमित स्तम्भ भी इसी खण्ड में संकलित है। इसमें कुल एक सौ पैतीस शीर्षक है।

परसाई के उपन्यास और सामाजिक अर्न्तविरोध

भारतीय सामाजिक संरचना इस कोटि की है कि स्वतन्त्रता के पश्चात भी तमाम प्राचीन सामाजिक तत्व उसी प्रकार से विद्यमान है। भारतीय समाज में सामाजिक चेतना का विकास तो हुआ। लेकिन परम्पराएं एवं उसकी मानसिकता उसे पुरानी पीढ़ी के साथ ही जीने के लिए विवश करती है। इसको लेकर परसाई ने अपनी सभी रचनाओं में व्यंग्य किये है।

स्वतन्त्रता पूर्व के समय भारत में विभिन्न कारणों से एक मध्य निम्न वर्ग का उदय हुआ। जो आधुनिकता की तरफ दौड़ता था लेकिन पीछे से परम्परा उसकी पुकार करती थी जिससे वह मुड़ जाता था। इस कारण वह हमेशा अर्न्तविरोध में जीता था, कुण्ठा से ग्रसित था। मध्य वर्ग विभिन्न वर्गों के मनुष्यों का एक समुदाय है यह वर्ग समाज का एक उल्लेखनीय प्रेरक भी है। संघर्ष और समाज सुधार ही इस वर्ग का उद्देश्य है। एक तरफ नैतिक आदर्शों के बल पर समाज की विसंगतियों से लड़ता है। तो दूसरी तरफ असन्तोष की पीड़ा से ग्रसित हो खुद विसंगति का प्रर्याय बन जाता है।

परसाई ने तट की खोज' 'ज्वाला और जल' तथा 'रानी नागफनी की कहानी' तीन उपन्यास लिखे।

(१) तट की खोज – परसाई का यह लघु उपन्यास शिक्षित मध्यम वर्गीय समाज के विखण्डित आदर्शों का यथार्थ चित्र है। महेन्द्र नाथ और शीला के सम्बन्ध काल्पनिक भावुकता से जुड़ता है लेकिन जीवन संघर्ष की कटुता और यथार्थ की भयंकरता के सामने वह टूट जाता है।

उपन्यास की नायिका शीला प्रेम को छोड़कर समाज की चुनौती स्वीकार करते हुए अकेले जीवन संग्राम में उतर पड़ती है। 'तट की खोज' उपन्यास का मूल प्रश्न नारी की विवशता और प्रेम की विफलता है। कथा के प्रारम्भ में शीला उस भारतीय युवती का प्रतिनिधित्व करती है। जो पढ़ लिखकर अपने विवाह की राह देख रही है। परसाई लिखते हैं "हमारे समाज में लड़कियाँ शिक्षा प्राप्ति के उद्देश्य से नहीं वरन लड़कोंवालो की आकर्षित करने के लिए पढ़ती है।"[१] भारतीय मध्यम वर्गीय समाज के नीरिहिता का परसाई शीला तथा उसके माँ–बाप द्वारा प्रदर्शित किया है बार–बार पिता के लौट आने पर शीला दुःखी होती थी, इसप्रकार सर्वगुण–सम्पन्न होने के बावजूद शीला की शादी नहीं हो पाती इसी बीच शीला के पड़ोस में रहने वाले महेन्द्रनाथ ने शीला को एक प्रेम–पत्र दिया। प्रेमपत्र पाकर शीला एक सामान्ययुवती की तरह उसके प्रेम के सपने देखने लगती है। एक आकस्मिक घटना के कारण शीला का गुण्डों के डर से महेन्द्रनाथ के घर में घुसना तथा महेन्द्रनाथ का कायरता पूर्ण व्यवहार शीला की आत्मिक शक्ति को मजबूत करती है। महेन्द्रनाथ की दकियानूसी सोच से अलग होकर आदर्शों एवं कोरे प्रेम का त्याग कर शीला तट की खोज में आगे निकलती है। उपन्यास के दूसरे हिस्से के रूप में शीला की सहेली विमला के भाई मनोहर के झुकाव को शीला के प्रति प्रदर्शित करने वाला हैं मनोहर शीला के प्रति प्रेम का नहीं बल्कि करूणा का व्यवहार करता है। अन्ततः शीला महेन्द्र और मनोहर को छोड़कर अपनी निराशा और कुण्ठा के साथ अन्य स्थान पर चली जाती है और एक नया जीवन प्रारम्भ करती है।

शीला एक सामान्य मध्यवर्गीय दृढ़ निश्चयी बेसहारा युवती है, जो अपने अनुभवों से यह जानती है कि बिना माँ की जवान बेटी ऐसी फसल है जिसका रखवाला नहीं और जिसे

---

१. परसाई – तट की खोज, पृष्ठ १४

२. परसाई – सुनो भाई साधो, पृष्ठ ५६

वासना के ऊजाड़ू पशु चरने के लिए स्वतंत्र है।"[१]

शीला के चरित्र में जहाँ प्रारम्भिक अवस्था में किशोर उम्र की रूमानियत है तो प्रौढ़ अवस्था में प्रेम से मोह भंग की स्थिति के प्रति सकारात्मक भाव है। इस मोह भंग से उभर कर शीला प्रौढ़ बनकर तट के किनारे खड़ी दिखती है।

महेन्द्रनाथ आदर्शवादी पाखण्डी नवयुवक हैं जो विसंगतियों पर बड़ी तीखी अलोचना लिखता है। लेकिन स्वयं उसी को जीता है। महेन्द्रनाथ कलमवीर तो हैं लेकिन अन्दर से कायर बेइमान दिखावटी और कमजोर है। अन्य पात्रों में मनोहर एक सदाशय उदार युवक है। तो शीला के पिता रिटायर विवश एक जवान बेटी के बाप।

इस उपन्यास की प्रमुख पात्र शीला का चरित्र प्रेमचन्द्र के सुमन या शरतचन्द्र की कमल या जैनेन्द्र की मृणाल से हटकर रचा हुआ चरित्र है। तट की खोज की शीला किसी की दया या सहानुभूति पर नहीं जीना चाहती है वह अपने बनाये रास्ते पर चलना प्रारम्भ करती है। इस प्रकार कथ्य और शिल्प की दृष्टि से यह एक सफल उपन्यास कहा जा सकता है।

(२) ज्वाला और जल – परसाई के इस उपन्यास का प्रकाशन १९५८ ई. में भारतीय पुस्तक मन्दिर कलकत्ता द्वारा हुआ। इस लघु उपन्यास का नाटक विनोद एक संवेदनशील लड़का है शराबी पिता द्वारा लगातार माँ की दुर्दशा करते देख कर विनोद प्रतिशोध की मूर्ति बन जाता है। वह पिता के प्रति नफरत रखता है। शहर में आवारगर्दी करता है अन्ततः वकील साहब, उनकी माँ का स्नेह तथा सुषमा का प्यार पाकर उसकी प्रतिशोध की ज्वाला शान्त होती है।

---

१. परसाई – तट की खोज, पृष्ठ १६

परसाई इस उपन्यास में असहज दिखते है। वकील साहब द्वारा कथा को मैं शैली में प्रस्तुत किया गया है। इस कारण यह विवरणात्मक उपन्यास हैं कथ्य और शिल्प दोनों दृष्टियों से यह उपन्यास खास महत्व नहीं रखता है।

(३) रानी नागफनी की कहानी - रानी केतकी की कहानी के शीर्षक की लय में परसाई ने 'रानी नागफनी की कहानी' नामक उपन्यास लिखा। १९६२ में प्रकाशित स्वतन्तयोत्तर व्यंग्य उपन्यासों में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। इसमें समाज, शिक्षा, राजनीति आदि विषय पर व्यंग्य किया गया है। इस उपन्यास के विषय में परसाई लिखते है। यह एक व्यंग्य कथा है। फैन्टासी के माध्यम से मैने आज की वास्तविकता के कुछ पहलुओं की अलोचना की है।"[१] बालेन्दुशेखर तिवारी ने इस उपन्यास के महत्व को इन शब्दों में रेखांकित किया है "व्यंग्य की अदभुत समझ और रचनाशीलता की मजबूत पकड़ के सहारे हरिशंकर परसाई ने इस व्यंग्य उपन्यास में कथा के प्राचीन आश्रय और वर्णन के घिसे हुए शिल्प का सुन्दर समन्वय प्रस्तुत किया है.....इसमें सन्देह नहीं कि परसाई की व्यंग्य क्षमता ने 'रानीनागफनी की कहानी' को सामाजिक कुव्यवस्था और व्यापक विसंगतियों का संन्दर्भ ग्रन्थ बना दिया है।"[२]

रानी नागफनी की कहानी का वातावरण संवाद और माहौल तथा इसके पात्र ऊपरी तौर पर मध्ययुगीन सामन्ती से दिखते है लेकिन यह समकालीन सामाजिक यथार्थ है। इस सामाजिक अन्तर्विरोध और विद्रूपता को कुँवर अस्तभानं, रानी नागफनी, मुफतलाल, करेलामुखी, राजानिर्बल सिह, जोगी प्रपंचगिरि, मुख्य अमात्य-गोवर्धनदास, भयभीत सिंह और राखण सिंह आदि पात्रों के माध्यम से व्यक्त किया गया है। परसाई ने शिक्षा व्यवस्था, अर्थ प्रणाली

---

१. परसाई - रानी नागफनी की कहानी, लेखकीय

२. बालेन्दु शेखर तिवारी - हिन्दी का स्वतंत्र्योत्तर हास्य एवं व्यंग्य, पृष्ठ १५३

सामाजिक मूल्य, राजनैतिक कदाचरण, घूसखोरी तथा भ्रष्टाचार के ऊपर इस उपन्यास में तीखा व्यंग्य किया है।

पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के कारण जहाँ पुरानी परम्परायें टूट रही है वहीं नये मूल्य भी निर्मित हो रहे है। वर्तमान परिवेश में नारी उपभोग्य वस्तु है। राज्य हथियार बेचने के कारखाने है, शिक्षा घूसखोरी का अड्डा इस उपन्यास में युद्ध के वास्तविक कारणों के ऊपर भी एक गम्भीर प्रकाश पड़ता है। परसाई ने व्यक्तित्व के विघटन के साथ–साथ पतनशील सामाजिक व्यवस्था और विघटति पारिवारिक मूल्यों के अलावा हमारे समय की आर्थिक, राजनीतिक स्थितियों पर कठोर प्रहार किया है। यह उपन्यास प्रजातन्त्रिक व्यवस्था तथा सामन्तीमन की सड़ान्ध कहानी है, जिसके कारण सम्पूर्ण भारतीय जीवन पद्धति पस्त हो गया है। यद्यपि उपन्यास का मूल स्वर सामाजिक राजनैतिक व्यवस्था के ऊपर व्यंग्य है। लेकिन राजनैतिक पाखण्ड दोगलापन प्रशासकीय भ्रष्टाचार तानाशाही प्रवृत्ति की नौकरशाही भी व्यंग्य के शिकार बने है। उपन्यास में कुवर अस्तभान का विवाह, मुफतलाल की नौकरी, पड़ोसी राज्य की राजनीति, विवाह के टेण्डर आदि कुछ ऐसे प्रसंग है जो समाज की कुव्यवस्था को उठाते है।

फैन्टेसी शिल्प के माध्यम से सामाजिक, राजनैतिक व्यवस्था के शोषण और पाखण्ड को इस उपन्यास में चित्रित किया गया है। इस कथा का उद्देश्य अस्तभान की कथा कहना नहीं है, बल्कि उस सामाजिक कैद स्थल को दिखलाना है जहाँ पूरा समाज जकड़ा हुआ है।

इस प्रकार संक्षेप में कहा जा सकता है कि परसाई ने फैन्टेसी शैली में एक ऐसे उपन्यास की रचना की जो हमारे समाज की वास्तविकता की प्रखर व्यंग्यात्मक आलोचना है।

परसाई की कहानियां

स्वतन्त्र्योत्तर कहानी विधा में परसाई एक प्रमुख नाम है। हर विधा के कुछ अपने शास्त्र और ढाँचे होते हैं लेकिन हर समय कोई कबीर, कोई निराला, कोई मुक्तिबोध और कोई परसाई आकर उस साँचे को छिन्न–भिन्न कर देता है तथा अलोचना के सारे प्रचलित प्रतिमानों को बदलने के लिए विवश भी करता है।

इस समय के मूल्य संक्रमण, विपर्यय और स्खलन की स्थिति में परिवर्तन होता दिखाई देता है। मधुरेश लिखते है कि "राजनीतिक भ्रष्टाचार और सामाजिक विसंगतियों की जितनी स्पष्ट पहचान हरिशंकर परसाई की कहानियों में मिलती है उतनी उस दौर के कदाचित किसी दूसरे कहानी कार में नहीं मिलती।"[१] परसाई लेखन को सामाजिक कर्म के रूप में स्वीकार करते है। साहित्यकार और सामाजिक अनुभव के अन्तर सम्बन्धों की व्याख्या करते हुए लिखते है, "साहित्यकार का समाज से दोहरा संबंध है वह समाज से अनुभव लेता है अनुभव में भागीदार होता है बिना सामाजिक अनुभव के कोई सच्चा साहित्य नहीं लिखा जा सकता– लफ्फा बाजी की जा सकती है। साहित्यकार सामाजिक अन्वेषण भी करता है। उन छिपे अंधेरे कोने का अन्वेषण करता है। जो सामान्य चेतना के दायरे में नहीं आते इन सामाजिक अन्वेषणों का विश्लेषण करता है कारण और अर्थ खोजता है उन्हें संवदेना के स्तर तक ले जाता है। और उन्हें रचनात्मक चेतना का अंङ्ग बनाकर रचना करता है। और फिर समाज से पायी उस वस्तु को रचनात्मक रूप देकर समाज को लौटा देता है। इस तरह साहित्य का एक सामाजिक कर्म हो जाता है।"[२]

नई कहानी ने इसी सामाजिक सरोकार को मानकर कार्य करना प्रारम्भ किया। कमलेश्वर

---

१. सं. कमला प्रसाद – आँखन देखी, पृष्ठ २४६

२. पूर्वग्रह अंक १०, पृष्ठ ४

ने एक स्थान पर लिखा "हर लेखक ने अपने अनुभूत जीवन की निरन्तरता मे जीवन खण्डो को उठाकर अभिव्यक्ति दी है। रेणु, राकेश, राजेन्द्र यादव, भीष्म साहनी, हरिशंकर परसाई, अमरकान्त, रमेश वछी, मार्कण्डेय, शिवप्रसाद सिंह, मन्नू भण्डारी, शैलेश मटियानी, ऊषा प्रियंवदा, मधुकर गंगाधर, राजेन्द्र अवस्थी, शानी, शरदजोशी जैसे सशक्त लेखकों ने नये कहानी को जीवन्ता और विविधता दी है। परसाई नई कहानी को कहानी का विकसित रूप मानते है। उन्होंने मध्यम वर्गीय कुण्ठा, एकाकीपन, विद्रोह और संवेदनहीनता की भावना के विपरीत भोगे हुए यथार्थ, गहरी मानवीय संवेदना और अनुभव की प्रमाणिक राजनैतिक धार्मिक और आर्थिक क्षेत्रों की सच्ची तस्वीर साहित्य के क्षेत्र में व्यंग्य विधा द्वारा सच्चे रूप में चित्रित किया। परसाई ने व्यंग्य विधा में महत्वपूर्ण कहानियां लिखी, 'भोलाराम का जीव', 'भूत के पाँव पीछे', 'सदाचार की तावीज', 'जैसे उनके दिन फिरे' व्यंग्य विधा की उत्कृष्ट कहानियाँ है।

परसाई का कथा वैशिष्टय

आजादी के बाद सामाजिक आर्थिक तथा पूँजीवादी व्यवस्था के कारण जनता में भीषण आक्रोश व्याप्त था। इस समय आजादी के लिए अपना सब कुछ समाप्त कर देने वाले लोग अधिक परेशान थे। एक वर्ग और था जो राजनीतिक चेतना की करवटें बदल रहा था मध्यम वर्ग। परसाई ने मध्यम एवं निम्न मध्यम वर्ग के लोगों को आधार बनाकर कहानियाँ लिखना प्रारम्भ किया। परसाई की कहानियों में उदासीनता आत्मलाप और नाकारात्मक भाव बोध नहीं है यहाँ गहरी मानवीय संवेदना है। परसाई की कहाँनियों के पात्र कभी जीवन की भीख मँगाते नजर नहीं आते। उन्होंने कहानियों के माध्यम से समाज की विसंगतियों को उभारने का प्रयास किया हैं परसाई की सम्पूर्ण कहानियों को निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत वर्गीकृत किया जा सकता है।

राजनीति से सम्बन्धित व्यंग्य कथाएं

परसाई के व्यंग्य का मूल स्वर ही राजनीति है' भेड़ और भेड़िए' में बूढ़े सियार के प्रतीक पूँजीपति नेता को भेड़ का सेवन करते हुए दिखलाया है। 'ग्रान्ट अभी तक नहीं आयी' में अध्यापकों को मन्त्री के तलुवे चाटते हुए दिखलाया गया है। 'राजनीतिक बँटवारा' में पुराने राजनीतिज्ञ अपने लोगों को पार्टी में शामिल करवा दे है जिससे उनका फायदा होता रहे। 'लोहियावादी सामजवादी' में एक अनुयायी नेहरू की उल्टी तस्वीर टॉग कर शीर्षसन की मुद्रा में देखता है। 'सज्जन दुर्जन और कांग्रेस जन में आदमी का एक अलग वर्ग कांग्रेस जन को बनाते हुए दिखलाया गया है। 'प्रजावादी समाजवादी' में स्तरहीन मानसिकता का चित्रण किया गया है। 'चीनी डॉक्टर भागा' में एक योग्य दन्त विशेषज्ञ, चीनी डाक्टर को युद्ध के समय षडयन्त्र करते दिखलाया गया है।

'विकलांग राजनीति' लेखक की टूटी टांग के ऊपर की गयी राजनीतिक चर्चा हैं 'घुटन के पन्द्रह मिनट' में संसद सदस्य और साहित्यकार एक सरकारी दफ्तर में कुछ समय के लिए घुटते रहते है। 'बैताल की छब्बीसवीं कथा' 'बैताल की सत्ताइसवीं कथा' तथा 'बैताल की अटठ्इस्वी कथा' में गाँधी के हृदय परिवर्तन को आधार बनाया गया है। 'इतिश्री रिसर्चाय' में बुद्धिजीवी और राजनेता के बीच मिलीभगत को दर्शाया गया है।

'मुन्डन' संसदीय कार्य प्रणाली को व्यक्त करने वाली कहानी है जिसमें ऊल–जुलूल विषयों पर ही चर्चा होती रहती हैं 'भोलाराम का जीव', 'जैसे उनके दिन फिरे' 'जिसकी छोड़ भागी' आदि कहाँनियां भी इसी कोटि की है। 'नगर–पालक' सत्ता के माध्यम से धन्धा करने की राजनीति को व्यक्त करती है। 'इतिहास का सबसे बड़ा जुआ' राजनीति की दुश्प्रवृत्ति को आधार बनाकर व्यक्त की गयी कहानी है। इस कड़ी में अनेक कहानियां है।

'त्रिशंकु वेचारा', लंका विजय के बाद', 'पहला पुल', 'त्रिशंकु बेचारा' आदि कहाँनियों

में पौराणिक कथाओं को आधार बनाकर वर्तमान विसंगतियों का पर्दाफाश किया गया है।

सामाजिक व्यंग्य सम्बन्धी कहाँनियां

'वह क्या था' एक ऐसे व्यक्ति की कहानी है जिसमें किसी भी प्रकार की भावना का स्रोत नहीं फूटता। 'आसुविधा भोगी' ऐसे साहित्यकार की कहानी है जो खुद सुविधा भोगता है और कहता है कि दूसरा भोग रहा है। 'पुराना खिलाड़ी' एक ऐसे राष्ट्रभक्त की कहानी है जो इसीके माध्यम से दिन काट रहा है। 'तटस्थ' ऐसे लोगों के ऊपर व्यंग्य है। जो किसी भी प्रभाव में नहीं आते है। 'समय पर मिलने वाले' ऐसे लोगों की कहानी है। जो हमेशा लेट–लतीफ जीवन जीने के आदी है 'एक जोरदार लड़के की कहानी' उन नवयुवकों की कहानी है जो प्रेमिका के सामने बड़ी–बड़ी हाँकता है लेकिन हकीकत का सामना करते ही घबड़ा जाता है। 'एक मध्य वर्गीय कुत्ता' में उच्च और निम्न वर्ग के बीच फॅसे मध्यम वर्गीय जीवन की कहानी हैं जो दिखावा तो करता है लेकिन जीता कुछ और है। 'दो नाक वाले लोग' उन गृहस्थों के ऊपर व्यंग्य है जो कर्ज लेकर प्रतिष्ठा बढ़ाना चाहते है। 'शर्म की बात पर ताली पीटना' में शर्म की बात पर भी ताली पीटने वालो के ऊपर व्यंग्य किया गया है। 'शवयात्रा का तौलिया' 'सड़े आलू का विद्रोह' मेरी अक्ल का बाल' 'फेमिली प्लानिंग' वे सुख से नहीं रहे' 'चार बेटे' 'आत्मज्ञान क्लब' 'मन्नू भैया की बारात 'प्रेमियों की वापसी' 'भीतर का घाव' 'बारात की वापसी' आदि कहाँनियों में समाज की विसंगतियों को लक्ष्य करके व्यंग्य किया गया है।

परसाई की शुरू की कहानियों में जैसे 'पैसे का खेल' (परसाई की प्रथम कहानी) 'किताब का एक पन्ना' 'पड़ोसी के बच्चे', 'दुख का ताज', 'क्या कहा' आदि में व्यंग्य की धार उतनी तीखी नहीं है। बल्कि ये कहाँनियां भावुक मन से लिखी गयी कहाँनियां है। परसाई की कुछ अन्य प्रसिद्ध कहाँनियां जिनमें सामाजिक विसंगतियों को लक्ष्य बनाकर व्यंग्य किया

गया है। 'एक सुपर मैंन' 'छोटी सी बात' 'एक फिल्म कथा', 'देश भक्ति का पालिश', 'आशंका पुत्र' 'कप्तान साहब' 'सेवा का शौक' 'हीरे के भीतर', 'स्मारक' 'खाली मकान' 'जिन्दगी और मौत' 'सामाजिक की डायरी' 'स्वर्ग से नरक' 'बदचलन' 'सूअर' 'जाति', 'सुशीला', दण्ड आदि जो समाज के हर कोने की विसंगतियों को प्रकट करने में पूरी तरह सक्षम है।

धार्मिक कहानियाँ

'सत्य–साधक मण्डल' में धर्म के आड़ में अपने स्वार्थ की पूर्ति को रेखांकित किया गया है। 'नंबर दो की आत्मा' में साधुओं के ढोंग को चित्रित किया गया है। 'मौलाना का लड़का पादरी की लड़की' धार्मिक शोषण गठजोड़ की कहानी है। 'टार्च बेचने वाले' में तथाकथित धर्म के ठेकेदारों के ऊपर व्यंग्य किया गया है। 'कबीर की बकरी 'भक्तों में मारपीट', 'पाठक जी के केश' 'मेनका की वापसी' आदि में धार्मिक पाखण्ड तथा दिखावे को आधार बनाकर व्यंग्य किया गया है। 'साधना का फौजदारी अन्त' कहानी में ऐशोआराम की जिन्दगी व्यतीत करने वाले साधुओं के ऊपर व्यंग्य किया गया है। 'घोषित को नहीं दीनिह चादरिया' में उन साधुओं के ऊपर व्यंग्य है जो शिष्यों को माया से दूर रहने का उपदेश देते है लेकिन खुद उसी से चिपके रहते है।

अपनी विभिन्न कहानियों के माध्यम से परसाई धाम्रिक व्याभिचारिता, दिखावे कर्मकाण्ड तथा असंगतवातों को दिखलाने में सक्षम हुए है।

शैक्षिक एवं साहित्यक कहानियाँ

एकलव्य ने गुरू को अगूँठा दिखाया कहानी में पौराणिक कथा को आधार बनाकर शिक्षा की विसंगतियों को रूपायित किया गया है। रिसर्च का चक्कर में उन आचार्यों के ऊपर व्यंग्य है जो शोधार्थियों से अपनी स्वार्थ पूर्ति करवाते है। 'वे बहादुरी से बिके' में उन लेखकों

के ऊपर व्यंग्य किया गया है जो अनीति द्वारा अधिक पैसा कमाना चाहते हैं। 'अपने-अपने इष्टदेव' साहित्यक विसंगति को चित्रित करने वाली कहानी है। 'शिक्षकों का कल्याण', 'कबीर समारोह क्यों नहीं हुआ' 'अध्यापकों के आन्दोलन', साहित्य में ईमानदारी', समाजवादी ढाँचे में साहित्य' आदि शैक्षिक एवं साहित्यिक विसंगतियों को प्रगट करने वाली महत्व पूर्ण कहाँनियां है।

कहानी तत्व की दृष्टि से परसाई की कहाँनियों भले ही उचित प्रतीत न होती हों, लेकिन कथ्य की दृष्टि से उनकी कहाँनियां समय को जीती है। राजेन्द्र यादव ने अपनी पुस्तक 'कहानी स्वरूप और संवेदना' में लिखा है, "जिन लेखकों ने अशुभ या सुन्दर पर तीखा व्यंग्य किया है उसमें दुर्भाग्य से दो ही नाम है हरिशंकर परसाई, शरद जोशी।"[१]

परसाई के निबन्ध

निबन्ध भारतेन्दु युगीन विधा का स्वरूप हैं भारतेन्दु के समय का निबन्ध व्यंग्य की धार लिए हुए था। तो द्विवेदी युग का निबन्ध बौद्धिक प्राण ग्रहण किये था। प्रसाद व शुक्ल के समय का व्यंग्य भाव प्रधान अथवा अन्तर्मुखी चिन्तन पर आधारित था। स्वतन्त्रोत्तर निबन्ध, व्यंग्य की धार के साथ विषय की विराटता में प्रवेश लिया। परसाई कहानी और उपन्यास से होते हुए निबन्ध विधा में आकर रूक गये। नामवर सिंह परसाई के विषय में कहते हैं कि "परसाई के बारे में एक बात कहूँ जिसकी जाँच की जानी चाहिए कि परसाई जी क्रमशः कहानी की दुनिया छोड़ते हुए उन निबन्धों की ओर बढ़ने लगे जो घटनाओं को केवल उदाहरण के रूप में लिया करते थे। मुख्यतः उनका ध्यान निबन्धों की ओर गया परसाई को आज भी याद किया जाएगा तो उनके तेज तर्रार कुटीले निबन्धों के कारण किया जायेगा।"[२] 'बेईमानी की परत' पुस्तक में परसाई स्वीकार करते हैं कि, "कहानी के साथ ही

---

१. राजेन्द्र यादव – कहानी स्वरुप और संवेदना, द्वितीय सं. पृष्ठ ९०

२. पहल–७ प्रथम संस्करण, पृष्ठ १७–१८

मैं शुरू से निबन्ध लिखता रहा हूँ और यह विधा अपनी प्रकृतिगत स्वछन्दता तथा व्यापकता के कारण मुझे बहुत अनुकूल प्रतीत हुई है। इनकी संभावनाओं का कितना उपयोग कर पाया हूँ। यह दूसरी बात है। इतना जरूर जानता हूँ कि निबन्ध लिखते हुए मुझे सार्थकता और संतोष का अनुभव हुआ है।"[१]

हरिशंकर परसाई ने राजनैतिक, सामाजिक, साहित्यिक एवं शैक्षिक विसंगतियों पर तीखा व्यंग्य निबन्ध लिखा है। इन विषयों परसाई सबसे अधिक राजनैतिक व्यंग्य लिखते है। परसाई द्वारा लिखे गये निबन्धों को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है। राजनैतिक निबन्ध, सामाजिक निबन्ध, धार्मिक निबन्ध, साहित्यिक एवं शैक्षिक निबन्ध तथा अन्य निबन्ध।

राजनैतिक निबन्ध

स्वतंत्रोत्तर काल की रचनाओं में मामूलीपन को लेकर कविता में नागार्जुन और गद्य में परसाई ने सबसे अधिक रचना की। परसाई निबन्धों में भंग की तरंग की भूमिका नहीं है, बल्कि सतर्क बोध के साथ छद्म को उद्‌घाटित कर देने वाली रचना है। परसाई के निबन्ध 'विचारों का रूप चित्र' होता है। अधिकांश निबन्ध वार्तालाप की शैली में है। परसाई के राजनैतिक व्यंग्य 'परसाई रचनावली' भाग ६ में अधिक संकलित है। 'जाँच कमीशन' 'सरकार का कुल्ला', जनता सरकार के धड़ाधड जाँच कमीशन बैठाने पर किया गया व्यंग्य है। 'निर्णय दर्शन' में उन नेताओं की खबर ली गयी है जो हमें आगाह करते है कि अभी भी आजादी खतरे में है। 'अपील का जादू' में तत्कालीन प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई के कार्यकाल में व्याप्त अनैतिकता पर व्यंग्य है। 'बड़े जुल्म, छोटे जुल्म' जनता सरकार के कार्यकाल में बढ़ते अपराधों पर व्यंग्य है। मुर्दे का मूल्य' में हरिजनों एवं मजदूरों पर किये गये अत्याचारों के ऊपर व्यंग्य है। 'प्रधान मत्रित्व ही जीवन है' में प्रधानमंत्री पद की होड़ में शामिल लोगों

---

१. 'बेईमानी की परत' – भूमिका, 'परसाई'

के ऊपर व्यंग्य है। 'परछाँई भेदन में' पौराणिक कथन के माध्यम से दिखावे के लिए की गई क्रांति पर व्यंग्य है।' सरकस मण्डली का शासन' जनता सरकार के मंत्रियों के ऊपर व्यंग्य है। 'हरि अंतत हरिकथा अंनता', 'अभूतपूर्व-भूतपूर्व', 'राजनीतिक कुत्ते' तथा 'आवारा युवकों के जरिये आवारा क्रान्ति' इसी प्रकार के राजनीतिक व्यंग्य निबन्ध है।

सामाजिक निबन्ध

परसाई उन रचनाकारों में से है जो समाज की संवेदना को गहरे रूप से अनुभव करते है। 'दिशाहीनता' में परसाई जी ने यह दिखलाने का प्रयास किया है कि आज की पीढ़ी किस प्रकार दिग्भ्रमित है जो अन्धे से ही रास्ता पूछती है। 'वैरंग शुभकामना और जनतंत्र में परसाई ने उस स्थिति का चित्रण किया है जहाँ शुभ कामना भी पैसे खर्च होने के कारण पीड़ा देने लगती है। 'राम का दुःख और मेरा' में लेखक पौराणिक कथा सूत्र पकड़कर वर्षा ऋतु में आम आदमी के छत टपकने की कथा को व्यंग्य के माध्यम से कहता है। 'कन्धे श्रवणकुमार के' में पीढ़ियों के वैचारिक अन्तर को दिखालया गया हैं 'प्रेम की विरादरी' जातिवाद के ऊपर व्यंग्य हैं 'किताबों की दुकान और दवाओं की' में ऐसे लोगों के ऊपर व्यंग्य किया गया है जो बीमारी का बहाना बनाकर अपना काम निकालते रहते हैं। 'पेट का दर्द और देश का दर्द' में लेखक मित्र के आग्रह पर अधिक खाने के कारण पीड़ित हैं और इसी से राष्ट का दर्द भी शुरू होता है क्योंकि प्रति व्यक्ति के हिसाब से काम का घण्टा उँघने में बरबाद होता रहता है। 'एक बेकार घाव' में दिखलायी देने वाला दर्द ही, दर्द हैं, इसका चित्रण किया गया है। 'स्नान' अन्धविश्वास के ऊपर व्यंग्य हैं 'वो जरा वाइफ है न' में उन लोगों के ऊपर व्यंग्य किया गया है। जो दूसरो की स्त्रियों में प्रगति शीलता ढूँढते है लेकिन अपने में 'मर्यादा' का ख्याल रखते है। 'चाँद पर नहीं जा सका' नाम अमर करने वालों के ऊपर व्यंग्य है। 'दूसरे की महिमा ढोने वाले में किसी अन्य के सहारे अपना परिचय बताने वालों पर व्यंग्य है।

'मेरा सूना गया जन्म दिन' में उन लोगों के ऊपर व्यंग्य मिलता है जो अपना जन्मदिन स्वंय मनाते है और अभिनन्दन का खर्च भी स्वयं ही वहन करते है। 'कबिरा आप ठगाइये में स्वयं की स्वार्थ पूर्ति पर खुशी और दूसरे की स्वार्थ पूर्ति होने में दुःख के अनुभव के भाव को चित्रित करके व्यंग्य किया गया है। 'नीलकंठ' में पौराणिक कथानक के माध्यम से यह दिखलाया गया है कि शिव भी जहर कंठ पर रोकने की शर्त पर पिये थे। अगर पेट पर रोकने की बात होती तो नहीं पीते तात्पर्य कार्य शिव भी प्रदर्शन की इच्छा से प्रेरित होकर करते हैं। 'निन्दारस' में निन्दा के उदगम को हीनता और कमजोरी से मानागया है 'कचहरी जाने वाला जानवर' वकीलों के ऊपर व्यंग्य है।

साहित्यिक एवं शैक्षिक निबन्ध

'अहले वतन में इतनी शराफत कहाँ है जोश' में परसाई उन लोगों के ऊपर व्यंग्य करते हैं जो लेखकों की छोटी मोटी बातों को बढ़ा चढ़ाकर प्रस्तुत करते है। 'लिटरेचर ने मारा तुम्हें' उन लोगों के ऊपर कटाक्ष है जो सरस्वती की प्रतिष्ठा पाने के लिए लक्ष्मी का भी परित्याग कर देते हैं। 'साहित्य और दो नम्बर का कारोबार' में उन लोगों के ऊपर व्यंग्यमिलता है जो अन्य व्यापारों की भाँति साहित्य को भी एक व्यापार मानते है।

'रोजमर्रा का जीवन' 'प्राइवेट कालेज का घोषणा पत्र' 'एक दीक्षान्त भाषण', 'आलोचना की आवश्यकता' आदि निबन्धों में शैक्षिक व्यंग्य किया गया है।

परसाई के पत्र निबन्ध उनकी रचना 'और अन्त में' में संकलित है जो कल्पना के संपादक को लिखा था। यह मूलतः साहित्यक निबन्ध है।

धार्मिक एवं अन्य निबन्ध

'उपवास से वर्षा' में उन धार्मिक कृत्यों पर व्यंग्य किया गया है जो आडम्बर युक्त है। 'कविता विज्ञान और धार्मिक मूढ़ता' में आधुनिक युग की देन विज्ञान को धर्म को पीछे ले जाते दिखलाया गया है। कविता और साहित्यकार के ऊपर फतवा जारी किया जाता है। 'तेरा मेरा मनुआ कैसे एक होय' में धार्मिक गुट बाजी है।

अन्य विषयों के निबन्धों में फिल्म, संस्था या स्थान विशेष से सन्दर्भित निबन्ध है।

परसाई अपने लेखन उद्‌देश्य की सफलता के लिए, जन-भावना की 'आधार-भूमि' धर्म से कथाओं को लेकर, उसे नये सिरे से प्रस्तुत किया जैसे-'नीलकंठ, 'प्रथम स्मगलर' आदि।

परसाई के रेखाचित्र व अन्य व्यंग्य रचनाएं

रेखाचित्र किसी व्यक्ति विशेष स्थान, अथवा उपादान की विशेषताओं का संक्षिप्त वस्तुगत विवरण होता है यह वहाँ अधिक प्रभावशाली असर उत्पन्न करता है जहाँ किसी व्यक्ति के कार्य-व्यापार के माध्यम से उसकी विशेषताओं का दर्शन कराया जाता है। इसमें नीतिपरायण बातों या शास्त्र-सम्मत समीक्षा के लिए स्थान नहीं होता। इसकी शैली अधिकाशतः वाग्वैदग्धपूर्ण होती है।

नगेन्द्र ने इसे इस प्रकार परिभाषित किया है - "चित्रकला का यह शब्द साहित्य में आया तो इसकी परिभाषा स्वभावतः इसके साथ आयी अर्थात रेखाचित्र ऐसी रचना के लिए प्रयुक्त होने लगा जिसमें रेखांए हो पर मूर्त रूप अर्थात उतार-चढ़ाव अर्थात दूसरे शब्दों में कथानक का उतार चढ़ाव आदि न हो तथ्यों का उदघाटन मात्र हो।"[१]

---

१. नगेन्द्र - विचार और विश्लेषण तथा नगेन्द्र के श्रेष्ठ निबन्ध - १२९

भगीरथ मिश्र रेखा-चित्र को इस प्रकार परिभाषित करते हैं– "अपने सम्पर्क में आये किसी विलक्षण व्यक्तित्व अथवा संवेदना को जगाने वाली सामान्य विशेषताओं से युक्त किसी प्रतिनिधि चरित्र के मर्मस्पर्शी स्वरूप की देखी, सुनी या संकलित घटनाओं की पृष्ठभूमि में इस प्रकार उभार कर रखना कि हमारे हृदय में एक निश्चित प्रभाव अंकित हो जाय रेखाचित्र या शब्द चित्र कहलाता है।"[१]

रेखाचित्र और संस्मरण दोनों की साम्यता इस कदर है कि दोनों को अलग कर पाना कठिन है फिर दोनों में अन्तर है रेखाचित्र के लिए कलात्मक शैली आवश्यक है संस्मरण के लिए भावुकता। संस्मरण किसी प्रसिद्ध व्यक्ति का होता है जबकि रेखाचित्र के लिए यह आवश्यक नहीं है। रेखाचित्र में रागात्मक स्पर्श मात्र होता है संस्मरण में आलोचक की मुद्रा होती है। रेखाचित्र में चित्रण अधिक होता है, संस्मरण में विवरण अधिक।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद एक अन्य विधा ने जन्म लिया रिपोतार्ज इसमें सच्ची और छोटी छोटी घटनाओं को संक्षिप्त, आकर्षित कलात्मक तथा संवेदनात्मक रूप में प्रस्तुत किया जाता है। यह रेखाचित्र से मिलता जुलता है। रेखाचित्र में व्यक्ति या चरित्र की विशेषताओं का उद्घाटन होता है तो रिपोतार्ज में घटना,दृश्य और वातावरण को प्रधानता दी जाती हैं रेखाचित्र और संस्मरण में शब्द शिल्प से सजाने के लिए मौका मिल जाता है जबकि रिपोतार्ज में त्वरित रचना करनी पड़ती है।

रेखाचित्रों के लेखक रूप में हिन्दी में कुछ नाम इस प्रकार है – महादेवी वर्मा, बनारसीदास चतुर्वेदी, प्रकाश चन्द्र गुप्त, जगदीश चन्द्र माथुर । संस्मरण लेखकों में प्रसिद्ध है– धर्मवीर भारती महादेवी वर्मा अज्ञेय अमृतराय आदि। रिपोतार्ज लेखन में रांघेय राघव, प्रकाश चन्द्रगुप्त, अमृतराय, प्रभाकर माचवे आदि प्रमुख नाम हैं।

---

१. भगीरथ मिश्र – काव्य शास्त्र – ९७

परसाई के प्रमुख रेखाचित्र

'मनीषी जी' में परसाई ने मनीषी जी का चित्रण कुछ इस प्रकार खींचा है "घुटनों तक खादी की धोती, खादी की मिरजई, पॉवों में फटी चप्पलें, ऐसी कि पावों की रक्षा कम करे इज्जत की ज्यादा आँखों पर चश्मा, काले धागे से जेब में लटकी घड़ी बॉये हाथ में छड़ी, कंधो पर खद्दर बसना, कांग्रेसी भक्तिन की साड़ी की तरह बेलबूटेदार किनारी का चादर'।

"स्वस्थ शरीर, रंग खूब गोरा, बड़ा सिर जिस पर लम्बे-लम्बे घुँघराले चिकने केश उन्नत मस्तक प्रशस्त ललाट नुकीली नाक, बड़ी-बड़ी पानीदार आँखे जिनमें एक एक क्षण में दर्शनिक सी चिन्ता और दूसरे क्षण मूठसी शून्यता, चौड़ा चेहरा जिस पर पहाड़ी झरने सी निर्मल हँसी तथा बड़प्पन और सदभावना की झलक।"[१]

वास्तव में मनीषी जी की विचित्रताएं और असाधारणताएं, अकेले आदमी का साहस आम भारतीय आदमी की विलक्षण जिजीविषा अपने समाज से गहरे जुड़ने की प्रबल आकांक्षा का विलक्षण चित्रांकन है।

'एक तृप्त आदमी की कहानी' में परसाई जी एक ऐसे व्यक्ति का चित्र खींचते है जो परिस्थितियों से संघर्ष करके जीवन की मजबूरियों को नियति मान बैठा है। वह अपने जीवन में उपलब्ध साधनों से सन्तुष्ट है परसाई उसका परिचय इस प्रकार देते हैं-

"असल नाम-नन्दलाल शर्मा"

"लड़कों के द्वारा बनाया गया और प्रचलित किया गया नाम एन.एल. मास्टर पेशा

---

१. हरिशंकर परसाई – तिरछी रेखाएं, पृष्ठ ५५-६६

२. पूर्वग्रह अंक १०, पृष्ठ ४

स्कूल मास्टरी। वेतन ९० रूपया मासिक। ऊपरी आमदनी १५ रूपया (ट्यूशन)। उम्र ३५ के लगभग। शरीर स्वास्थ। रूप सेकेण्ड क्लास। परिवार माँ बीबी तीन बच्चे। आवास दो कमरे एक परक्षी – जिसमें एक कोने पर रसोई घर और उसके सामने दूसरे कोने पर पखाना (भोजन करते वक्त याद रहे कि अन्न का हश्र क्या होने वाला है। जैसे ज्ञानी को घोर भोग के बीच भी अन्त याद रहता है।) कमरे में एक टेबिल (बिना टेबिलक्लाथ, पर स्याही के धब्बे और ब्लेड की खुदाई से अलंकृत) दो आराम कुर्सी (आराम की स्थिति नाम के बाहर कहीं नहीं) दो बेंत की कुर्सियां, एक लोहे की टूटी कुरसी (जो बैठने वाले के कपड़े फाड़ने के काम आती हैझ दीवार पर चीरहरण करते हुए कृष्ण की तस्वीर दूसरी तस्वीर हनुमान की सीना फाड़कर अन्ताकरण में अंकित 'राम दिखाते' हुए एक चित्र गाँधी जी का (अखबार से फाड़कर मढ़ाया हुआ)"[१]

एन. एल. मास्टर इन्हीं भौतिक साधनों के साथ जीते थे। उनका जीवन ऐसे ही कटता था" हर दिन ऐसा ही उगता ऐसा ही चढ़ता है, ऐसा ही डूबता है। मौसम बदलते रहते है। मास्टर की दिनचर्या में कोई हेर–फेर नहीं होता है।

"वहीक्रम–रोज....उठना। कोयले का मंजन। फीकी चाय। पान की दुकान का अखबार, ट्यूशन। कोट के नीचे फटी कमीज। सड़क के किनारे–किनारे स्कूल यात्रा। नमस्कार। अंग्रेजी गणित, इतिहास, विज्ञान। हनुमान जी के दर्शन। सड़क के नल से पानी। और अन्त में रात को पत्नी से तुम मुझे अच्छी लगती हो।"[२]

"ऐसा आदमी दुर्लभ है। दुनिया में निराशा, विकलता, पिपासा और कुण्ठा के पुतले ही देखने में आते है। तृप्त आदमी आऊट–ऑफ–स्टॉक होता जाता है।"[३]

---

१. परसाई – काग भगोड़ा, पृष्ठ २४

२. परसाई – काग भगोड़ा, पृष्ठ २७

३. परसाई – काग भगोड़ा, पृष्ठ २९

'असहमत' एक ऐसे व्यक्ति का रेखाचित्र है जिसे शिकायत है कि उसकी योग्यता का समाज ने सही मूल्यांकन नहीं किया। इसीकारण अपने परिवेश में आये सभी लोगों से वह नफरत करने लगता है। प्रिसीपल से, छात्रों से, पूरी दुनिया से। उसका स्वभाव है– अपने को सही मानना और पूरी दुनिया को गलत मानना। परसाई असहमत की मनः स्थिति का चित्रण इस प्रकार करते है। "वह खिसियाया, कैसे बेवकूफ से पाला पड़ा है। खीझ, कैसे बेइमान लोग है। क्रोधित हुआ, सबको देख लूँगा। तना, मैं किसी की परवाह नहीं करता। ढीला हुआ, कैसा दुर्भाग्य है दुखी हुआ, ऐसों की ही चलती है, मेरी नहीं चलती, मन में फिर तनाव आया।"[१]

'गाँधी का शाल' में एक गाँधी भक्त का उल्लेख है जो गाँधी द्वारा शादी में मिले उपहार को अपनी प्रतिष्ठा का प्रतीक बना लिया था। और इसके सहारे वह हर समारोह में मंचासीन हो जाते थे। इनका चित्र परसाई ने इस प्रकार उतारा है। "सेवक जी रोज की तरह दरवाजे के बीच कुरसी लगाकर बैठे थे। गोद में मुड़ा हुआ अखबार पड़ा था। बार बार चश्मा निकालते, धोती में पोंछकर फिर लगा देते पर पढ़ते कुछ नहीं। सोच रहे थे, सोच सोचकर आहें भर रहे थे और आहें भरकर कहीं शून्य में देख रहे थे।"[२] सेवक जी शाल खोने के कारण दुःखी हैं उन्होंने अन्ततः एक नयी शाल खरीदी और गाँधी के विचारों की रक्षा के लिए अपने ऊपर ओढ़ी। इस प्रकार उन्होंने निर्णय लिया कि वस्तु सत्य नहीं है भावना सत्य है।

काफी दिनों बाद सेवक जी जैसे ही मंच पर माइक से बोलते है। मेरे विवाह के अवसर पर यह शाल गाँधी जी ने मुझे दिया था। बापू स्वयं .... कि एक व्यक्ति आवाज देता है "क्यों झूठ बोलते हो सेवक जी यह शाल तो बिलकुल नया है और मिल का है। भला गाँधी मिलका शाल देते है ?"[३]

---

१. सं. कमला प्रसाद – परसाई रचनावली, पृष्ठ १४१

२. परसाई – सदाचार का ताबीज, पृष्ठ ९७

३. परसाई – सदाचार का ताबीज, पृष्ठ १०१

'बातूनी' असहमत की तरह नहीं है। उसमें उत्साह है। वह जान गया है कि इस दुनिया में सिर्फ योगयता से कुछ हासिल नहीं हो सकता है। अतः वह अपनी बातों द्वारा महत्वपूर्ण बनने का प्रयास करता है। क्योंकि उसके पास पैसा या पद नहीं है। परसाई के अनुसार उसके चेहरे पर भाव देखकर यह लगता है मानों वे सुरसा की भाँति कह रहे हो 'आज सुरन मोहि दीन्ह अहारा। परिस्थिति और आज की दूषित व्यवस्था ही 'बातूनी' जैसे पात्र के जन्म के लिए जिम्मेदार हैं।

'आइल किंग' एक ऐसा रेखाचित्र है जो पूरी व्यवस्था को अपने मुठ्ठी में किये रहता है। आइलकिंग पैसे से राजनीति, पत्रकारिता, सामाजिक प्रतिष्ठा सभी खरीद लेता है" इस व्यवस्था में पूँजी की जो साजिश है उसे परसाई आइलकिंग के कृत्यों को बेनकाब करके दिखाते चलते है। **'ठंडा शरीफ आदमी'** एक ऐसे व्यक्ति का रेखाचित्र है जो व्यवस्था को साधारण जन के लिए नहीं मानता है। परसाई उसके बारे लिखते है कि ऐसे सब प्रसंग टालता है जिनसे आहट हो। क्रोध से आहट होती है तो वह क्रोध नहीं करता"[१] परसाई उसकी तुलना उस बिल्ली से करते हैं जो चूहे के इन्तजार में घण्टों पर बैठी रहती हैं लेकिन उसकी उपस्थिति का पता तभी चलता है जब झपट कर चूहा पकड़ लेती हैं परसाई लिखते है "सोचता हूँ कि साधना से आदमी ऐसा ठंडा हो जाता है? जिन्दगी में इतनी तरह की आगे है कहीं कोई गर्मी इसे महसूस क्यों नहीं होती ? जिन्दगी की जटिलता को सुलझाकर उसने किस तरह सीधा और सपाट कर लिया है "२

"एक भक्त" में भक्त ईश्वर को सर्वभक्तिमान मानता हैं लेकिन कुछ दिन बाद वह देखता है कि साहब लोग किसी के आगे सिर नहीं झुकाते। अतः ईश्वर को छोड़कर साहब को सर्वशक्तिमान मानने लगा। वस्तुतः यह रेखाचित्र पिछले लगभग २००० वर्षों से चली

---

१. सं. कमला प्रसाद – परसाई – चुनी हुई रचनाएँ – भाग दो, १३१

आ रही 'भौतिकवादी और भावनावादी' के संघर्ष की नियति को बहुत सफलता पूर्वक से चित्रित कर पाता है।[१] 'मुफ्त खोर' आत्म व्यंग्य है इसमें परसाई ने यह दिखलाने का प्रयास किया है कि "अभिव्यक्ति की झूठी औपचारिक घोषणा के कारण लेखक को प्रकाशक की मनपसन्द चीज लिखनी पड़ती है। परसाई लिखते हैं दस्तखत करके उसे दे देता हूँ, आँखे बन्द करके सिर एक तरफ टिका देता हूँ मैं बेहद थक गया हूँ[२] इस रेखाचित्र में प्रकाशक लेखक के मालिक-मजदूर की तरह सम्बन्ध को रेखांकित करते हुए परसाई ने खीझ पैदा की हैं

'आमरण अनशन' में परसाई ने यह दिखलाने का प्रयास किया है कि जहाँ अहम् और स्वार्थ में टकराहट होती है वहाँ स्वार्थी जीतता है। नगरपालिका का अध्यक्ष गोबर्धन बाबू स्थानीय धनाढ्य व्यापारी सेठ किशोरी लाल और सत्तादल के महत्वपूर्ण नेता भैया साहब के बीच स्वार्थ ओर अहम् के बीच टकराहट होती है। तीनों आमरण अनशन पर बैठते हैं मुख्यमंत्री भैया साहब का पक्ष लेते हैं जिसके कारण भैया साहब की जीत होती हैं

'रामदास' सुविधा में प्रतिष्ठित और आत्म सम्मान सदगुणों के साथ आदर्श जीवन जीने की कल्पना की होगी। लेकिन समाज उसे ईमानदारी से जीने नहीं देता जिसके कारण "वह अपनी जिन्दगी की किताब को बड़ी सावधानी से बन्द करके रखता है। कि कहीं कोई पृष्ठ उलट न जाये और कोई पढ़ न लें।" 'रामदास समाज द्वारा निर्दयता पूर्वक संवेदनहीन बनाया गया व्यक्ति हैं यह ईमानदार व्यक्ति के बेचारा बनने की कहानी है।

'साहब महत्वाकांक्षी' में उच्चवर्ग के जीवनशैली को चित्रित किया गया हैं जहाँ नवधनाढ्य वर्ग रोटरी क्लब में सूट पहने देश की दुर्दशा पर भाषण करने के लिए इकट्ठे

---

१. सं. कमला प्रसाद – आँखन देखी – पृष्ठ–२१६

२. परसाई रचनावली भाग १ – पृष्ठ १४६

होते है। वे स्वादिष्ट भोजन खाते है और कहते है। कि सारा देश भूखे मर रहा है। क्लब का अध्यक्ष साहब महत्वाकांक्षी' का रेखाचित्र है जो परसाई से कहता है आपकी कविता अच्छी थी। परसाई जब उत्तर देते है कि वह कविता नहीं कहानी थी। तो वे कहते है 'हाऊ साट एण्ड स्वीट' ओह तब तो बहुत अच्छी थी। यही रोटरी क्लब का अध्यक्ष कुछ दिनों बाद धोती और टोपी पहन लेता हे और पत्नी के कहने पर लोकसभा घर में जाने का वचन देता है। इस रेखाचित्र में कथनी और करनी के अन्तर को स्पष्ट रूप से रेखंकित करने का प्रयास परसाई ने किया है।

'मुक्ति बोध' रेखाचित्र में संस्मरणात्मक रूप में रेखाचित्र खीचने का प्रयास परसाई ने किया हैं "इस रेखाचित्र द्वारा समूची व्यवस्था का उपहास कर व्यक्ति की स्वतंत्रता और स्वेच्छा की गारण्टी देने वाले प्रजातंत्र को निरर्थक सिद्ध किया गया है। इतनी यातनाएं देने के बाद भी क्या वह व्यवस्था मुक्तिबोध के मूल्यों को, उनके उत्साह उनकी संवेदनशीलता, आत्मीयता एवं समाजप्रेम को क्या जरा भी कमजोर कर पाती है। बिलकुल नहीं ?"[१]

परसाई मुक्तिबोध के लिए लिखते है "मुक्तिबोध की आर्थिक दुर्दशा किसी से छिपी नहीं है उन्हें और तरह के क्लेश भी थे भंयकर तनाव में वे जीते थे पर फिर भी बेहद उदार बेहद भावुक व्यक्ति थे। उनके स्वभाव के कुछ विचित्र विरोधभास भी थे पैसे–पैसे की तंगी में जीने वाला ये आदमी पैसे का लात भी मारता था।"[२]

परसाई के रेखाचित्रों की विशेषता

परसाई के रेखाचित्र बड़ी बारीकी से अपने पात्रों के व्यवहार की विशिष्टता को प्रकट

---

१. सं. कमला प्रसाद – आँखन देखी – पृष्ठ–२१९
२. परसाई शिकायत मुझे भी है – पृष्ठ १२७

करते हुए समाज के सम्पूर्ण व्यवस्था का चित्र भी खींचते है। परसाई के रेखाचित्र मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित है ये ऐसे व्यक्तियों के रेखाचित्र है। जो जीजिविषा की खोज में संघर्षरत है। अपने जीवन के मीठे-कडुवे अनुभव को परसाई ने मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखने-समझने का प्रयास किया हैं परसाई ने मनुष्य की व्यक्तित्व सम्पन्नता तथा परतों के बीच व्यक्तियों के विशिष्ट व्यवहार और उसके माध्यम से पात्र के विशिष्ट मनोविज्ञान को चित्रित किया है। नर्मदा खरे ने 'बोलती रेखाएं' (रेखाचित्र संग्रह) के सबंध मे लिखा हैं कि रेखाओं से जीवन का मर्म बोलता है व्यंग्य का जब जीवन की व्यथा से अभिभूत होता है तब वह 'रामदास' जैसी वेदना को साकार करता है। और जब उच्च वर्गीय पाखण्ड और सतहेंपन पर हँसता है तब 'साहब महत्वकांक्षी' को मूर्त करता हैं इन रेखाचित्रों में हमारे परिचित चरित्र ही हैं पर परसाई ने अपनी मर्मस्पर्शी दृष्टि से उनके भीतर पीड़ा आत्मसम्मान, स्वार्थपरता, कुण्ठा, पाखण्ड, छल, और दुर्बलता ओछापन और गहराई देते हैं

भाषा - परसाई की भाषा के कई रूप है उनके शब्द अर्थ के कई रूपों को ग्रहण किया है। वे सपाट बयानी से बात कहते है। प्रसंगानुकूल भाषा को बदल भी देते है। कहीं-कहीं बुन्देलीका प्रभाव हल्का सा दिखता है लेकिन उसमें वे डूबे नहीं है भाव संवादी विचार धारा अपनाने के बावजूद वे आयातित भाषा का प्रयोग नहीं करते हैं जैसा कि अन्य मार्क्सवादी विचारक करते हैं।

मुहावरे, सूक्तियां और लोक्तियों का प्रयोग, वे बहुतायत ढंग से करते हैं- पाप के हाथ में पुष्प की पताका लहराती हैं (तटकी खोज)। अपनी अर्थ व्यवस्था को डंगू हो गया है, लेटती है तो उठा नहीं जाता बिठा लो लुढ़क जाती है (पगडण्डियों का जमाना)। ऐसे बहुत ढेर सारे उदाहरण परसाई की रचनाओं में भरे पड़े हैं।

परसाई ने तमाम रचनाएं फैंटेसी के माध्यम से की हैं 'रानी नागफनी की कहानी',

'निठल्ले की डायरी', 'अकाल उत्सव' 'राष्ट्र का नया बोध', 'युग की पीड़ा', 'रिटायर्ड भगवान की कथा' आदि रचनाएं फैटेसी का उदाहरण है। जहाँ फैटेसी के माध्यम से कल्पना के द्वार से वास्तवविकता के मकान में घुसपैठ की जाती है।

'प्रतीक' समय सन्दर्भ में समय सचेष्ट ईमानदारी निभाता है प्रतीक में आरोपित विषय की प्रधानता रहती है। और संकेत द्वारा अप्रस्तुत की ओर इंगित किया जाता है। परसाई ने अपनी कहानियों में प्रतीकों द्वारा सुन्दर योजना की हैं" हमप्रतीको से लड़ते है छाया पर हमले करते हैं अर्जुन मछली की परछाई पानी में देखकर ही उसे बाण से छेद दिया पर आज के हमारे धर्नुधर तो मछली को छोड़कर उसकी परछाई को हो ही बाण मारते है शेर उधर खड़ा है, उसकी छाया पर गोली दागते है। 'जैसे उनके दिन फिरे' 'वैष्णव की फिसलन' में प्रतीक के माध्यम से परसाई कहानी को कहते हैं।

'बिम्ब' में चित्र स्पष्ट अंकित किये जाते हैं प्रतीक की भाँति रहस्यमय नहीं । जब कल्पना मूर्त रूप धारण करती है तो बिम्ब बनते हैं। परसाई हमारे जीवन के द्वन्द्वों को सतह पर दिखाई पड़ने वाले बिम्बों में पकड़ते हैं। और गहरी समझ के साथ हमारी धार्मिक पौराणिक मानसिकता से जोड़ते हैं। उदाहरणार्थ–

स्त्री ने पूछा प्रियतम तुम कौन सा पद पसन्द करोगे ? वानर ने कहा प्रिये मैं कुलपति बनूँगा। मुझे बचपन से ही विद्या से बड़ा प्रेम हैं (लंका विजय के बाद)

परसाई पौराणिक कथाओं को नये कलेवर में प्रस्तुत करते है। जिसके कारण उनके चरित्र नये अर्थ देने लगते है। 'सुदामा के चावल', 'श्रवण कुमार', 'मेनका का तपोभंग', 'त्रिशंकु', 'देवता और राक्षस', 'पाप और पुण्य', 'एकलव्य ने गुरु को अंगूठा दिखलाया' आदि इसी प्रकार की रचनाएं है जिसमें परसाई ने पौराणिक कथाओं के माध्यम से समकालीन

घटनाओं को जोड़ने का काम किया है। "परसाई के व्यंग्यों में आधुनिक जीवन की विडम्बनाओं को स्पष्ट करने वाली मिथक योजनाएं और फँतासिया भी मिलती है। परसाई ने मिथक और फतासी को स्वछन्दतावादी, व्यक्तिवादी की मनोगत धाराणाओं से मुक्त किया है उन्हें सामाजिक आर्थिक राजनीतिक आधार प्रदान किया है। इस प्रकार मिथ और फंतासी को आधुनिक जीवन से जोड़कर प्रासंगिक बना दिया है।

"परसाई का व्यंग्य मानवीय वजूद पर मंडरा रहे हर खतरे की ओर इंगित करता है वह परिवर्तन का सन्देश देता है। उनकी भाषा की दाहकता के करण ही विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ने उसे भाषा की लपट कहा है।[१] कबीर, तुलसी आदि सन्तकवियों और खुसरो, मीर, गालिब से लेकर, 'ठेठ' आज तक हिन्दू उर्दू के जितने रूप हमारी भाषा में हो सकते है परसाई के गद्य में उन सभी का स्वाद मिलता है यह आकस्मिक नहीं है कि प्रेमचन्द्र के बाद सबसे सशक्त गद्यकार और स्वातन्त्रोत्तर भारत के प्रतिनिधि लेखक के रूप में हम परसाई को नये सिरे से पहचान सकते है।

❑

---

१. परसाई रचनावली- खण्ड १ - पृष्ठ २

पंचम अध्याय

समग्र परसाई साहित्य का मूल्यांकन
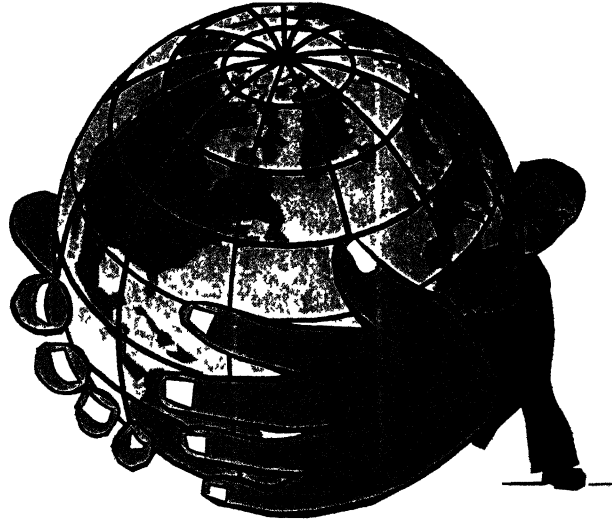
व्यंग्य के सौन्दर्य शास्त्र के परिप्रेक्ष्य में परसाई साहित्य

सृजनात्मकता, दर्शन और वर्णन की शक्ति से युक्त मानव-मानस-व्यापार है जिसके माध्यम से वस्तु के मर्म का साक्षात्कार से मूर्त-अमूर्त प्रकाशन होता है। सभी के अन्दर सृजन की क्षमता कमोवेश होती है लेकिन उचित अवसर, अनुकूल परिस्थितियां तथा अभ्यास द्वारा इसका प्रस्फुटन होता है-कलाकारों, सृजनहारों में यह क्षमता अद्‌भुत रूप से पायी जाती है- "वस्तुतः सृजनात्मकता मनुष्य की अन्तश्चेतना की वह जन्मजात स्वायत्त शक्ति है जो प्रेरणा एवं तदनुकूल परिस्थिति होने पर उद्‌भूत एवं व्यापार तत्पर होती है तथा ज्ञान एवं अभ्यास से विकसित की जा सकती है।"[१] व्यंग्यकार भी इसी प्रकार सृजन करता है उसके लिए भी व्यंग्य एक दर्शन की विधि है जो मूल्य बोध एवं सौन्दर्य बोध से प्रेरित होकर व्यक्ति और समाज की कुरूपता पर, मूल्यहीनता पर, विडम्बना पूर्ण स्थिति पर, व्यवस्था के पंगुपन पर, विभाजित व्यक्तित्व पर सर्जनात्मक प्रहार करता है। व्यंग्यकार अपने सामने वाली वस्तु से जिस कोण से संवेदित होता है रचना-प्रक्रिया में वह उसी को उभारने लगता है। अपनी अलग दृष्टि, अलग वैचारिक प्रतिबद्धता और अनुभव गहनता के कारण एक ही विषय-वस्तु की रचना की परिणित अलग-अलग होती है। इसी कारण से प्रत्येक व्यंग्यकार की अपनी रचना-प्रक्रिया होती है और अलग रचना दृष्टि भी।

मलय, व्यंग्य शास्त्र के नौ रूप बताते हैं जिसे वे 'रूप, उपरूप और अनुरूप' अनुभाग में बाँटते हैं-"रूप तीन होते हैं-तीक्ष्ण-वैदग्ध्य, विडम्बना और व्यंग्य। उपरूप भी तीन होते हैं, उपहास, निन्दा-विनोद और हेय हास। अनुरूप भी तीन होते हैं-कटाक्ष, प्रभर्त्सना और आक्षेप। व्यंग्यकार तीक्ष्ण-वैदग्ध्य में प्रत्युत्पन्नमति से हास्यास्पद (शत्रु) का हथियार छीनकर उसी पर प्रहार करता है। तो विडम्बना में एक ओढ़ी हुई विमूढ़ता से घेरकर उसका खात्मा

---

१. डॉ. निशा अग्रवाल – सृजनशीलता और सौन्दर्य बोध, पृष्ठ ४५

कर देता है। व्यंग्य रूप में वह खुलकर योद्धा की भांति आक्रमण करता है। उपहास, निन्दा, विनोद में व्यंग्यकार निजी शत्रु मानकर व्यवहार करता है। उपहास में अपने को ऊपर रखकर उसके लिए लोगों के मन में तिरस्कार की भावना भरता है। निन्दा-विनोद में उनकी मान्यताओं को मनोरंजन की वस्तु बना देता है। हेय हास द्वारा उसे सीधे घृणा का पात्र बनाया जाता है। व्यंग्य अनुरूपों में कटाक्ष द्वारा सीधे प्रहार किया जाता है, प्रभर्त्सना द्वारा प्रपंची को हजारों लाखों की दृष्टि में तुच्छ अयोग्य सिद्ध किया जाता है। आक्षेप द्वारा क्रोधातुर सीधा प्रहार किया जाता है।"[१]

परसाई के व्यंग्य एक दूसरी तरह से ऐतिहासिक संदर्भ में पहुँचकर स्वीकृत रास्ते पर चलने की ताकत देते हैं। परसाई के व्यंग्यों में व्यंग्यशास्त्र के सभी रूपों के दर्शन होते हैं, पहले रूप का दर्शन कबीरदास 'जतन से ओढ़ी ज्यों कि त्यों धर दिनिहि चदरिया' द्वारा श्रेष्ठता की भावना के परिणामस्वरूप समाज की विसंगति को लक्षित करते हुए सभी की पोल खोलते हैं। परसाई की सजग चौकन्नी दृष्टि मानवीय मूल्यों की रक्षा के लिए समाज के हर भाग में उपस्थित हो जाती है। व्यंग्यकार के लिए अपूर्व साहस और सह्दयता भी आवश्यक है। परसाई के व्यंग्य इस लिहाज से खरे उतरते हैं। वे बगैर किसी दबाव का अनुभव किये समाज के सभी लोगों के ऊपर व्यंग्य बाण छोड़ते हैं। व्यंग्यकार मूल्यों की रक्षा के लिए अपने को अधिक जिम्मेदार मानता है इसीलिए जब मूल्यों का विघटन होते व्यंग्यकार देखता है तो उन लोगों की आलोचना करना शुरू कर देता है। परसाई इस कार्य में समकालीन व्यंग्यकारों में सबसे आगे थे। बुद्धि और कल्पना के विचित्र संयोग से व्यंग्य की जो भूमि तैयार होती है उसमें यथार्थ अधिक होता है यथार्थ की रचना करते समय व्यंग्य रचनाकार परसाई यह सदैव ध्यान रखता है कि करुणा का परित्याग पूरी तरह से न किया जाय। व्यंग्य मानवीय सहानुभूति से ही पैदा होता है मानवता को विकृत कर देने वाली व्यवस्था के प्रति परसाई की दृष्टि

---

१. सं० कमला प्रसाद-आँखन देखी-३०४

आक्रोशित ढंग से पड़ी है।

रचना का सौन्दर्यशास्त्र रचना के विकास के साथ विकसित होताहै। परसाई ने इस काल की घड़ी में भाषा के रचनात्मक मानकों से रिश्ता कायम किया और सामाजिक प्रेरणा के लिए अपनी सटीक भाषा रची। उन्होंने भाषा में संवेदनात्मक प्रयोजन को उभारा, सौन्दर्य शिक्षा के लिए लोक भाषा की लहरों और अनुगूँजों को खोजा। व्यंग्य केसौन्दर्य शास्त्र की चर्चा करते समय यह भी विवाद उठता है कि जब यह विधा के रूप में स्वीकार्य नहीं है तो इसका सौन्दर्य शास्त्र कैसे निर्धारित किया जाय ? व्यंग्य का सौन्दर्य शास्त्र वास्तविक आत्मीय वैचारिक एवं मानवीय प्रतिबद्धता के बिना अधूरा होता है लेकिन यह प्रतिबद्धता महज वैचारिक प्रतिबद्धता तक सीमित नहीं होता।

परसाई की प्रतिबद्धता, मानवीय पक्षधरता, सजग विवेक चेतना का अविभाज्य अंग है। परसाई का महत्व सम्पूर्णता में है। वे आदि से अन्त तक मानवीय मूल्यों की परम्परा को टटोलते हुए चलते हैं, जिसके कारण ही वे व्यंग्य को एक नयी मानवीय भूमि दे सके। परसाई ने अपने व्यंग्यों द्वारा एक विशाल लोक को शिक्षित करने का काम किया है। परसाई की रचनाएं रचना और रचयिता की दृष्टि की पूर्णता का अद्‌भुत उदाहरण है। परसाई का व्यंग्य अनुभव की व्यापकता और भाषा कीसहजता के साथ, मानवीय सरोकारों का जिम्मेदारी पूर्ण कार्य किया है।

नयी कहानी और परसाई

यथार्थवादी ताना-बाना ओढ़कर १९५५ के आस-पास नयी कहानी ने साहित्य के क्षेत्र में प्रवेश किया। इस आन्दोलन को हवा देने में कई समकालीन लेखकों ने महत्वपूर्ण योगदान किया। कमलेश्वर के विचार नयी कहानीकारों के सन्दर्भ में इस प्रकार है-हर लेखक ने अपने अनुभूत जीवन की निरन्तरता में से जीवन-खण्डों को उठाकर अभिव्यक्ति दी है। रेणु, राकेश,

राजेन्द्र यादव, भीष्म साहनी, हरिशंकर परसाई, अमरकान्त, रमेश वक्षी, मार्कण्डेय, शिवप्रसाद सिंह, मन्नू भण्डारी, शैलेश मटियानी, ऊषा प्रियम्वदा, मधु गंगाधर, राजेन्द्र अवस्थी, शानी, शरद जोशी जैसे सशक्त लेखकों ने नयी कहानी को जीवन्तता और विविधता दी है।"[१]

परसाई नयी कहानी के सन्दर्भ में समकालीनता का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि "हमसे पहले की कहानी का एक पूर्व-निश्चित चौखटा था। छन्द-शास्त्र की तरह उसके भी पैटर्न तय थे। पर जैसे नवीन अभिव्यक्ति के आवेग से कविता में परम्परागत छन्द-बन्धन टूटे। वैसे ही अभिव्यक्ति की मांग करते हुए नये जीवन-प्रसंगों ने, नये यथार्थ ने, कहानी को उस चौखट से निकाला। आज जीवन का कोई भी खण्ड मार्मिक क्षण अपने में अर्थपूर्ण कोई भी घटना या प्रसंग कहानी के तन्त्र में बँध सकता है।"[२]

नये कहानीकारों को उनके लेखन की विषय वस्तु के आधार पर तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है-

मार्कण्डेय, रेणु, शिव प्रसाद सिंह आदि आंचलिक कथाकारों में से हैं। सामाजिक या रोमांटिक नये कहानीकारों में- मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, निर्मल वर्मा, ऊषा प्रियम्वदा, आदि का नाम महत्वपूर्ण ढंग से लिया जा सकता है। "जिन वर्गों के प्रति जनमानस में आक्रोश था उन्हें कुछ लेखकों ने गहरे रूप से पेश किया है। उन तमाम स्वार्थी वर्गों के प्रति एक तीव्र घृणा और हिकारत का दृष्टिकोण पैदा हुआ। हरिशंकर परसाई ने अकेले ही नेता वर्ग के आडम्बर को अनावृत किया। केशव चन्द्र वर्मा ने संस्थाओं और व्यक्तियों की आन्तरिक विसंगति को पकड़ा। शरद जोशी ने आदमी में उपज रहे दूसरे आदमी या उसके दोहरे व्यक्तित्व को उधेड़ कर रखा। और श्रीलाल शुक्ल ने वर्तमान अफसरशाही को नश्तर लगाकर

---

१. कमलेश्वर नयी कहानी की भूमिका, ४०-४१

२. हरिशंकर परसाई का लेख-नयी कहानी सन्दर्भ और प्रकृति, ५६

चीरा।"[१] नयी कहानी जीवन-सत्य की कहानी है। इस कहानी में जीवन के स्पन्दनों को अधिक महत्व दिया गया है।

परसाई भी इसी समय कहानी लिख रहे थे। उन्होंने अपनी कहानियों में विस्मित आदमी को जगह दी। परसाई नये कहानीकारों से हटकर मानवीयता से ओत-प्रोत कहानी लिख रहे थे। जब नयी कहानी में बकौल मुक्तिबोध "आधुनिक मानव की विविध मनोदशा को उसके सन्दर्भों से काटकर, उसके बाह्य सामाजिक परिणाम के पृष्ठभूमि से काटकर, उस मनोदशा को अधर में लटका कर चित्रित किया जा रहा था और कहानी में एक धुँध समा रही थी।भीतरी और बाहरी दोनों ओर, परिणाम स्वरूप वस्तु सत्यों के संवेदनात्मक चित्रों का प्रायः लोप हो रहा था.....तब परसाई ने समकालीन मनुष्य के भरसक विविधता भरे समग्र और सम्पूर्ण बिम्ब पेश किये।"[२] नयी कहानी के व्यंग्य खण्ड में परसाई का यह महत्वपूर्ण योगदान है।

हिन्दी का व्यंग्य १९६० से धीरे-धीरे परिपक्व होना प्रारम्भ हुआ और परसाई शरद जोशी, नरेन्द्र कोहली, श्रीलाल शुक्ल, के० पी० सक्सेना आदि के हाथों में पड़कर युवावस्था को प्राप्त हुआ। स्वातन्त्र्योत्तर परिवेश गत विसंगतियों तथा रचनाकारों की रचना क्षमता ने मिलकर व्यंग्य को 'मसखरेपन' से हटाकर 'दायित्वपूर्ण विधा' बना दिया। किसी रचनाकार की रचना उसके अनुभवों से समृद्ध होती है। परसाई का लेखन उनकी 'आँखन देखी' है। उनके अनुभवों की साक्ष्य है।

परसाई का लेखन देखा सुना है। उन्होंने कबीर की भाँति दुनिया को देखा समझा है। समाजकी हर विसंगति से वह उलझते हैं, हर पाखण्ड से वह टकराते हैं। आम आदमी के

---

१. कमलेश्वर-नयी कहानी की भूमिका १३२

२. सं० कमला प्रसाद-परसाई रचनावली खण्ड १, पृ० १५

दर्द को देख, केवल करुणा प्रकट नहीं करते हैं बल्कि वे लड़ने को प्रेरित करते हैं, मानवीय संवेदना का प्रश्न लेकर राजनीति से जुड़ते हैं। परसाई ने राजनीति और साहित्य का गहरा सम्बन्ध जोड़ा। वे उन लोगों के खिलाफ हैं जो साहित्य और राजनीति को अलग करना चाहते हैं। परसाई के अनुसार अगर शासक इस प्रकार की सलाह देता है तो वह बहुत बड़ा राजनीतिज्ञ है। लेखक जैसे बुद्धिजीवी को अपने रास्ते से वह हटाना चाहता है।

व्यंग्य को परसाई ने एक नया अर्थ प्रदान किया। वे स्वयं स्वीकार करते हैं कि व्यंग्य को मैंने कभी उपहास नहीं माना है। यह एक गम्भीर और जिम्मेदारी पूर्ण लेखन है। परसाई का साहित्य इस अर्थ में अधिक महत्वपूर्ण है कि इसे पढ़कर पाठक चुप बैठ नहीं सकता उसकी चेतना में हलचल होगी। विसंगतियों के प्रति वह सचेत होगा। विश्वनाथ तिवारी लिखते हैं–"साल्जेनित्सीन ने तो यहाँ तक कहा है कि किसी देश में बड़े लेखक की उपस्थिति उस देश के भीतर एक दूसरी समानान्तर सरकार के समान है। यदि कोई रचना समाज को सोचने की दिशा देती है। उसकी संवेदना का विकास करती है। उसके संभ्रमों को तोड़ती हुई उसके मन का परिष्कार करती है। तो क्या यह समाज को बदलना नहीं है? यह सम्भव है कि लेखक जिन चीजों को बदलने के लिए लिखता है, वे चीजें न बदले या चरितार्थ न हो पर इससे यह तो निष्कर्ष नहीं निकलता कि वह लेखन को निरर्थक मान ले।"[१]

व्यंग्य सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक सभी क्षेत्रों में जो असहज है उसकी यथार्थ तस्वीर प्रस्तुत करता है। परसाई समाज के कमजोर एवं दलित वर्ग से अपना जुड़ाव रखते हैं। वे उन सभी लोगों पर, सभी क्षेत्रों पर चोट करते हैं जो विकृत हो गया है जो विसंगतिपूर्ण हो गया है। प्रगतिशील मूल्यों की रक्षा गैर-प्रतिष्ठा के लिए चलने वाले जन संघर्षों में अपनी लेखनी से जैसा योगदान परसाई ने किया किसी अन्य लेखक ने नहीं किया।" परसाई अपनी

---

१. विश्वनाथ तिवारी–नये साहित्य का तर्कशास्त्र, पृ० २०

कमियों को भी देख सके हैं इसलिए वे दूसरे की बुराई भी देख सके हैं। अपने नैतिक साहित्य और मानवीय सरोकारों से गहरे लगाव के कारण उन्होंने व्यंग्य को विधा बना दिया। यद्यपि परसाई व्यंग्य इसे स्पिरिट मानते हैं लेकिन हिन्दी साहित्य को 'सक्षम एवं सार्थक व्यंग्य' देने वालों में परसाई का नाम अग्रणी है।

परसाई एक प्रतिबद्ध व्यंग्य रचनाकार है। उनका प्रधान लक्ष्य मानवीय मूल्यों की स्थापना करना है। इसके लिए उन्होंने व्यंग्य को माध्यम भर चुका है। परसाई की फटकार उपदेशात्मक नहीं है बल्कि संवेदना के साथ सुधरने के लिए किया गया पूरा प्रयास है। परसाई ने कहीं-कहीं घोर क्रान्तिकारी विचारों का भी प्रतिपादन किया है। जैसे-"सार्थक श्रम से बड़ी कोई प्रार्थना नहीं है....बालिग होने से पहले बच्चे को कोई धर्म दे देना दण्डनीय अपराध होना चाहिए।"[१] हिन्दी में परिमार्जित, बौद्धिक और गम्भीर व्यंग्य की कमी को परसाई ने पूरा किया। उन्होंने केवल बौद्धिकता के सहारे लेखन कार्य नहीं किया। मानवीय सम्बन्धों को भी वे उससे जोड़ते हैं। अपने आर० एस० एस० सम्बन्धी लेख के कारण उन्हें मार भी खानी पड़ी। तत्पश्चात् परसाई लिखते हैं 'मेरा लेखन सार्थक हो गया। व्यंग्य की वर्ग शक्ति की शिक्षा उन्होंने गोर्की से ग्रहण की थी। कबीर की अक्खड़ता और सच्ची सीधी बात कहने के साथ उन्होंने वैज्ञानिक समाजवाद का विचार भी अपने अन्दर समाविष्ट किया। जिससे व्यंग्य के व्यापक क्षेत्र का निर्माण हुआ। परसाई स्थानीय से अन्तर्देशीय घटनाओं को अपने लेखन का विषय बनाते हैं। उनके लिए छोटी घटना उतनी ही महत्वपूर्ण थी जितनी कोई बड़ी अन्तर्देशीय या अन्तर्राष्ट्रीय घटना। वे पूरी तल्खी के साथ सबकी खबर लेते हैं।

परसाई अपने निबन्धों में जीवन की विसंगतियों पर पूरी क्षमता के साथ प्रहार करते हैं। वे जानते हैं कि मानव मात्र की लड़ाई अकेले ही नहीं लड़ी जा सकती है। इस लड़ाई

---

१. आँखन देखी-कमला प्रसाद १२८

में सम्पूर्ण समाज को सम्मिलित होना पड़ेगा। "मेरा मतलब कि साहित्यकार क्रान्तिकारी चेतना का तो निर्माण करता है, परन्तु क्रान्ति जन-आन्दोलनों से ही आती है। साहित्य उसमें सहभागी होता है।" परसाई व्यंग्य के साथ चेतना में परिवर्तन करते चलते हैं।" परसाई के तेज और तेवर महान मानवीय गुणों को स्थापित करने के लिए बहुत जरूरी है। ऐसे ही व्यक्ति की लेखनी स्याही से नहीं खून से लेख लिखती है। व्यंग्य करती है और ह्रदय भेद देती है। "इस गद्य के बलिष्ठ और पुरुषार्थों प्रवीण व्यंग्यकार की रचनाएं ऋषियों की ऋचाओं को मात करती है। जो भारतीय चिन्तन-पद्धति में आमूल परिवर्तन करती है।"[१] इस प्रकार परसाई का व्यंग्य पाठक की सोच को प्रभावित करता है। जैसा कि परसाई जी कहते हैं कि मेरा लेख पढ़ने के पहले व्यक्ति जैसा रहता है। पढ़ने के बाद भी ठीक वैसा नहीं रह पाता है।

वर्ग संघर्ष और लगातार बढ़ रही द्वन्द्वात्मकता के कारण अधिकांश लेखक भी अपनी पक्षधरता को निर्धारित नहीं कर पाये हैं। परसाई ने अपनी पक्षधरता निर्धारित कर ली है। वे शोषित पीड़ित वर्ग के साथ अपनी पक्षधरता घोषित करते हैं। परसाई के साहित्य के विषय में "यह सवाल उठाया गया है कि इनका अवदान क्या है?" उन्हें किस रचना के लिए आज से दस बीस या पचास बरस किया जाता रहेगा।"[२] इस प्रश्न के उत्तर में धनंजय वर्मा ने कहा है, "क्या विश्व-आहित्य में ऐसे रचनाकार भी नहीं हुए जिन्हें किसी रचना विशेष के लिए नहीं, बल्कि उस समग्र लेखन के लिए याद किया जाता है, किया जाता रहेगा, जिससे साहित्य की मौजूदा संस्कृति में एक क्रान्ति आयी और एक नयी संस्कृति की रचना हुई।"[३] परसाई ने एक प्रतिबद्ध बौद्धिक पाठक वर्ग तैयार किया है। एक कुशल सर्जक की भांति विसंगतियों को चीड़-फाड़ कर निकाल फेंकने में कामयाबी हासिल की है।

---

१. समय-चेतना/अक्टूबर १९९५/३१

२. परसाई रचनावली भाग-१, पृ० १०

३. परसाई रचनावली भाग-१, पृ० १०

निबन्ध की विधा परसाई ने अपनी स्वच्छन्दता के कारण अधिक पसन्द किया। इसी कारण कहानी के बाद सबसे अधिक उन्होंने निबन्ध विधा को ही अपनी रचना के लिए चुना। यद्यपि उन्होंने राजनैतिक, सामाजिक धार्मिक सभी मूल्यों पर लिखी तथापि राजनैतिक व्यंग्य अधिक लिखा। उनके विचारों में राजनीति ही आम आदमी की भाग्य विधाता है। एक विशेष विचारधारा से प्रतिबद्ध होने के बावजूद उनकी रचनात्मक क्षमता की धार कुंद नहीं हुई है। परसाई का "निबन्ध साहित्य एक वृहत युग गाथा लगता है। वह एक विशद असमाप्त महाकाव्य लगता है। वह स्वातन्त्र्योत्तर भारत की युग-गाथा है। व्यंग्य-निबन्धों का यह महाकाव्यात्मक प्रभाव हिन्दी की गई उपलब्धि है। वर्तमानता, मामूलीपन की अनिवार्यता, महत्ता इन सबके साथ परसाई के निबन्धों के शिल्प और विधा के नये पन का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है।"[१] परसाई ने अपनी रचनाओं द्वारा स्वतन्त्रतावाद की सामाजिक चेतना को जगाने में महत्वपूर्ण कार्य किया है।" परसाई के गद्य लेखन की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि उन्होंने भारतेन्दु युगीन गद्य और खास कर व्यंग्यात्मक निबन्ध लेखन की श्रेष्ठ परम्परा को नये सिरे से अविष्कृत किया और उसका कलात्मक विकास किया। इस विकास में सिर्फ श्रेष्ठ परम्परा से जुड़कर उसकी कड़ियों को आगे बढ़ाने की बात ही नहीं, बल्कि सार्थक और नवीन प्रयोगों की मौलिक प्रतिभा के भी हमें भरपूर दर्शन होते हैं। इसलिए यह विकास एक गुणात्मक विकास है।"[२]

"परसाई के लेखन को समग्रता में देखा जाय तो वर्तमान भारत के द्वन्द्व का चित्र उभरेगा। इस चित्र में एक कसमसाता, छटपटाता हुआ भारत है जिसे एक और छद्‌म भारत ने दबोच लिया है। दबोचने वाला और दमित दोनों भारत सक्रिय है। दोनों के बीच निरन्तर

---

१. विश्वनाथ त्रिपाठी - देश के इस दौर में पृष्ठ-११

२. परसाई रचनावली खण्ड-२, पृष्ठ-२

दाँव-पेंच चल रहे हैं। शोषक, शोषित, उनकी समस्याएं, सांस्कृतिक, आर्थिक आचरण सब परस्पर सम्बद्ध है। इस सघन परस्पर-सम्बद्धता, को ही वर्तमानता की अखण्डता समझिए। इसमें उच्च वर्ग, मध्यवर्ग, और निम्न वर्ग सबकी आशाएं, आकांक्षाएं हैं। सबके अपने-अपने दुःख हैं। दुःख और सुख विविध है, भिन्न है, छद्म है, सच्चे हैं।"[१]

परसाई का प्रत्येक व्यंग्य निबन्ध किंसी घटना पर संवेदनात्मक प्रतिक्रिया होती है। संवेदना-नैतिकता-पुष्ट होती है। परसाई का संवेदनात्मक आग्रह अधिकाधिक स्थितियों के विश्लेषण, परीक्षण के निष्कर्ष का परिणाम होता है। परसाई के व्यंग्य में मनोविकारों का समावेश अधिक है। व्यंग्य में तेज और दीप्ति करुणा की होती है। व्यंग्य उनके लेखन का रूप होता है। यही कारण है कि परसाई के अधिकांश निबन्ध समकालीन कहानीकारों की कहानियों से अधिक पढ़े जाते हैं। इनके निबन्धों में कहानीपन का समावेश होता है। निबन्धों में घटना और चरित्र का परस्पर प्रभाव भी दिखलायी पड़ता है।

परसाई के व्यंग्य निबन्धों में साहित्य का अधिकाधिक रूप समाहित होता है फिर भी ये निबन्ध होते हैं क्योंकि इसमें कथा प्रवाह नहीं होता, विषय प्रधान होता है। विचार सूत्र ही मुख्य है। अन्य साहित्य विधाएं साधन रूप में आ गयी हैं। इसी कारण परसाई के निबन्ध चित्रात्मक हो गये हैं। जैसे 'प्रेमचन्द के फटे जूते' 'लिटरेचर ने मारा तुझे' आदि में।

परसाई ने जन सामान्य को सम्बोधित करते हुए 'सुनो भाई साधो' की तरह अपने निबन्ध वार्तालाप शैली में लिखा है-इनके निबन्धों में पाठक और श्रोता की उपस्थित बनी रहती है। बीच में परसाई अपने को टोकेंगे, लौटो परसाई जोक पर लौटो।" अनौपचारिक गप्प-सप्प, बहस या वार्तालाप की तरह वे कहीं से शुरू होकर, कहीं भी खतम हो सकते हैं। प्रारम्भ प्रायः किसी व्यक्तिगत घटना, अखबार की खबर या विचार से होता है। अगला सूत्र, किसी

---

१. पं० विश्वनाथ त्रिपाठी-देश के इस दौर में, पृ० ११

मित्र, रिश्तेदार या व्यक्ति के आगमन से आता है। किसी घटना या स्थिति पर टिप्पणी भी बहुत दूर तक चल सकती है। इनके निबन्धों के अनेक लघु कथा खण्ड भी होते हैं। बीच का अंश, टिप्पणी, संवाद, करनी-चित्रण, सूक्तियों, सूत्र-वाक्यों से भरा होता है। जिसमें नाटकीयता होती है। अनेक स्थलों पर लेखक अपनी सारी लेखकीय मुद्रा त्यागकर सीधे व्यक्ति तौर पर बात करने लगता है।"[१]

परसाई के व्यंग्य निबन्धों की भाषा उनकी नैतिक संवेदना के आधार से जुड़ी है। इतराने वाले लोगों की भाषा भी ओवर एक्टिंग करती है। ओवर एक्टिंग का उपयोग वे भाषा के माध्यम से व्यक्त करते हैं। उससे उनका मुखौटा अधिक स्पष्ट हो जाता है। जैसे-साहित्यकारों का यह जुमला- 'मूल्यों का विघटन हो रहा है', 'नये साहित्यकार सुविधा भोगी हो गये हैं आदि।

विश्वनाथ तिवारी ने उनके निबन्धों की भाषा एवं व्यंजन-विवेचन करते हुए लिखा है, "अनावश्यक रहितता सौन्दर्य बोध का भी आधार है। शरीर, कर्म और भाषा सबका। शरीर में जितना जो जहाँ चाहिए वहाँ उतना होना चाहिए। ज्यादा मांस, ज्यादा हड्डी, ज्यादा लम्बी नाक, सब सुन्दरता के विरोधी है, तोंद, मोटापा, शारीरिक असुन्दरता के कारण है। इसी तरह अनावश्यक से कम भी असुन्दरता है। विकलांगता है। सौन्दर्य-सुषमा। सुसंगति में है। वह अनावश्यकता और न्यूनता का विरोधी है। भाषा में सुन्दरता तभी आती है जब वह अनावश्यक से बचे। आचरणगत अनावश्यक स्वांग है। अनावश्यक अर्थ संग्रह पूंजीवाद है। यह अहंकार का ही आर्थिक पक्ष है। परसाई का व्यंग्य व्यंग्यपूर्ण स्थितियों की समाप्ति चाहता है। यह उनकी संवेदना का आधार है। जो शिल्प में भी प्रतिफलित होता है।"[२]

---

१. विश्वनाथ तिवारी – देश के इस दौरे में, पृष्ठ-१०८

२. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी – देश के इस दौर में ११०

कहानी के बने-बनाये ढर्रे को प्रेमचन्द ने अगर छोड़ दिया था तो परसाई ने एकदम उससे नाता ही तोड़ लिया। परसाई ने अपनी कहानियों में संस्कार और संस्कृति को बदला। परसाई की कहानियों में "व्यक्ति की, समकालीन समाज की, प्रवृत्तियों की युगात्मा एक साथ है। उनके चरित्र एक ऐसे अनुभव को रूपायित करते हैं। जो सामान्य दुनिया में असामान्य है उनमें समकालीन रीतियों और रिवाजों का व्यापक विवरण और विश्लेषण है। वहाँ आत्म तुष्ठ मध्य वर्ग है। आत्मदम्भी बुद्धिजीवी है। दर्द को कलेजे की भट्टी में गलाकर हंसने वाले, उदासीन वृत्ति की विक्षिप्त सी लगने वाली निरपेक्षता को प्रतीकी कृत करते पात्र हैं। ईमानदारी की बीमारी से ग्रस्त लोग है। जिनकी करकती खांगालती वेदना का घुमड़ता हुआ निःशब्द शोर हमारी-आपकी आत्मा तक को कंपा देती है। समकालीन भारतीय जीवन का ऐसा कोई भी कोना और वर्ग, चरित्र और व्यक्ति नहीं है जो परसाई के कहानियों में मूर्त नहीं हुआ होगा।[२] इसी कारण यह विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि परसाई की कहानियाँ स्वतन्त्रता बाद के हिन्दुस्तान की कहानी है। ये कहानियाँ सम्पूर्ण रूप में मिलकर भारत की एक ऐसी तस्वीर उभारती है जो कि भारत की सच्ची तस्वीर लगती है।

स्वतन्त्रता बाद के समय जहाँ नये कहानीकार कुंठा, सन्त्रास, प्रणय और परिणय में फंसकर कथावस्तु का चुनाव करते थे। परसाई अपने समाज में घट रहे छल और पाखण्डों के विरुद्ध एक जोरदार आवाज लगा रहे थे। मानवीय सम्बद्धता का जो रूप परसाई की कहानियों में दिखलायी पड़ता है। वह रूप नये कहानीकारों में से किसी की भी कहानी में नहीं मिलता है। परसाई के व्यंग्य ने समाज के ढंके पाखण्ड को उभारने का कार्य किया। परसाई ने अपनी कहानियों में एक विस्तृत फलक को उतारा है जहाँ एक प्रतिरोध और प्रतिवाद उपस्थित है। इनके कहानियों में रिश्तों की एक गाँठ बँधी है। जहाँ इसकी रक्षा के लिए

---

१. सारिका १९८४, १६-३१ मार्च ६८

२. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी - देश के इस दौर में ११०

चौतरफा लड़ाई है। समाज का क्रान्तिकारी परिवर्तन मनुष्य की मुक्ति, एक बेहतर संसार की रचना, यही वह परिप्रेक्ष्य है। जिसके लिए कहानियाँ लिखी गयी हैं।

परसाई की कहानियाँ जितनी सहज और सीधी जान पड़ती है, उतनी है नहीं। सीधी-सहज भाषा एक परिपक्व वयस्क चेतना और गहरे चिन्तन भवन के परिणाम स्वरूप ही उभर पाती है। परसाई की कहानियों में निबन्ध और टिप्पणियाँ, साक्षात्कार और स्मरण, रिपोर्ताज और रेखाचित्र के विद्यागत मोटिफ घुल मिल गये हैं। पुराण कथा, दन्त कथा, और मिथक, बैताल कथा, तिलस्मी, ऐय्याशी, लोक कथाएं, लोक वार्ता, स्वांग, कपोल कल्पना, फैटेसी, लघु कथा सभी कुछ के साथ परसाई आदि काल से लेकर आधुनिक काल तक की सारी कहानियों की विशेषताएं समेटे हुए हैं।

परसाई की कहानियों की भाषा आम बोलचाल की भाषा है। क्योंकि उन्होंने विषय-वस्तु का संचयन जहाँ से किया है भाषा का चुनाव भी वहीं से किया है। ये नहीं कि विषय कहीं का और भाषा कहीं की। मध्य वर्ग को चित्रित करते समय वे उनके ही परिवेश की भाषा, बोलचाल, मुहावरे, कहावतें आदि को प्रयोग में लाते हैं। इनकी इसी विशेषता के कारण परसाई की कहानियों का पाठक भी अलग से तैयार हुआ है। परसाई भाषा के साथ कोई अतिरिक्त छेड़छाड़ नहीं करते हैं बल्कि कभी-कभी उसे 'जस को तस' परोस देते हैं जिससे गद्य का नया मिजाज भी बना और तेवर भी बदला।

परसाई की कहानियाँ लोगों की जुबान पर बैठी है और लोगों के विचारों को पुष्ट करने के लिए उदाहरण स्वरूप काम आती हैं। धनन्जय वर्मा उनकी कहानियों की विशेषता इस प्रकार बतलाते हैं, "परसाई की कहानियों का जायजा लें, तो उनमें से समकालीन मनुष्य की इतनी विविध शक्लें उभरती हैं, उसमें इतने मुत्तलिफ चेहरे और उसके इतने सघन एवं व्यापक प्रतिरूप सामने आते हैं कि वे सब परसाई के अनुभव संसार की गहनता एवं विविधता के

ही प्रतीक हो जाते हैं। परसाई की कहानियाँ इस लिहाज से 'समकालीन भारत का एक सैरवीन कैलिडोस्कोप' है। और यह बना है उन सबीहों से जो मुक्तलिफ वर्गों और स्थितियों प्रसंगों और घटनाओं में फंसे और जद्दोजहद करते मनुष्य की है। जो अपने माध्यम से राजनीति, प्रशासन तंत्र, शिक्षा, नौकरशाही, गरज की समकालीन जगत के लगभग हर स्तर को रौशन करती है।"[१]

स्तम्भ लेखन परसाई की रचना का एक महत्वपूर्ण भाग रहा है। धनन्जय वर्मा ने लिखा है कि, "प्रेमचन्द के बाद अकेले परसाई है जिन्होंने सपाट गद्य की अखबारी तात्कालिकता को इतनी रचनात्मक उत्तेजना दी है कि उनके अनुभव, चरित्र और घटनाएं अनायास प्रतीक और व्यंग्य का दर्जा अख्तियार कर लेते हैं। और समकालीन इतिहास के अनिवार्य अंग बन जाते हैं।"[२] नियमित कालम द्वारा लेखन कर्म करने से परसाई का व्यंग्यकार अधिक सृजनहार हुआ। परसाई ने राजनीतिक व्यंग्य द्वारा लोगों की राजनीतिक चेतना के ऊपर जमी काई को हटा दिया। वे तात्कालिक होते हुए भी इस अर्थ में कालजयी रचना करते थे कि मानव मूल्य दिन प्रतिदिन नहीं बदलते हैं। स्तम्भ लिखते समय परसाई की भाषा स्थिति प्रवेश और विषय-वस्तु के अनुरूप होती थी। राजनीतिक व्यंग्य में जहां राजनीतिक शब्दावली का प्रयोग किया जाता था। पौराणिक कथा आख्यानों में धार्मिक शब्दावली सहज आ जाती थी। जहाँ कहीं भी परसाई ने आधुनिक जीवन शैली को लेकर स्तम्भ लेखन किया है, वहाँ भाषा भी उन्हीं के अनुरूप है। इस प्रकार विषय वस्तु के अनुरूप भाषा का प्रयोग करके परसाई ने स्तम्भ लेखन में व्यंग्य की धार को तेज किया है। चाहे वह 'कबिरा खड़ा बाजार में' हो 'तुलसी दास चन्दन घिसै' हो 'सुनो भाई साधो' हो 'ये माजरा क्या है' हो अथवा अन्य कोई।

---

१. सारिका १९८४, १६ से ३१ मार्च, ६८

२. परसाई रचनावली खण्ड-५, फ्लैप

परसाई ने अपने रेखाचित्रों में मध्यमवर्गीय रचना संसार का ऐसा शब्द चित्र खींचा है कि वस्तुस्थिति का उद्घाटन बड़ी ही सूक्ष्मता के साथ कुशलतापूर्वक हो जाता है।

परसाई रेखाचित्रों को लिखते समय उन सम्पूर्ण कारणों की भी छानबीन करते चलते हैं जिसके कारण पात्र की मनोदशा इस प्रकार की हुई। यह परसाई की अपनी विशेष वैचारिक दृष्टि मानवीय संवेदना सिक्त भावना के कारण ही हो पाता है। अन्य किसी व्यंग्यकार के अन्दर इस प्रकार की क्षमता और कौशल का दर्शन नहीं होता। व्यंग्य विधा के माध्यम से परसाई ने जिन रेखाचित्रों की रचना की है, वे मानवीय चेतना को समझने की दृष्टि से एक-एक विषय का काम करते हैं। यही कारण है कि परसाई गहरी भूमि में उतर कर पात्रों का सही अंकन करते हुए पाठक के अन्दर करुणा पैदा कर सके हैं। परसाई के रेखाचित्र हंसने को नहीं सोचने को बाध्य करते हैं, मुक्तिबोध का संस्मरण लिखते हुए परसाई ने उन तमाम स्थितियों का चित्रण भी किया है जिससे मुक्तिबोध जीवन भर संघर्ष करते रहे। इसके माध्यम से परसाई ने मानवता विरोधियों से लड़ने का संकल्प दुहराया है।

परसाई के रेखाचित्र इसलिए और अधिक महत्वपूर्ण है कि ये समाज की विसंगतियों को उभारते हुए हमारे सामने सच्ची तस्वीर पेश करते हैं।

परसाई ने व्यंग्य लेखन के क्षेत्र में उस ऊँचाई को छुआ है जो निबन्ध लेखन में रामचन्द्र शुक्ल तथा उपन्यास और कहानी में प्रेमचन्द ने। स्वतंत्रता पूर्व भारत को समझने में अगर प्रेमचन्द की कहानियाँ और उपन्यास सहायक है, तो परसाई की व्यंग्य रचनाओं की अंगुली पकड़ कर स्वतंत्रतावाद के भारत को सच्चे रूप में घूमा जा सकता है। परसाई व्यंग्य को गम्भीर लेखन मानते थे, साहित्य का मनुष्य से गहरा लगाव स्वीकार करते थे। यही कारण है कि परसाई की रचनाओं में समाज की विद्रूपता का उद्घाटन दाँत निकालने के लिए नहीं दांत पीसने के लिए होता है। समकालीन अन्य व्यंग्यकार हल्की-फुलकी चुहलबाजी करके

अपने दायित्वों की इतिश्री कर लेते थे, लेकिन परसाई समाज के वे सिपाही हैं जो गली-मुहल्ले, सभा, गोष्ठी-स्कूल-कालेज शादी, विवाह तथा सामाजिक गतिविधियों के हर कार्यक्रम में उपस्थित होकर अपनी संस्कृति की परम्परा का निर्वाह करने के लिए प्रेरित करता है।

परसाई की रचनाएं हमेशा मानवीय सरोकारों से जुड़ी रही है। किसी भी विषय पर लिखते समय परसाई की दृष्टि मानवता को खोजती फिरती थी, जहां भी जैसे भी इसके उद्घाटन का अवसर मिला परसाई ने उसे उसी रूप में उपस्थित कर दिया। परसाई ने यथार्थ की स्थिति का भी कल्पना के द्वारा चित्रण किया है जो कि कल्पित होते हुए भी यथार्थ है। परसाई ने शुरू की रचनाओं में जैसे 'तट की खोज', 'ज्वाला और जल', 'पैसे का खेल' तथा अन्य में मध्यम वर्गीय भावुकता से ग्रस्त थे लेकिन बाद की रचनाओं में परसाई ने व्यंग्य का इतना पैना प्रयोग किया है कि समाज का हर दानव घायल नजर आता है। समकालीन व्यंग्यकारों की यह स्थिति नहीं है। शरद जोशी, श्रीलाल शुक्ल, नरेन्द्र कोहली, रवीन्द्र त्यागी आदि सभी में एक उन्नतशील व्यंग्यकार तो मौजूद है लेकिन वैचारिक प्रतिबद्धता तथा मानवीय संवेदना की उस पृष्ठभूमि का अभाव इन लोगों के अन्दर दिखलायी पड़ता है जिसका परसाई के पास खजाना है। परसाई कबीर की भांति मनुष्यता से गहरे रूप से जुड़े थे। मार्क्स के विचारों से प्रेरित थे। चेखव की संवेदना थी तो मन के अन्दर तुलसी की समन्वय वादिता थी। परसाई बौद्धिक पाखण्ड में जीने वाले प्राणी नहीं थे। यथार्थ की कठोर भूमि पर चलने वाले मध्यम वर्गीय प्राणी थे। सुख-दुःख की पीड़ा को वे बगैर किसी कलात्मकता के साथ कह डालते थे।

स्वतंत्र भारत में परसाई का हिन्दी साहित्य में एक विशेष स्थान रहा है। निबन्ध कहानी, रेखाचित्र तथा कालमों के माध्यम से परसाई ने एक ऐसा गद्य रचना संसार बनाया जो कि स्वातन्त्र्योत्तर भारत में अन्य किसी के पास नहीं है। प्रेमचन्द के बाद ये दूसरे सबसे बड़े

गद्य रचनाकारों में से हैं। शिल्प वैविध्य तथा विषय वैविध्य के कारण भी ये प्रेमचन्द्र की परम्परा में ही सम्मिलित होने योग्य है। व्यंग्य रचनाकारों में यह सदा पहली पंक्ति के पहले व्यक्ति ही गिने जायेंगे। 'शेर जंग गर्ग' एक बातचीत में स्वीकार करते हैं कि अब व्यंग्यकार से पाठकों की अपेक्षाएं बढ़ गई हैं वह अपने आपको फूहड़ विषयों से ही क्यों बाँधे। व्यंग्यकार को अब मनोरंजन के लिए नहीं पढ़ा जाता उसे विचारक एवं चिन्तक की मान्यता दी जाती है। हरिशंकर परसाई को लोग पढ़ते हैं तो इसलिए क्योंकि उससे दिमागी खुराक मिलती है। रवीन्द्रनाथ त्यागी तो बहुत आनन्द देता है।"[१] इसी प्रकार नरेन्द्र कोहली एक बातचीत में स्वीकार करते हैं कि व्यंग्य के क्षेत्र में शुरू में मैं तीन ही नाम महसूस करता था, परसाई, शरद जोशी और रवीन्द्र त्यागी। आगे वे कहते हैं कि हरिशंकर परसाई से मैंने व्यंग्य के संस्कार ग्रहण किये। परसाई व्यवस्था को ही बदलना चाहते हैं तो शरदजोशी विसंगतियों का तो विरोध करते हैं लेकिन प्रजातान्त्रिक व्यवस्था को बदलने का विशेष बल नहीं है और रवीन्द्र नाथ त्यागी साहित्यिक है। तात्पर्य कि परसाई के अन्दर समग्रता को ग्रहण करने की शक्ति है और समग्रता से प्रकट करने की भी। परसाई का साहित्य इसलिए अधिक मूल्यवान है कि इन्होंने साहित्य को व्यक्तिगत होने से बचा लिया। स्वतन्त्रता बाद जब साहित्य की सभी विधाओं में वैयक्तिकता का बोलबाला था तो परसाई अकेले ऐसे साहित्यकार थे जोसाहित्य का सम्बन्ध मानवता से जोड़कर चल रहे थे। आज का साहित्य पूरी तरह से वैयक्तिक हो गया होता अगर परसाई जैसा मानवीय गुणों से युक्त व्यक्ति उस समय उपस्थित न हो गया होता। परसाई ने साहित्य को दिग्भ्रमित होने से बचा लिया। उन व्यंग्यकारों के लिए भी ये मार्गदर्शक बने जिन्होंने व्यंग्य लेखन क्षेत्र में पदार्पण किया। परसाई ने व्यंग्य विधा का मानदण्ड उसी प्रकार निरधारित किया जिस प्रकार आलोचना का रामचन्द्र शुक्ल ने।

---

१. सारिका १९८४-१६ से ३१ मार्च, पृ०-१७

व्यंग्यकारों की एक पीढ़ी परसाई के व्यंग्य लेखन को आदर्श मानकर लेखन कार्य कर रही है। यहपरसाई की रचना के स्वीकार्य का सबसे बड़ा प्रमाण है और यही परसाई के साहित्य का महत्व भी।

सीमाएं – कतिपय विद्वान व्यंग्य को छिद्रान्वेषी विधा कहकर इसकी आलोचना करते हैं इसके उत्तर में परसाई जी कहते हैं कि, "मेरे लेखन में तिरस्कार नहीं, बल्कि आलोचना और जीवन समीक्षा है। अगर मैंने विभिन्न क्षेत्रों में व्याप्त विसंगतियों पर व्यंग्य किया है तो मैंने यह बतलाने की चेष्टा की है कि कहाँ-कहाँ क्या गलत है उसे बदलना चाहिए। तिरस्कार में मनुष्यता को नकारने, मनुष्य में आशा खो देने का भाव होता है यह मेरे लेखन में नहीं है।"[१]

परसाई का व्यंग्य संसार बहुत विस्तृत है। परसाई की व्यंग्य रचनाएं वहाँ धूमिल-सी दिखती है जहाँ पर वे व्यक्ति विशेष पर प्रहार करते हैं। परसाई जैसे समर्थवान व्यंग्यकार के लिए यह अशोभनीय सा लगता है। यही बात उनके मुहावरों और वाक्यों के लिए भी कही जा सकती है जिसका प्रयोग वे कई बार करते हैं। धनंजय वर्मा इस संदर्भ में कहते हैं। "इधर कुछ दिनों से परसाई ने भी कुछ खास वृत्तों में ही चक्कर काटना शुरू कर दिया है। उनके एक साथ चार पाँच व्यंग्य पढ़ लिए जाये तो एक अजीब-सी एकरसता और मैनरिज्म का एहसास होने लगता है।"[२] परसाई के ऊपर धनञ्जय वर्मा का यह कथन राजनीतिक व्यंग्य में अधिक दिखलायी पड़ता है कभी-कभी परसाई व्यंग्य की विद्रूपता को प्रगट करने के लिए ऐसे शब्दों का भी प्रयोग करते हैं जो शिष्ट समाज में अनुचित माना जाता है।

---

१. 'समय चेतना' अक्टूबर १९९५, पृ०-३०

२. कमला प्रसाद- 'आँखन देखी', पृ०-२७५

परसाई का व्यंग्य वहाँ भी असरदार नहीं रह जाता, जहाँ वे समाज सुधारक या उपदेशक की भूमिका में लेखन कार्य करते हैं। इस प्रकार की कमी इनकी प्रारम्भिक रचनाओं में ही अधिक है। लगता है कि परसाई के पास उस समय जहाँ अनुभव की कमी थी वही वे तब तक निश्चित नहीं कर पाये थे कि अपना लेखन वे किस विधा में करें। उपन्यास विधा को छोड़कर जैसे ही परसाई ने व्यंग्य विधा को ग्रहण किया उनकी रचनाओं में प्रौढ़ता के दर्शन होने लगे। इस प्रकार परसाई की यह कमी दूर हो गयी।

बालेन्दु शेखर तिवारी परसाई के व्यंग्य के सन्दर्भ में लिखते हैं कि, "दुर्भाग्यवश परसाई की सभी रचनाएं यथार्थ पर सीधी चोट करने वाली नहीं हैं अपितु कुछ कमजोर रचनाओं में परसाई का कौशल गुदगुदी कर समाप्त होजाता है जैसे विज्ञापन में बिकती नारी', 'नान', 'बारात की वापसी', आदि।"[१] परसाई की यह कमी उनकी अपनी चूक के कारण ही है जहाँ कहीं भी वे प्रायोजित रचनाकार के रूप में उपस्थित हुए हैं वहाँ उनके व्यंग्य की धार अपेक्षाकृत अन्य व्यंग्य रचनाओं के कम हो गयी है। 'कबिरा खड़ा बाजार' कालम लिखते हुए भी परसाई प्रहारक व्यंग्य क्षमता नहीं उत्पन्न कर पाये हैं क्योंकि वे पार्टी प्रेरित होकर लिख रहे थे।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि कुछ सीमाओं को छोड़ दिया जाये तो परसाई के अन्दर समाज को तिलमिला देने वाली व्यंग्य रचना करने की क्षमता मौजूद है और उन्होंने ऐसा किया भी। अपनी व्यंग्य रचनाओं से परसाई ने समाज का एक नव प्रबुद्ध वर्ग तैयार किया जो घटनाओं तथा परिस्थितियों का सटीक और यथार्थ विश्लेषण कर सकने में सक्षम हुआ।

❑

---

१. बालेन्दु शेखर तिवारी 'हिन्दी का स्वातन्त्र्योत्तर हास्य एवं व्यंग्य', पृ० २०३

षष्ठ् अध्याय

उपसंहार
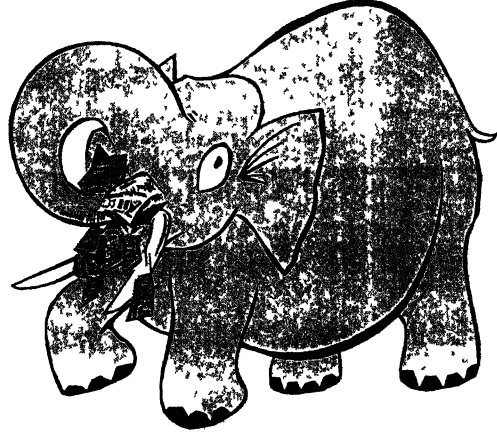
उपसंहार

समकालीन भारतीय समाज का पूरा चित्र परसाई के लेखन में उतर आया है। परसाई के रचना संसार में यथार्थ की पूरी शृंखला उपस्थित है। इन्होंने समाज का नग्न यथार्थ रूप सबके सामने उपस्थित कर दिया हैं।

आजादी के बाद इस देश में विसंगतियों का विस्तार अधिक हुआ है। व्यक्ति, जीवन, समाज, राजनीति, धर्म, शिक्षा, सभी क्षेत्र विसंगति की संक्रामक बीमारी से ग्रस्त हो गये। जिसके लिए परसाई सबसे अधिक अपराधी राजनीति को ठहराते है। वर्तमान समय में कर्तव्य निष्ठ और ईमानदार व्यक्ति को समाज से बहिष्कृत करने का कार्य चल रहा है लेखक इस मनोदशा का पर्दाफाश कर देता है। अपने लेखन में विसंगतियों विकृतियों की अधिक सूक्ष्म तरीके से दिखला कर व्यंग्यकार समाज को प्रशिक्षित करना चाहता है। उसके समझ समाज की ये विसंगतियाँ और विकृतियाँ अधिक मुखर होकर उसकी रचना का आलम्बन बन जाती है और इस तरह व्यंग्य की धारा प्रवाह सर्जना प्रारम्भ होती है।

मध्यम वर्गीय सामाजिक संरचना में जहाँ लेखक पीड़ा मोह से ग्रसित है वहीं उसका गाँव और गाँव वासियों से दूर दूर तक कोई सम्बन्ध नहीं है। परसाई का साहित्य ऐसे में गाँव और नगर जीवन का बिदूपताओं के साथ लिखित दस्तावेज है। परसाई का व्यंग्य सामाजिक करुणा की भूमि पर उत्पन्न होता है। और उनकी आक्रामकता का स्रोत भी यही करुणा है।

परसाई अन्यायी समाज व्यवस्था को खींच-खींच कर सरे आम पीटते हैं और इसके लिए औरों को प्रेरित भी करते है। सामन्त वादी जीवन प्रणाली और प्रजातन्त्र की खोखली

जिन्दगी के बीच विसंगतियाँ अपने आप अधिक पनप गयी है। संक्रान्ति काल में आदमी दोराहे पर खड़ा दुहरी जिन्दगी व्यतीत कर रहा है। एक तरफ शोषित पीड़ित आदमी की व्यथा है। तो दूसरी तरफ वैयक्तिक पाखण्ड और मूल्यहीनता। अपनी वैचारिक दृष्टि के साथ परसाई उसका सामना करने के लिए आदमी को जगाते है। परसाई की वैचारकि दृष्टि अपनी है अपनी इस अर्थ में कि वे किसी समस्या का हल अपने परिवेश में करना चाहते है। वे किसी आयातित दर्शन भाषा से उसका निदान खोजने का प्रयत्न नहीं करते है।

मानवीय-सम्बद्धता के कारण ही परसाई का साहित्य हास्य साहित्य से अलग गम्भीर साहित्य हो सका। तीन दशकों के अन्तर्गत उनके व्यंग्य के कई पड़ाव आये। लेकिन प्रारम्भ से ही वे मानते है। कि "जीवन की सबसे अच्छी व्याख्या कार्लमार्क्स की है। मनुष्य की नियति को बदलने वाला सबसे श्रेष्ठ और अन्तिम दर्शन मार्क्सवाद है।" परसाई एक साक्षात्कार में स्वीकार करते है कि मैं कोरा आदर्शवादी मार्क्सवादी नहीं हूँ जो नारे लिखकर अपने कर्तव्यों की इतिश्री समझ लेते है। परसाई का लेखन किसी 'फ्रेम' में कसा नहीं है। अपने समकालीन व्यंग्य लेखको की भाँति, या फिर कहानीकारों की भाँति। परसाई की रचना-प्रक्रिया की यात्रा संवेदना से, अनुभव से, जीवन से, सामज का दर्शन तक की यात्रा है। इसीकारण उनकी कहाँनियों के पात्र सजीव, स्थितियाँ वास्तविक प्रसंग जलते हुए और घटनाएं होती है। यहाँ भोगे हुए यथार्थ से अधिक यथार्थ के भोग और अनुभवकी प्रमाणिकता की कहाँनियाँ हैं। परसाई की आस्था जिस दर्शन में है वह भी इन्हें बाध्य नहीं कर सका है कि उसी परिप्रेक्ष्य में विषय-वस्तु का चुनाव करें। परसाई प्रगतिशील विचारों के वाहक थे वे नवीन विचारों के भारतीय परिवेश में ग्रहण करने की बात करते थे। उनके विचार से किसी भी व्यक्ति का उत्थान अपनी ही जड़ों से जुड़कर अधिक हो सकता है।

परसाई का लेखन सहज, सरल, सपाट बयानी चलता है जिसके कारण स्वधन्यमान्य

आलोचक उनकी रचनाओं का निम्नकोटि में रखते है। आलोचको के अनुसार इनकी रचनाओं में कलात्मक सौन्दर्य का अभाव है। लेकिन यह नहीं भूलना चाहिए कि सीधी और सहज भाषा के विकसित करने के लिये चिन्तन मनन और विचारों की स्पष्टता होनी जरूरी है। परसाई की रचनाएं रहस्यवादी कलागत ऊचाई को भले ही प्राप्त न हो, लेकिन प्रकृति सौन्दर्य – स्वाभाविकता उनकी कहॉनियों में अवश्य आती है।

वर्ग, उत्पादन–प्रक्रिया से उत्पन्न वह व्यक्ति समूह होता है जिसके हित एक हो। मार्क्सका वर्ग संघर्ष का सिद्धान्त समाज में उत्पादन तथा वितरण की प्रक्रिया पर आधारित दो वर्गो को मानकर चलता है। वर्गों के स्वरूप में भले ही कभी अन्तर आ गया हो। किन्तु समाज में उत्पादन कर्ता, और उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व रखने वाला वर्ग हमेशा रहता है। अर्थात श्रमिक वर्ग और पूँजीवादी वर्ग। पूँजीवादी वर्ग, श्रमिक वर्ग का हमेशा शोषण करता रहा है। श्रमिक वर्ग जीवन–संघर्ष में हाड़तोड़ मेहनत करता है लेकिन अन्ततः गोदान के होरी की भाँति पराजित हो जाता है और पूँजी वादी वर्ग रेणु के मैला आंचल के विश्वनाथ की भाँति अपने छल–प्रपंच से प्रत्येक व्यवस्था को झुठलाते, कानून को अंगूठा दिखलाते अपना वर्चस्व बनाये रखता है। इस प्रकार दो ही वर्ग समाज में बनते है। शोषण और शोषित।

परसाई जी ने अपनी रचनाओं में पूँजीवादी शोषक वर्ग और शोषित वर्ग के बीच के संघर्ष को दिखलाया है परसाई अपनी रचनाओं द्वारा वर्ग चेतना पर विशेष प्रकाश डालते है। इस कारण से उनकी रचनाओं में सामाजिक चेतना के सरोकार अवश्य आ गये है। इनके लेखन में सामाजिक सन्दर्भो की प्रमाणिकता और चिन्तन की विश्वनीयता अवश्य आ जाती है। परसाई की रचनाएं कभी–कभी विचार–प्रवाह में एकरसता ले आती है, लेकिन कभी भी वे रचनाएं उबाऊ नहीं होती है। परसाई शिल्प पर अपना ध्यान केन्द्रित नहीं करते है बल्कि वे विषय वस्तु के कथ्य पर अपना ध्यान अधिक केन्द्रित करते है।

परसाई की रचनाएं उनके बहुआयामी व्यक्तित्व की पहचान है। सामाजिक नवनिर्माण की अपनी विशिष्ट चेतना और रचनात्मक उद्देश्य परकता परसाई की रचनाओं की खासियत है परसाई की रचनाएँ–जातिवादी, धनाढ्य राजनेता और शिक्षित वर्ग के नैतिक एवं, सांस्कृतिक स्खलन को उनके सम्पूर्ण घृणित परिवेश के साथ प्रस्तुत करती है। परसाई सामाजिक बुराइयों और जातिवादी रूढ़ियों के खिलाफ एक लम्बी लड़ाई लड़ते है। जो प्रत्येक स्तर पर होने वाले अन्याय तक पहुँचती है वे नये समाज के निर्माण का सत्–संकल्प लेकर लेखन कर्म को करते हैं सामान्य जन की हित–कामना ही उनकी रचनाओ की समस्या है और मूल लक्ष्य भी। परसाई यथार्थवादी रचनाकार है जीवन की सच्चाइयों को उजागर करने वाले व्यंग्यकार भी व्यंग्य की दृष्टि की परिपक्वता ने परसाई को ऐसी वैज्ञानिक दृष्टि प्रदान की है किसकी परिधि नितान्त वैयक्तिक से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं तक फैली है।

परसाई की रचनाओं में सक्रिय चिन्ताओं और प्रक्रिया की खोज पड़ताल की गयी है। परसाई आलोचकों के लिए एक कठिन चुनौती पेश करते है कि सहज सी दिखने वाली रचनाओं का वैशिष्ट्य कैसे निर्धारित किया जाय। आलोचकों ने अभी तक इस पर कोई ठोस कार्यवाही नहीं किया है शोध प्रबन्ध में इस पर कुछ प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है।

परसाई सरल जीवन के सहज रचनाकार है वे जटिलता को भी सहजता में पिरोकर प्रस्तुत करते है न कि सरल को जटिल बनादेते है। परसाई इस दृष्टि से अद्वितीय है वे छोटी से छोटी घटना का उल्लेख करते हुए बड़ी सी बड़ी समस्या को सामने लाकर उपस्थित कर देते है। परसाई की यह विशेषता उन्हे मनोवैज्ञानिक की कोटि में रखने के लिए बाध्य करती है। दैनिक छोटी घटना अनुभव विस्तार द्वारा अर्थ ग्रहण करके लम्बी बनती जाती है और इस बीच सामाजिक विद्रूपताओं का खुलकर प्रदर्शन भी करता है।

परसाई भारतीय जीवन की परम्परागत जातीय स्मृति का निर्माण करने वाले इतिहास

पुराण और अनेक पात्र अथवा घटनाएं अपने सघन मिथको के पौराणिक आच्छादन के बाहर आते है और अदभुत रचनात्मक सहयोग देकर वे एक महत्वपूर्ण समकालीन अर्थतक व्यंग्य को ले चलते है। व्यंग्यकार की यह विशेषता होती है कि अपनी जमीन से चीजे उठाता है और उसे सर्वथा नया अर्थ देकर वापस लौटा देता है इस प्रकार वह रचनात्मक पुनः सृजन करता है यह अर्थ व्याप्ति की भूमिका नही होती है बल्कि समकालीन अर्थ से आत्मीय रिश्तों की खोज होती हे। परसाई की रचनाओं में परम्परागत पौराणिक सामग्री का उपयोग रचनाशीलता की इसी समकालीन अर्थ व्याप्ति के स्तर पर है। जागृत–विवेक परम्परा के अपने विनयशील आत्मीयता के साथ समकालीन चेतना अपने रिश्ते इसी रूप में कायम कर पाती है।

एक रचनाकार के रूप में परसाई संसार में जो कुछ सुन्दर है उसकी रक्षा करना चाहते है जिसके कारण संसार की असुन्दरता के प्रतिपक्ष में वे खड़े है। वे कहते है मैं असंगति, असमानता के खिलाफ हूँ।" मानव के आगे सबसे चामत्कारिक गुण–जीने की उसकी सहज इच्छा का सम्मान करते है। संवेदना युक्त होने के कारण वे मानवीय क्रूरता के विरोध में खड़े हो सकते है। परसाई समाज की बीमारी को ठीक करना चाहते है जिससे संक्रामक रोग फैलकर मानवताको पूरी तरह से नष्ट न करदे। परसाई अपनी संवेदना युक्त दुनिया में, जड़ हो गये परिवेश पर, मानवीय निराशा पर लूटखसोट और भोग पर, किसान और मजदूर की दुर्दशा पर, छात्रों की अराजकता और दिशाहीनता पर, धार्मिक पाखण्ड और शोषण पर, इन्सानी रिश्तों की समाप्त होती गरिमा पर, गरीबी और भूख पर, अकाल और मौत पर, पूँजीवादी समाज रचना की बुराइयों पर और इससे पैदा सांस्कृतिक वैचारिक जड़ता और दिग्भ्रमित पर निर्मित हुई है। उसका आधार है हमारा सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक जगत जिसमें मनुष्य के कर्म का निषेध हो गया है।

लगातार पराधीनता से भारतीयो में जड़ता की पैठ हो गयी थी वे यथास्थितिवादी हो

गये थे। परसाई आदर्शवादी स्थिति को हटाकर उसकी यथार्थ स्थितिका दिग्दर्शन कराना चाहते थे। परसाई की रचनाएँ इसलिए सक्रिय राजनीति कर्म का फल है। लोगों को उनके आदर्श व्यक्तित्व का सच्चा ज्ञान कराकर परसाई उनके खिलाफ घृणा पैदा करना चाहते थे। इनकी रचना सोचने की दिशा देती है संवेदना का विकास करती है, सम्भ्रमों को तोड़ती है तथा जड़ मस्तिष्क का परिष्कार करती है।

परसाई की रचनाओं में गम्भीर तात्विक विश्लेषण नहीं है किसी दर्शन के प्रति प्रचार-प्रसार नहीं हैं नही शब्दों की साहित्यक कलाबाजी है, परसाई एक सामाजिक रचनाकार है। समाज में जो कुछ घट रहा है उसके गवाह है जो जनता की अदालत में आकर वगैर किसी प्रलोभन और दबाव के सच्ची गवाही पेश करते है। परसाई और व्यंग्य आधुनिक जीवन में एक दूसरे के पर्याय भाव है। परसाई ने हिन्दी गद्य में व्यंग्य को एक विधा रूप में स्थान दिलाया है। अपने प्रतीकों और बिम्बों द्वारा परसाई ने हिन्दी गद्य की विधाओं में नये रूप का प्रयोग किया है। परसाई समाज के भीतर बहने वाली विद्युतधारा की भांति है जो प्रकाश देती हैं प्रकाश देते समय इनकी भाषा सहज सरल और अत्यन्त धारदार होती है, इसमें विभिन्न प्रकार की वस्तुओं स्थितियों, सम्बन्धों और घटनाओं का यथार्थ वर्णन होता है।

अमीर खुसरो से लेकर आधुनिक गद्यकारों के विभिन्न भाषा प्रयोग को परसाई ने यत्र-तत्र अपनी रचनाओं में स्थान दिया है। जैसा कि विदित है कि गद्य का विकास साम्राज्यवादी आन्दोलन के विरोध में शक्तिशाली ज्ञानात्मक अस्त्र के रूप में हुआ था। परसाई जी का गद्य लेखन उसी गद्य परम्परा को आगे बढ़ाया है और उसका कलात्मक विकास करता है। परसाई के निबन्धों में भारतेन्दु युगीन गद्य की व्यंग्यात्मक दृष्टि है वैयक्तिक स्वच्छता और व्यापकता है। तो प्रेमचन्द्र की कथात्मक सहजता और पैनापन भी। भारतेन्दु और प्रेमचन्द्र के बाद एक युग धारा का परसाई ने नेतृत्व किया।

परसाई ने बहुत अधिक कहानियाँ लिखी है। उनकी कहानियों का महत्व इस बात में है कि जहाँ तत्कालीन कहानीकार नयी कहानी के नाम पर कुण्ठा, संत्रास, हिंसा, अजनबीपन और यौनविकृति को परोस रहे थे, तो अकेले परसाई यथार्थवाद के खुरदरी भूमि पर मानवता के शब्दचित्र बना रहे थे। परसाई नई कहानी आन्दोलन के कहानीकारों में बहुत महत्व रखते हैं क्योंकि इन्होंने मनुष्य के मानवीय पक्ष का रचनात्मक उपयोग की दृष्टि से सहयोग लेने का प्रयत्न किया है।

कहानीकार का जब कैनवस बड़ा होने लगता है तो वह कहानी से उपन्यास लिखने की तरफ बढ़ता है। परसाई ने भी उपन्यास लिखे है लेकिन व्यंग्य की मार संक्षिप्तता में अधिक होती है विस्तार में नहीं। परसाई अपने उपन्यासों में वैसा व्यंग्य नही कर पाये है जैसा निबन्धों और कहानियों में। अतः इन्होंने जल्द ही उपन्यास लिखने का का मोह त्याग दिया।

परसाई उपन्यास, कहानी निबन्ध और रेखाचित्र के अतिरिक्त अखबार के कालम भी लिखते थे। जिसमें इन्होंने नागरिक जड़ता और सामाजिक उदासीनता को तोड़ा हैं। परसाई बुद्धजीवियों के ऊपर भी कड़ा प्रहार करते है। जो समाज को गति देने के विपरीत खुद रोग ग्रस्त हो गये है। परसाई की रचनायें पाठकों की चेतना को झकझोरती है वे किसी आलोचक का मोहताज नहीं होती है कि प्रशंसा करके प्रतिस्थापित किया जाय। समकालीन मनुष्य के अन्दर घृणास्पद और हास्यापद को परसाई निकाल फेंकना चाहते है। परसाई को उनकी रचनाओं के माध्यम से पाठक जानता और समझता है। उनके लिए अलग से किसी सेमिनार का आयोजन नहीं किया जाता है।

प्रेमचन्द्र के बाद परसाई अकेले ऐसे गद्यकार है जिनके अनुभव चरित्र और घटनाऐं अनायास प्रतीक और बिम्ब का दर्जा हासिल कर लेती है। और परसाई की रचनाएँ समकालीन इतिहास का अंग बन जाती है। परसाई ने भारतीय समाज को विश्व दृष्टि से देखा और जीवन

दर्शन से समझा। परसाई जी को इस बीच जो कुछ भी बुरा लगा उसका रहस्योद्घाटन वे अपनी रचनाओं में करते है परसाई सामान्य से असामान्य की ओर बढ़ने वाले रचनाकार है वे व्यक्ति के माध्यम से समाज की बात कहते है। साहित्य का उद्देश्य सौन्दर्य की सृष्टि करना होता है इसलिए बहुधा जीवन में जो कुछ सुन्दर, सौम्य और प्रिय है इसी धनीभूत अभिव्यक्ति की ओर कवियों और विचारकों का ध्यान जाता रहा है।

व्यंग्यकार की दृष्टि सुधार की अपेक्षा भ्रष्ट स्थितियों को बदलने में होती है। परसाई कहते है। कि" मैं सुधार के लिए नहीं बदलने के लिए लिखना चाहता हूँ यानी कोशिश करता हूँ कि चेतना में हलचल हो जाय। कोई विसंगति नजर के सामने आ जाय। इतना काफी है आजका समय खोखलेपन और पाखण्ड का समय है। जिसपर व्यंग्यकार की दृष्टि अनायास पड़ जाती है। कबीर से लेकर परसाई तक ने समाज के इसी पाखण्ड पूर्ण जीवन पर करारा प्रहार किया है। खीज घृणा आक्रोश भय, उत्साह, समत्व उदासीनता आदि अनेक भावनाओं तक फैला हुआ है। आज का व्यंग्य विशिष्ट परिस्थितियों, वर्जनाओं और विसंगतियों की उपज है।

व्यंग्य की अनेक परिभाषा दी गई कोई उसे हास्य मिश्रित कहता है तो कोई विद्रूपता पर सीधा प्रहार मानता है लेकिन वर्तमान व्यंग्य असत्य, अनीति, अत्याचार विकृति विसंगति और पाखण्ड का उद्घाटन कर अहिंसक शाब्दिक तीखा प्रहार करता है। यह मृदुल न होकर कटु एवं मर्मस्पशी होता है। व्यंग्य तो प्रहार करता है लेकिन उसकी सहानुभूति मानव से जुड़ी रहती है। व्यंग्य करते समय व्यंग्यकार का मूल उद्देश्य उन स्थितियों का निरीक्षण करना होता है जिसके कारण समाज में विसंगतियों का जन्म हुआ है। आधुनिक व्यंग्य अभिव्यंजना का एक विशिष्ट प्रकार अर्थबोध की अनुपम शक्ति के साथ समाज की प्रगति परक संघर्षशीलता का प्रतीक है।

वे विसंगतियों को नगा कर देते है तथा सत्ता एवं व्यवस्था उससे जुड़े नौकरशाही और राजनीति को भी पेपर्दा करते है। वे कहते है। कि मैने देखा कि जीवन में बेहद विसंगतियों है अन्याय, पाखण्ड, छल दो मुहाँपन, अवसरवाद असामज्यस्य आदि है। मैने उनके विश्लेषण के लिए साहित्य, दर्शन, समाजशास्त्र, राजनीतिशास्त्र आदि का अध्ययन किया। जिसके परिणामस्वरुप मार्क्सवाद को अपनाते हुए भी मेरी एक व्यापक दृष्टि बनी है। "परसाई ने अपनी तमाम रचनाओं में इसी दृष्टिको साकार किया है। परसाई मनुष्य को अपने अधिकारों के लिए लड़ने के लिए उत्तेजित करते है। उन्होंने उन स्थितियों का चित्रण अपनी रचनाओं में किया है जिससे शोषक वर्ग ने जन समाज का शोषण किया है। पूजीवाद के प्रति परसाई जी खुला विद्रोह करते है वे कर्मठ रचनाकार के रूप में अपनी सृजनात्मक यात्रा करते है जहाँ सम सामयिक जीवन व्यवस्था और उससे जुड़ी सामाजिक व्यवस्था की भदेश स्थितियों को परसाई अपने व्यंग्य लेखन के माध्यम से एक संघर्ष धर्मी स्वरूप देते हैं वे सच्चे जन मानस के लिए संघर्ष करते है। और स्वयं भी इसका प्रतिफल भोगते है।

परसाई सामाजिक समस्याओं से प्रेरित होकर रचना करते है जिसके कारण उनकी रचनाओं में सहज आक्रोश होता है वे उस आदमी की जड़ता पर भी फटकर लगाते है जो समझौतावादी होकर जीवन जीना प्रारम्भ कर देता है परसाई कहते है कि सवाल यह है कि लेखक अपने को आम आदमी से जोड़ता है कि नहीं । नही जोड़ता है तो वह बैठकर लिखेगा हम मर गये है हम सूअर है हमारी मरण स्थिति यह है"। इसी परिप्रेक्ष्य में कहा जा सकता है कि परसाई का लेखन आम आदमियों के लिए है यद्यपि परसाई व्यक्ति के लिए रचना नहीं करते है। वे वर्ग केन्द्रित रचना करते है। वर्ग शक्ति की यह शिक्षा गोर्की से पायी है। जिन्दगी परसाई के लिए विश्वविद्यालय है जहाँ वे शिक्षा ग्रहण कर अपने विचारों को फौलादी जामा पहना सके है।

मध्य वर्गीय त्रस्त मानवता परसाई के साहित्य में नवविचार प्राप्त करती है। अधिकार चेतना को जागृत करने में उनका साहित्य में विशिष्ट स्थान है। लम्बे और कर्मठ जीवन में स्वयं भोगे यथार्थ को परसाई ने साहित्य में परोसा है। परसाई यह देखते है कि राजनीति के लोग किसी प्रकार अपने विरोध करने वालों का मुँह चुप करा देते है। इसके पीछे भी उनकी गहरी राजनीति रहती है ऐसे ही राजनीतिज्ञ और राजनीतिक विचारों के परसाई खिलाफ है राजनीति व्यवस्था आदमी की जरूरतो को पूरा करने के लिए अस्तित्व में आयी अब अगर यह आदमी की आवश्यकताओं को पूरा करने के बजाय उनका शोषण करने लगे तो पर्दाफाश होना ही चाहिए। परसाई ने यही कार्य अपने व्यंग्य लेखन द्वारा किया है।

परसाई जी रूढ़ अर्थ में धार्मिक नहीं है वे मानवतावादी धार्मिक व्यक्ति है आपका समाज अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए धार्मिक बना है। परसाई जी इसका विरोध करते हैं वे कहते हैं "धर्म का उपयोग तो अब दंगा कराने के लिए रह गया है" इसी सन्दर्भ में उन्होंने लिखा है "विधाता जब मनुष्य को बनाकर दुनिया में भेजने लगता है तो उसके कान के पास मुँह लगाकर धीरे से कहता हे कि देख दुनिया में सबसे अधिक अकल मैने तुझी को दी है। हर एक से विधाता यही कह देता है इसीलिए हर आदमी जन्म से ही उपदेशक हो जाता है" इसमें परसाई यह कहने को उद्धत है कि व्यक्ति दूसरे के मतो को सुनना ही नही चाहता वह केवल अपनी बात ही सुनाना चाहता है और उसे मनवाना भी चाहता है।

अन्धविश्वास का बोलबाला हमारे समाज में इस तरह है कि उससे निजात पाना मुश्किल है इस सन्दर्भ में परसाई जी धार्मिक बुद्धिजीवियों के ऊपर व्यंग्य करते है "साधो अपरिग्रहो को बुद्धु बनाने के प्रयत्न चालू हो गये है। जगह–जगह यज्ञ हो रहे है। हजारों लाखों रूपये चन्दे में मिलजाते है यहाँ अस्पताल या स्कूल के लिए फूटी कौड़ी गाँठ से नहीं निकलती है। वहाँ यज्ञ के लिए रुपये निकल आते है। इस तरह से यज्ञ हो रहे है कि सारे देश के

वातावरण में धुँआ छाजायेगा और ग्रहों को दिखायी नहीं देगा कि भारत कहाँ है बस वे चीन की ओर चले जायेगें।

परसाई जी सर्वहारा वर्ग से जुड़े रचनाकार हैं वे उन्हीं के लिए संघर्षरत है वे उसके खिलाफ है जो रचनाकार के परिवेश के लिए बाधक हे। परसाई जी इसीलिए उन बुद्धिजीवी साहित्यकारों को भी फटकारते हे जो सर्वहारा वर्ग की उन्नति के रास्ते के काँटे है परसाई के पास मनोविज्ञान की वह सूक्ष्म दृष्टि है जो अपने सशक्त अनुभव द्वारा और अधिक फलीभूत होती है। परसाई की रचनाओं में अगर हास्य का पुट कहीं आ गया है तो वह केवल प्रसंग वश है उसका अलग से उद्घाटन नहीं किया है मूलतः उनकी रचनाओं में शोषकों के प्रति नफरत और शोषितो के प्रति सहानुभूति का ही पुट मिलता है।

समाज की व्यापक विसंगति को आज का व्यंग्य अपना लक्ष्य चुनता है और एक-एक के ऊपर प्रहार करना प्रारम्भ कर देता है। व्यंग्य प्रहार के साथ अपने पक्ष में और लोगों को करने का कार्य भी करता है। व्यंग्य लोगों को मानवीय गुणों का पाठ पढ़ाता है और अपने साथ सभी को सत्य के मार्ग पर चलने का आग्रह करता है।

भारतीय राजनीति की दिशा जब समाजवादी क्रान्ति की ओर बढ़ने लगी तो कुछ लोग उसे रोकने का कार्य करने लगे। परसाई ऐसे लोगों के भी खिलाफ है जो समाजवादी की दिशा को मोड़ देते हैं परसाई की दृष्टि में सामाजिक क्रान्ति के साथ सांस्कृतिक क्रान्ति होनी आवश्यक है 'चूहा और मैं' में परसाई ने आदमी को चूहे से भी बदतर बताकर यह आक्षेप डाला है कि चूहा जैसा प्राणी अपने अधिकारों के लिए लड़ता है लेकिन आदमी चेतनाशील हो कर भी अपने अधिकार के लिए लड़ नही सकता है। वह घुटन भरी जिन्दगी तो जीता है लेकिन अपने लिए लड़ नही सकता है परसाई की यही दृष्टि नारी के सन्दर्भ में भी है वह नारी को आश्रित बनाकर नहीं जिलाना चाहते है। वे उसे अपने पैरों पर भावनामुक्त होकर

जीने के लिए प्रेरित करते है। परसाई ने अपनी कहानी 'गहरा घाव' में दहेज के कारण भाभी द्वारा उत्पीड़ित एक ऐसी युवती का रेखाचित्र खींचा है। जो घर में बहू की भाँति नहीं नौकरानी की भाँति जीवन जीती है परसाई 'तटकी खोज' मे इसी प्रकार नारी को स्वतन्त्र जीवन जीने की कला सिखलाते है।

भारतेन्दु समय के सारे सर्जक व्यंग्य के माध्यम से भरपूर प्रहार करते है। नई कविता तो व्यंग्य कविता ही बन गई। निराला व्यंग्य की ओर विशेष रूप से प्रवृत्त हुए, बाद में यही निराला प्रगतिशील कविता की ओर अग्रसर हो गये। नागार्जुन, त्रिलोचन और रामविलास शर्मा प्रगतिशील चेतना से सम्पन्न कवि थे। प्रगतिवाद और प्रयोगवाद के बीच कहानी उपन्यास, निबन्ध सभी ने आधुनिकता का पल्ला पकड़ लिया। १९६० के आस-पास सामाजिक राजनैतिक परिस्थितियाँ तथा अस्तित्व वादी दर्शन ने इसे और पुष्ट किया। पुराने मूल्यों, आदर्शो और आस्थाओं के विघटन के कारण जिन्दगी में अजनबीपन और अलगाव आ गया जिसका अर्थ था आदमी की जिन्दगी का कोई अर्थ नहीं। इसी समय साहित्य को मानवीय सरोकारों से जोड़ते हुए परसाई ने लेखन कार्य आरम्भ किया। व्यंग्य साहित्य में हरिशंकर परसाई श्रीलाल शुक्ल, रवीन्द्र त्यागी, शरद जोशी, वालेन्दुशेखर तिवारी, डॉ. वरसाने लाल चतुर्वेदी, के.पी. सक्सेना, मनोहर श्याम जोशी आदि प्रमुख है। हरिशंकर परसाई के बाद हिन्दी व्यंग्य के क्षेत्र में वर्तमान जीवन की सड़ान्ध विद्रूपता, विसंगति जीवन के प्रति आस्था इनके प्रधान विषय हैं निराला की तरह परसाई ने भी जीवन में घोर संघर्ष किये है। उनकी दृष्टि विसंगतियों को दूर करने की है। उनकी मान्यता हे कि "व्यंग्य जीवन से साक्षात्कार करता है जीवन की आलोचना करता है। विसंगतियों मिथ्याचारों और पाखण्डों का पर्दाफाश करता है।" परसाई सामाजिक यथार्थ के लेखक है वे समाज के हर अंग पर चोट करते है जो विकृत हो गया है। परसाई मध्यम वर्गीय समाज की बुराईयों को दूर करने के लिए कबीर की भाँति लुकाटा

लेकर आगे–आगे चलते है लोगों को अपने पीछे आने के लिए प्रेरित भी करते है।

परसाई के नेतृत्व में व्यंग्य शैशव से युवावस्था में पहुँचा। शूद्र से ब्राह्मण का दर्जा प्राप्त किया। परसाई व्यंग्य क्षेत्र में एकमात्र ऐसे व्यंग्यकार है जो पूरी तरह प्रतिबद्ध है। परसाई की व्यंग्य रचनाओं का अध्ययन गम्भीरता पूर्वक समकालीन मानवीय कष्टें का अध्ययन होगा। जो कुछ है उससे बेहतर चाहिए, समाज को साफ करने के लिए एक मेहतर चाहिए की मान्यता के साथ परसाई ने एक कुशल सर्जक की भूमिका निभाई है।

००

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

अंग्रेजी-ग्रन्थ

१. मेरी डिथ - आइडिया आफ कॉमेडी - १९५६ करनैल यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क

२. गिलबर्ट हिघेट-द एनाटामी सटायर-न्यूजर्सी १९६२

३. जेम्स सदर लैण्ड-द इग्लिंश सटायर-यूनिवर्सिटी प्रेस कैम्ब्रिज

४. नारमन फलांग-इग्लिंश सटायर - जार्ज जी. हारुप १९४६

५. आर. के लक्ष्मण-द वेस्ट आफ लक्ष्मण - पेंगइन प्रकाशन-२०००

६. जान.एम. बुलेट - जोनाथन स्विफ्ट एण्ड दि एनाटामी-

७. हुमायूँ कबीर-इन्डियेन हैरिटेज सटायर - एशिया पब्लिशिंग हाउस बम्बई-१९६०

८. बी.वी. मिश्र-दि इन्डियन मिडिलक्लास - आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस १९६१

संस्कृत ग्रन्थ

१. अभिनव गुप्त पाद- ध्वन्यालोक (हिन्दी) व्याख्याकार आचार्य जगग्नाथ पाठक-
चौखम्बा प्रकाशन बनारस-प्रथम सं.-१९८४

२. कुन्तक-वक्रोक्ति जीवितम् - निर्णय सागर प्रेस बम्बई-१९३५

३. भरतमुनि - नाटय शास्त्रम् - चौखम्बा, बनारस-१९२९

४. भवभूति - उत्तररामचरितम् - निर्णय सागर प्रकाशन-१९३०

५. मम्मट - काव्य प्रकाश - भन्डारकर इन्स्टीटयूट पुणे-१९३३

आधार-ग्रन्थ

१. अजातशत्रु - आधी वैतरणी सत्साहित्य प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, १९८५

२. अमृतराय - बतरस, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद-प्रथम, १९७३

३. अमृतराय - मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, ज्ञान भारती, दिल्ली-प्रथम, १९७७

४. अमृतलाल नागर - कृपया दाएँ चलिए, राजपाल, दिल्ली-प्रथम, १९७६

५. अमृतलाल नागर - चकल्लस, राजपाल, दिल्ली-प्रथम, १९८६

६. अमृत नाहटा - किस्सा कुर्सी का, राजपाल, दिल्ली-द्वितीय, १९७७

७. अशोक शुक्ल - प्रोफेसर पुराण, विवेक प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, १९७६

८. इंद्रनाथ मदान - बहानेबाजी, लिपि प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, १९७८

९. उषावाला - कफनचोर का बेटा, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, १९७६

१०. कन्हैयालाल कपूर - हास्य बत्तीसी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, १९६६

११. कन्हैयालाल नंदन - श्रेष्ठ व्यंग्य कथाएँ, पराग प्रकाशन, दिल्ली-द्वितीय, १९७६

१२. काका हाथरसी - काका की फुलझड़ियाँ, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली-१९८८

१३. काका हाथरसी एवं गिरिराजशरण अग्रवाल - श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य एकांकी, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, १९७९

१४. काका हाथरसी एवं गिरिराजशरण अग्रवाल - श्रेष्ठ हास्य व्यंग्य कहानियाँ, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, १९७८

१५. काका हाथरसी एवं गिरिराजशरण अग्रवाल - श्रेष्ठ हास्य व्यंग्य निबन्ध, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, १९७९

१६. के.पी. सक्सेना - कोई पत्थर से, आलेख प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, १९७९

१७. के. पी. सक्सेना - मूँछ मूँछ की बात, साहित्य रत्नालय, कानपुर-प्रथम, १९७९

१८. के. पी. सक्सेना - रहिमन की रेलयात्रा, राष्ट्रीय प्रकाशन मंदिर, भोपाल-प्रथम, १९८२

१९. के.पी. सक्सेना - नये गिरिगिट, विवेक प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, १९७५

२०. केशवचन्द्र वर्मा - अफलातूनों का शहर, भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली-प्रथम, १९७४

२१. केशवचन्द्र वर्मा - आधुनिक हास्य-व्यंग्य, भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली-प्रथम, १९६१

२२. गुलाबराय - कुछ उथले कुछ गहरे, शिवलाल अग्रवाल, आगरा-प्रथम, १९५७

२३. गुलाबराय - ठलुआ क्लब, साहित्य रत्न भंडार, आगरा-१९६३

२४. गोपाल प्रसाद व्यास - अली सुनो, राजहंस प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, १९४७

२५. **गोपाल प्रसाद व्यास** - हलो-हलो, नेशनल पब्लिसिंग हाउस, दिल्ली-प्रथम, १९६९

२६. **ज्ञान चतुर्वेदी** - प्रेत कथा, समांतर प्रकाशन, भोपाल-प्रथम, १९६८

२७. **नरेन्द्र कोहली** - आधुनिक लड़की की पीड़ा, नेशनल, नई दिल्ली-प्रथम, १९७८

२८. **नरेन्द्र कोहली** - आश्रितों का विद्रोह, नेशनल, नई दिल्ली-प्रथम, १९७३

२९. **नरेन्द्र कोहली** - एक और लाल तिकोन, नेशनल पब्लिसिंग हाउस, नई दिल्ली-प्रथम, १९७०

३०. **नरेन्द्र कोहली** - जगाने का अपराध, नेशनल पब्लिसिंग हाउस, नई दिल्ली-प्रथम, १९७३

३१. **नरेन्द्र कोहली** - त्रासदियाँ, राजपाल, दिल्ली-प्रथम, १९८२

३२. **नरेन्द्र कोहली** - पाँच एब्सर्ड उपन्यास, नेशनल, नई दिल्ली-प्रथम, १९७२

३३. **नरेन्द्र कोहली** - मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, ज्ञान भारती, दिल्ली-प्रथम, १९७७

३४. **नरेन्द्र कोहली** - शम्बूक की हत्या, कल्पतरू, दिल्ली-प्रथम, १९७५

३५. **प्रभाकर माचवे** - खरगोश के सींग, नीलाभ प्रकाशन, इलहाबाद, द्वितीय, १९६०

३६. **प्रभाकर माचवे** - तेल की पकौड़ियाँ, ज्ञानोदय, इलाहाबाद-प्रथम, १९६२

३७. **प्रेम जनमेजय** - बेशर्ममेव जयते, पराग प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, १९८२

३८. **प्रेम जनमेजय** - राजधानी में गँवार, पराग प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, १९७८

३९. **फणीश्वरनाथ रेणु** - उत्तर नेहरू चरितम्, राजकमल, नई दिल्ली-प्रथम, १९८८

४०. **बदीउज्जमा** - एक चूहे की मौत, राजकमल, नई दिल्ली-प्रथम, १९७१

४१. **बरसानेलाल चतुर्वेदी** - चौबेजी की डायरी, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, १९९०

४२. **बरसानेलाल चतुर्वेदी** - टालू मिक्स्चर, साहित्य सहकार, दिल्ली-प्रथम, १९७८

४३. **बरसानेलाल चतुर्वेदी** - नेताओं की नुमाइश, किताब घर, दिल्ली-प्रथम, १९८३

४४. **बरसानेलाल चतुर्वेदी** - भोला पंडित की बैठक, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली-प्रथम, १९७५

४५. **बरसानेलाल चतुर्वेदी** - मंत्री जी के निजी सचिव की डायरी, साहित्य सहकार, दिल्ली-प्रथम, १९८०

४६. **बरसानेलाल चतुर्वेदी** - मि. चोखेलाल, सरस्वती बिहार, दिल्ली-प्रथम, १९८०

४७. **बरसानेलाल चतुर्वेदी** - मूँछ पुराण, श्री हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली-प्रथम, १९७९

४८. **बरसानेलाल चतुर्वेदी** - मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, ज्ञान भारती, दिल्ली-प्रथम, १९७७

४९. **बरसानेलाल चतुर्वेदी** - साली वी. आई. पी. की, किताब घर दिल्ली-प्रथम, १९८९

५०. **बरसानेलाल चतुर्वेदी** - सिफारिश पुराण, श्री हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली-प्रथम, १९८३

५१. **बालेन्दुशेखर तिवारी** - इक्कीसवीं सदी में व्यंग्यकार, श्याम प्रकाशन, जयपुर-प्रथम, १९८९

५२. **बालेन्दुशेखर तिवारी** - किराएदार साक्षात्कार, श्री हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली-प्रथम, १९८५

५३. **बालेन्दुशेखर तिवारी** - क्रिकेट कीर्तन पंचशील प्रकाशन, जयपुर-प्रथम, १९८८

५४. **बालेन्दुशेखर तिवारी** - बानगी, किशोर विद्या निकेतन, वाराणसी-प्रथम, १९८०

५५. **बालेन्दुशेखर तिवारी** - बिना यात्रा की यात्रा, पारिजात प्रकाशन, पटना-प्रथम, १९८५

५६. **बालेन्दुशेखर तिवारी** - मेरी प्रिय व्यंग्य रचनाएँ, राज पब्लिसिंग, दिल्ली-प्रथम, १९८८

५७. **बालेन्दुशेखर तिवारी** - रिसर्च गाथा, अन्नपूर्णा प्रकाशन, कानपुर-प्रथम, १९७९

५८. **बालेन्दुशेखर तिवारी** - व्यंग्य ही व्यंग्य, सत्साहित्य प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम १९८७

५९. **यशवंत कोठारी** - यश का शिकंजा, सत्साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली-प्रथम, १९८३

६०. **रवीन्द्रनाथ त्यागी** - अतिथि कक्ष, राजपाल एण्ड संस, दिल्ली-प्रथम,१९७७

६१. **रवीन्द्रनाथ त्यागी** - आत्मलेख, नेशनल पब्लिकशिंग हाउस, दिल्ली-प्रथम, १९८८

६२. **रवीन्द्रनाथ त्यागी** - उर्दू-हिन्दी हास्य-व्यंग्य, पराग प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, १९७८

६३. **रवीन्द्रनाथ त्यागी** - कृष्णवाहन की कथा, नेशनल, नई दिल्ली, प्रथम, १९७१

६४. **रवीन्द्रनाथ त्यागी** - खुली धूप में नाव पर, लोकभारती, इलाहाबाद-प्रथम, १९६३

६५. **रवीन्द्रनाथ त्यागी** - देवदार के पेड़, नेशनल, नई दिल्ली-प्रथम, १९७३

६६. **रवीन्द्रनाथ त्यागी** - फूलों वाले कैक्टस, पराग प्रकांशन, नई दिल्ली-प्रथम, १९७८

६७. **रवीन्द्रनाथ त्यागी** - भित्ति-चित्र, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, १९६६

६८. **रवीन्द्रनाथ त्यागी** - भल्लिनाथ की परम्परा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद-प्रथम, १९६९

६९. **रवीन्द्रनाथ त्यागी** - मेरी व्यंग्य कथाएँ, पराग प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, १९७६

७०. **रवीन्द्रनाथ त्यागी** - मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, ज्ञानभारती, दिल्ली-प्रथम, १९७७

७१. **रवीन्द्रनाथ त्यागी** – शोकसभा, नेशनल, नई दिल्ली–प्रथम, १९७४

७२. **रवीन्द्रनाथ त्यागी** – सुन्दर कली, सम्भावना प्रकाशन, हापुड़–प्रथम, १९७८

७३. **रामनारायण उपाध्याय** – नाक का सवाल, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली–प्रथम, १९८३

७४. **रामनारायण उपाध्याय** – बख्शीशनामा, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली–प्रथम, १९८०

७५. **रामनारायण उपाध्याय** – मुस्कुराती फाइलें, प्रतिभा प्रतिष्ठान दिल्ली–प्रथम, १९८७

७६. **लतीफ घोंघी** – किस्सा दाढ़ी का, इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली–प्रथम, १९८०

७७. **लतीफ घोंघी** – जूते का दर्द, श्री हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली–प्रथम, १९८३

७८. **लतीफ घोघी** – तीसरे बन्दर की कथा, इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली–प्रथम, १९७७

७९. **लतीफ घोंघी** – बबलूमियाँ कब्रिस्तान में, इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली–प्रथम, १९७९

८०. **लतीफ घोंघी** – बीमार न होने का दुःख, सौरभ प्रकाशन, दिल्ली–प्रथम, १९७०

८१. **लतीफ घोंघी** – बुद्धिजीवी की चप्पलें, पंचशील प्रकाशन, जयपुर–प्रथम, १९८५

८२. **लतीफ घोंघी** – बुद्धिमानों से बचिए, पंचशील प्रकाशन, जयपुर–प्रथम, १९८८

८३. **लतीफ घोंघी** – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, ज्ञानभारती, दिल्ली–प्रथम, १९७९

८४. **लतीफ घोंघी** – लॉटरी का टिकट, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम, १९८६

८५. **लतीफ घोंघी** – संकटलाल जिन्दाबाद, इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली–प्रथम, १९७८

७६. **लतीफ घोंघी** – सोने का अंडा, इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली–प्रथम, १९७८

७७. **लक्ष्मीकान्त वैष्णव** – नाटक नहीं, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली–प्रथम, १९८३

७८. **लक्ष्मीकान्त वैष्णव** – मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, ज्ञानभारती दिल्ली–प्रथम, १९८२

७९. **शंकर पुणत्ताम्बेकर** – अंगूर खट्टे नहीं हैं, पंचशील प्रकाशन, दिल्ली–प्रथम, १९८५

८०. **शंकर पुणताम्बेकर** – एक मंत्री स्वर्गलोक में, साहित्य रत्नालय, कानपुर–प्रथम, १९७९

८१. **शंकर पुणताम्बेकर** – कैक्टस के काँटे, पंचशील प्रकाशन, जयपुर–प्रथम, १९७९

८२. **शंकर पुणताम्बेकर** – प्रेम विवाह, पंचशील प्रकाशन, जयपुर–प्रथम, १९८१

८३. **शंकर पुणताम्बेकर** – बदनामचा, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, प्रथम,१९८८

८४. **शंकर पुणताम्बेकर** – विजिट यमराज की, पंचशील प्रकाशन, जयपुर–प्रथम १९८३

८५. **शरद जोशी** - किसी बहाने, नेशनल, नई दिल्ली-प्रथम १९७१

८६. **शरद जोशी** - जीप पर सवार इल्लियाँ, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली-प्रथम, १९७१

८७. **शरद जोशी** - तिलस्म, राजपाल एण्ड संस, दिल्ली-प्रथम, १९७३

८८. **शरद जोशी** - दूसरी सतह, अनादि प्रकाशन, इलाहाबाद-द्वितीय, १९७८

८९. **शरद जोशी** - दो व्यंग्य नाटक, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-द्वितीय १९८२

९०. **शरद जोशी** - पिछले दिनों, राजपाल एण्ड संस, दिल्ली-प्रथम, १९७९

९१. **शरद जोशी** - मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, ज्ञानभारती प्रकाशन नई दिल्ली-प्रथम १९८०

९२. **शरद जोशी** - यथासम्भव, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली-प्रथम, १९८५

९३. **शरद जोशी** - रहा किनारे बैठ, नेशनल, नई दिल्ली-प्रथम, १९७२

९४. **श्याम गोइन्का** - गंजत्व दर्शन, अभिव्यंजना प्रकाशन, नई दिल्ली- प्रथम, १९८९

९६. **श्याम गोइन्का** - नसबंदगी, विवेक प्रकाशन, दिल्ली- प्रथम, १९७९

९८. **श्यामसुन्दर घोष** - एक उलूक कथा, ग्रंथ अकादमी, दिल्ली-प्रथम, १९७२

९९. **श्यामसुन्दर घोष** - तिकड़म बनाम तिकड़म, हिन्दी साहित्य संसार, नई दिल्ली-प्रथम, १९७४

१००. **श्रीलाल शुक्ल** - अंगद का पाँव, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-प्रथम, १९८०

१०१. **श्रीलाल शुक्ल** - मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, ज्ञानभारती, दिल्ली-प्रथम, १९७७

१०२. **श्रीलाल शुक्ल** - यह घर मेरा नहीं, सम्भावना प्रकाशन, हापुड़-प्रथम, १९७९

१०३. **श्रीलाल शुक्ल** - यहाँ से वहाँ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-द्वितीय, १९७५

१०४. **श्री लाल शुक्ल** - रागदरबारी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-सप्तम १९८२

१०५. **सर्वेश्वरदयाल सक्सेना** - काठ की घण्टियाँ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-प्रथम, १९७०

१०६. **सर्वेश्वरदयाल सक्सेना** - गर्म हवाएँ राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली-प्रथम, १९६९

१०७. **सर्वेश्वरदयाल सक्सेना** - बकरी, लिपि प्रकाशन, नई दिल्ली-प्रथम, १९७४

१०८. **सुदर्शन मजीठिया** - छींटे, लिपि प्रकाशन, नई दिल्ली-प्रथम, १९७४

१०९. **सुदर्शन मजीठिया** - टेलीफोन की घण्टी से, पंचशील प्रकाशन, जयपुर-प्रथम, १९८३

११०. सुदर्शन मजीठिया - मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, ज्ञानभारती, दिल्ली-प्रथम, १९८०

१११. सूर्यबाला - अजगर करे न चाकरी, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, १९८९

११२. हरिशंकर परसाई - अपनी-अपनी बीमारी वाणी प्रकाशन दिल्ली-२०००

११३. हरिशंकर परसाई - कबिरा खड़ा बाजार में, वाणी प्रकाशन-पंचम, २००१

११४. हरिशंकर परसाई - कहत कबीर, ज्ञानभारती, दिल्ली-प्रथम, १९८८

११५. हरिशंकर परसाई - जैसे उनके दिन फिरे, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली-प्रथम, १९६७

११६. हरिशंकर परसाई - ठिठुरता हुआ गणतंत्र, नेशनल, नई दिल्ली-प्रथम, १९७०

११७. हरिशंकर परसाई - तब की बात और थी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-प्रथम, १९५६

११८. हरिशंकर परसाई - तिरछी रेखाएँ, वाणी प्रकाशन दिल्ली-२००१

११९. हरिशंकर परसाई - निठल्ले की डायरी, अक्षर प्रकाशन, नई दिल्ली-प्रथम, १९६८

१२०. हरिशंकर परसाई - पगडंडियों का जमाना, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली-प्रथम, १९७६

१२१. हरिशंकर परसाई - पाखण्ड का अध्यात्म, पराग प्रकाशन, दिल्ली-१९८२

१२२. हरिशंकर परसाई - मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ, ज्ञानभारती, दिल्ली-चतुर्थ, १९८७

१२३. हरिशंकर परसाई - रानी नागफनी की कहानी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-प्रथम, १९६१

१२४. हरिशंकर परसाई - वैष्णव की फिसलन, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-१९७८

१२५. हरिशंकर परसाई - शिकायत मुझे भी है, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-१९७०

१२६. हरिशंकर परसाई - सदाचार का तावीज, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी-प्रथम, १९६७

१२७. हरिशंकर परसाई - हँसते हैं, रोते हैं, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-प्रथम, १९५६

१२८. मधुसूदन पाटिल - अथ व्यंगयम, सस्ता साहित्य भण्डार, नई दिल्ली-प्रथम, १९८१

१२९. मधुसूदन पाटिल - हम सब एक है, सस्ता साहित्य भण्डार, नई दिल्ली-प्रथम, १९८७

१३०. मनोहर श्याम जोशी - इस देश का यारों क्या कहना, प्रभात प्रकाश दिल्ली-२०००

१३१. यशवंत कोठारी - हिन्दी की आखिरी किताब, श्याम प्रकाशन, जयपुर-प्रथम, १९८१

१३२. श्यामसुन्दर घोष - रोशन हाथों की दस्तकें, प्रज्ञा प्रकाशन, गोड्डा-प्रथम

१३३. **श्रवणकुमार गोस्वामी** - जंगलतंत्रम्, राजकमल प्रकाशन, नई-दिल्ली-प्रथम

१३४. **सुदर्शन मजीठिया** - पब्लिक सेक्टर का साँड़, शान्ति प्रकाशन, आसन, प्रथम, १९८९

१३५. **सुदर्शन मजीठिया** - मुख्यमंत्री का डण्डा, हिन्दी साहित्य भण्डार, लखनऊ-प्रथम, १९७४

१३६. **सन्तोष खरे** - धूप का चश्मा, प्रारूप प्रकाशन, इलाहाबाद-प्रथम, १९९८

१३७. **संसारचन्द्र** - सटक सीताराम, हिन्दी साहित्य संसार, नई दिल्ली-प्रथम, १९७६

१३८. **हरिशंकर परसाई** - बेईमानी की परत, यूनिवर्सल बुक डिपो, जबलपुर-१९६५

१३९. **हरिशंकर शर्मा** - शंकर सर्वस्व, गया प्रसाद एण्ड संस आगरा-प्रथम, १९५१

आलोचनात्मक ग्रन्थ

१. **आचार्य रामचन्द्र शुक्ल** - चिंता मणि भाग १-इन्डियन प्रेस पब्लिकेशन प्रयाग

२. **आचार्य राम चन्द्र शुक्ल** - रसमीमांसा नागरी प्रचारिणी सभा काशी - तृतीय सं. २०१७

३. **डॉ. इन्द्रनाथ मदान** - हिन्दी की हास्य व्यंग्य विधा का स्वरूप और विकास हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग

४. **डॉ. कमल किशोर** - रवीन्द्र नाथ त्यागी प्रतिनिधि रचनाएं-प्रथम-१९८७ पराग प्रकाशन दिल्ली।

५. **सं. कमला प्रसाद**- ऑखनदेखी - वाणी प्रकाशन दिल्ली-द्वितीय संस्करण २०००

६. **नगेन्द्र** - रास सिद्धान्त नेशनल पब्लिकेशन्स-नई दिल्ली-प्रथम १९६४

७. **नामवर सिंह** - कविता के नये प्रतिमान - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली प्रथम १९६८

८. **डॉ. निशा अग्रवाल** - भारतीय काव्य शास्त्र, लोक भारती, इलाहाबाद, प्रथम १९९६

९. **डॉ. निशा अग्रवाल** - सृजन शीलता और सौन्दर्य बोध-हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग-१९८५

१०. **डॉ. निशा अग्रवाल** - बाँकमालो के दर्शन -विभा प्रकाशन, इलाहाबाद- प्रथम २०००

११. **पुष्पपाल सिंह** - हिन्दी साहित्य-आठवाँ-दशक-सूर्य प्रकाशन-प्रथम १९८४

१२. **डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी** - हिन्दी का स्वातन्त्रयोत्तर हास्य और व्यंग्य-अन्नपूर्णा प्रकाशन-प्रथम १९७८

१३. **बालेन्दु शेखर तिवारी** - हिन्दी व्यंग्य के प्रतिमान-गिरनार प्रकाशन, मेहजाना प्रथम १९८८

१४. **बालेन्दु शेखर तिवारी** - व्यंग्य ही व्यंग्य-सत्साहित्य प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, १९८७

१५. **डॉ. वैरिस्टर सिंह यादव** - हिन्दी लोक साहित्य में हास्य और व्यंग्य-राष्ट्रीय साहित्य सदन-लखनऊ-१९७८

१६. **डॉ. मनोहर लाल देवलिया** - हरिशंकर परसाई की दुनिया-साहित्य वाणी, इलाहाबाद - प्रथम १९८५

१७. **डॉ. मनोहर लाल देवलिया** - हरिशंकर परसाई-व्यक्तित्व एवं कृतित्व - साहित्यवाणी प्रथम, १९८६

१८. **डॉ. मलय** - व्यंग्य का सौन्दर्य शास्त्र -साहित्यवाणी इलाहाबाद-प्रथम, १९८३

१९. **डॉ. राम विलास शर्मा** - निराला की साहित्य साधना-भाग-२-राजकमल प्रकाशन दिल्ली-१९७२

२०. **प्रा. रा. वा. पाटिल** - एकव्यंग्यात्रा - आलोक सांस्कृतिक अकादमी जलगाँव-प्रथम-१९८६

२१. **रामस्वरूप चतुर्वेदी** - हिन्दी नवलेखन - भारतीय ज्ञानपीठ-१९६०

२२. **डॉ. वीरेन्द्र मेहदीरत्ता** - आधुनिक हिन्दी साहित्य में व्यंग्य-रिसर्च पब्लिकेशन्स - दिल्ली-प्रथम, १९७६

२३. **श्याम सुन्दरघोष** - व्यंग्य क्या ? व्यंग्य क्यों ?-सत्साहित्य प्रकाशन-प्रथम १९८३

२४. **कमलेश्वर** - नयी कहानी की भूमिका, अक्षर प्रकाशन-दिल्ली-प्रथम, १९६९

२५. **प्रेमनारायण टण्डन** - हिन्दी साहित्य में हास्य-व्यंग्य, हिन्दी साहित्य भंडार लखनऊ-प्रथम, १९६१

२६. **डॉ. वा. रा. देसाई** - स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी व्यंग्य निबन्ध एवं निबन्धकार, चिन्तन प्रकाशन कानपुर-प्रथम, १९८७

२७. **महावीर प्रसाद द्विवेदी** - हिन्दी साहित्य में हास्य और व्यंग्य, हिन्दी साहित्य भंडार-

लखनऊ-प्रथम, १९६७

२८. **शेरजंग गर्ग** - व्यंग्य के मूल भूत प्रश्न, सामाजिक प्रकाशन दिल्ली-प्रथम, १९७९

२९. **सं. कमला प्रसाद** - परसाई रचनावली, छः-भाग, राजकमल, दिल्ली-प्रथम, १९८५

३०. **शेरजंग गर्ग** - स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी कविता में व्यंग्य, सामाजिक प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, १९७२

३१. **डॉ. बरसाने लाल चतुर्वेदी** - आधुनिक हिन्दी काव्य में व्यंग्य -दिल्ली १९७३

३२. **डॉ. हरिशंकर दुबे** - स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी गद्य में व्यंग्य, विकास प्रकाशन, कानपुर, प्रथम, १९९७

३३. **सुरेशकान्त** - नरेन्द्र कोहली-विचार और व्यंग्य, वाणी प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम, २००२

३४. **स्मिता चिपणूलकर** - हिन्दी के प्रमुख व्यंग्यकार, अलका प्रकाशन कानपुर-प्रथम, २००१

३५. **चन्द्र प्रकाश** - रागदरबारी कृति से साक्षात्कार, संजय प्रकाशन, दिल्ली-प्रथम २००१

३६. **डॉ. मदालसा व्यास** - हिन्दी व्यंग्य साहित्य और हरिशंकर परसाई, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी-प्रथम, १९९९

३७. **राधेमोहन शर्मा** - हरिशंकर परसाई की वैचारिक पृष्ठभूमि, राधाकृष्ण प्रकाशन २००२

३८. **विश्वनाथ त्रिपाठी** - देश के इस दौर में, सम्भावना प्रकाशन इला. संधोधित संस्करण-राजकमल प्रकाशन से-२०००

३९. **सुरेश माहेश्वरी** - स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी व्यंग्य का मूल्यांकन, विकास प्रकाशन कानपुर-प्रथम, १९९४

४०. **संसार चन्द्र** - हिन्दी हास्य-व्यंग्य निबन्ध- रुपयात्रा किताब महल इलाहाबाद १९८१

४१. **रमेश कुन्तल मेघ** - आथातो सौन्दर्य जिज्ञासा- वाणी प्रकाशन २०००

४२. **रमेश कुन्तल मेघ** - क्योंकि समय एक शब्द है - लोक भारती, इलाहाबाद-१९७५

पत्र-पत्रिकाएं

- आजकल-दिल्ली
- आलोचना- दिल्ली
- ज्योत्सना-पटना
- धर्म-युग- बम्बई
- नई-कहानियां-इलाहाबाद
- नई-दुनिया-इन्दौर
- नवभारत टाइम्स-बम्बई
- प्रकर-दिल्ली
- रंग-बम्बई
- रंग-चक्ल्लस-बम्बई
- वीणा- इन्दौर
- व्यंग्यकार-रायपुर
- व्यंगयम्-जबलपुर
- व्यंग्यविविधा- हिसार
- व्यंग्यशती-रायपुर
- समीक्षा-पटना
- समय-चेतना-दिल्ली
- साप्ताहिक-हिन्दुस्तान-दिल्ली
- हरिगंधा-चण्डीगढ़
- हास्यम्- बम्बई
- हिन्दी एक्सप्रेस- बम्बई

अभिनन्दन-ग्रन्थ

- व्यास-अभिनन्दन-ग्रन्थ
- स्मारिक - (१९८२)-२-३ अक्टूबर प्रगति शील लेखक संघ का आयोजन
- डा. बरसाने लाल अभिनन्दन, डॉ. प्रकाश चतुर्वेदी

शब्द कोश

- नालन्दा विशाल शब्दसागर
- लघु हिन्दी शब्द सागर
- वृहत अंग्रेजी हिन्दी कोश-भाग एक हरदेव बाहरी
- आक्सफोर्ड इग्लिश डिक्शनरी
- इनसाइक्लोपीडिया ऑफ ब्रिटानिका

□□